MPAMI-502

स्वरवाद्य–रागों और तालों का अध्ययन I

एम0पी0ए0 संगीत – प्रथम सेमेस्टर

संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग
मानविकी विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

स्वरवाद्य–रागों और तालों का अध्ययन I

एम0पी0ए0 संगीत – प्रथम सेमेस्टर

संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग

मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
तीनपानी बाईपास रोड, ट्रान्सपोर्ट नगर के पीछे,
हल्द्वानी, जिला नैनीताल, पिनकोड–263139
फोन नं0 : 05946–286000 / 01 / 02
फैक्स नं0 : 05946–264232,
टोल फ्री नं0 : 18001804025
ई–मेल : **info@uou.ac.in**
वेबसाईट : **www.uou.ac.in**

अध्ययन मण्डल

कुलपति (अध्यक्ष)
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रो0 एच0 पी0 शुक्ल (संयोजक)
निदेशक–मानविकी विद्याशाखा,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 विजय कृष्ण (सदस्य)
पूर्व विभागाध्यक्ष, संगीत
डी0एस0बी0 कैम्पस, नैनीताल
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

डॉ0 आशा पाण्डे कृष्ण(सदस्य)
विभागाध्यक्षा, संगीत विभाग,
एच0एन0बी0 गढ़वाल विश्वविद्यालय,
विभाग,श्रीनगर

डॉ0 मल्लिका बैनर्जी(सदस्य)
संगीत विभाग,
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त.)
विश्वविद्यालय, दिल्ली

द्विजेश उपाध्याय(सदस्य)
अकादमिक परामर्शदाता
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम संयोजन, प्रूफ रिडिंग एवं फार्मेटिंग

द्विजेश उपाध्याय
अकादमिक परामर्शदाता,
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

अशोक चन्द्र टम्टा
अकादमिक परामर्शदाता,
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

जगमोहन परगांई
अकादमिक परामर्शदाता,
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम संपादन

डॉ0 विजय कृष्ण
पूर्व विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 चन्द्रशेखर तिवारी
वरिष्ठ संगीतज्ञ,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 रेखा साह
पूर्व विभागाध्यक्षा, संगीत विभाग,
डी0एस0बी0 कैम्पस, नैनीताल
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

द्विजेश उपाध्याय
अकादमिक परामर्शदाता, संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल

इकाई लेखन

1.	**डॉ0 महेश पाण्डे**	इकाई 1, 2, 3 व 5
2.	**डॉ0 रेखा साह**	इकाई 4
3.	**श्री सतीश श्रीवास्तव**	इकाई 6, 7
4.	**डॉ0 विजय कृष्ण**	इकाई 8

कापीराइट : @उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
संस्करण : सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशन वर्ष : जुलाई 2013, पुनर्प्रकाशन–जुलाई 2019, जुलाई 2020
प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल–263139
ई–मेल : books@uou.ac.in

इस सामग्री के किसी भी अंश को उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी की लिखित अनुमति के बिना किसी भ्रूप में अथवा मिमियोग्राफी, चकमुद्रण द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इकाई	इकाई का नाम	पृष्ठ
इकाई 1	स्वरलिपि पद्धतियों का अध्ययन एवं तुलना।	1–13
इकाई 2	भारतीय स्वरवाद्यों (तत् व सुषिर) की उत्पत्ति एवं विकास।	14–29
इकाई 3	तन्त्र वाद्य के घराने।	30–49
इकाई 4	पाठ्यक्रम के रागों का पूर्ण वर्णन, तुलना एवं स्वर समूह द्वारा राग पहचानना।	50–57
इकाई 5	संगीतज्ञों (एन0 राजम, उ0 हाफिज अली खॉ, उ0 बिस्मिल्लाह खॉ, पं0 वी0जी0 जोग, अन्नपूर्णा देवी) का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान।	58–73
इकाई 6	मसीतखानी गत का परिचय; पाठ्यक्रम के रागों में मसीतखानी गत, स्थाई व अन्तरे के तोडों को लिपिबद्ध करना।	74–89
इकाई 7	रजाखानी गत का परिचय, पाठ्यक्रम के रागों में रजाखानी गत, स्थाई व अन्तरे के तोडों को लिपिबद्ध करना।	90–106
इकाई 8	पाठ्यक्रम की तालों के ठेकों को लयकारी (दुगुन, तिगुन, चौगुन व आड) सहित लिपिबद्ध करना।	107–115

इकाई 1 – स्वरलिपि पद्धतियों का अध्ययन एवं तुलना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 स्वरलिपि पद्धति का ज्ञान एवं महत्व
1.4 भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति
1.4.1 स्वर चिन्ह
1.4.2 सप्तक चिन्ह
1.4.3 स्वर मान
1.4.4 स्वर सौन्दर्य के चिन्ह
1.5 पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर स्वरलिपि पद्धति
1.5.1 स्वर चिन्ह
1.5.2 सप्तक चिन्ह
1.5.3 स्वर मान
1.5.4 स्वर सौन्दर्य के चिन्ह
1.6 स्वरलिपि पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन
1.6.1 प्राचीनकाल एवं आधुनिक स्वरलिपि पद्धतियों की तुलना
1.6.2 भातखण्डे एवं पलुस्कर स्वरलिपि पद्धतियों की तुलना
1.7 आकार मात्रिक एवं पाश्चात्य स्वरलिपि का संक्षिप्त अध्ययन
1.7.1 आकार मात्रिक स्वरलिपि पद्धति
1.7.2 पाश्चात्य स्वरलिपि पद्धति
1.8 सारांश
1.9 शब्दावली
1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर, (एम0पी0ए0एम0आई0–502) पाठ्यक्रम की पहली इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि संगीत के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की स्वरलिपि पद्धतियों का चलन आज संगीत शिक्षा में होता है।

प्रस्तुत इकाई में स्वरलिपि पद्धतियों का वर्णन प्रस्तुत है। वर्तमान समय में संगीत के तीव्र गति से हुए प्रचार–प्रसार का महत्वपूर्ण कारण स्वरलिपि पद्धति के आधार पर संगीत शिक्षण है। आप जो भी गाते बजाते हैं, उसे लिखित रूप में स्वरलिपि पद्धति द्वारा सुरक्षित रख सकते हैं। मध्यकाल तक जब स्वरलिपि पद्धति का अविष्कार नहीं हुआ था, तब गुरू–शिष्य परम्परा द्वारा संगीत सीखने में बहुत कठिनाईयाँ आती थी। परन्तु 100 वर्ष पूर्व संगीतज्ञ पं0 विष्णु नारायण भातखंडे एवं पं0 विष्णु दिगम्बर पलुष्कर के द्वारा स्वरलिपि पद्धति का जन्म हुआ। इस इकाई में स्वरलिपि पद्धति के विषय में सविस्तार वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप स्वरलिपि पद्धति के महत्व को समझा सकेंगे तथा वर्तमान शिक्षण प्रणाली इसके द्वारा जिस प्रकार सुविधाजनक हो गई है वह भी जान सकेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप विभिन्न रागों के स्वरूप एवं गीत रचनाओं को स्वरलिपि बद्ध कर लिखित रूप में उसका ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात :–

- आप बता सकेंगे कि संगीत में स्वरलिपि पद्धति का प्रयोग क्यों किया जाता है?
- आप समझा सकेंगे कि स्वरलिपि पद्धति द्वारा संगीत में रागों, बंदिशों, स्वर सौन्दर्य को लिखित रूप में सर्वसुलभ बनाया जा सकता है।
- आप रागों में बद्ध रचनाओं को सुनकर स्वयं स्वरलिपि बद्ध करने में समर्थ हो सकेंगे, जिससे नवीन रचनाओं को समझा सकेंगे।
- छात्रों में गायन–वादन हेतु अभूतपूर्व क्षमता उत्पन्न होगी।
- स्वरलिपि के द्वारा संस्थागत संगीत शिक्षा की सुव्यवस्था के साथ–साथ व्यक्तिगत संगीत शिक्षण में भी विशेष लाभ प्राप्त होगा।

1.3 स्वरलिपि पद्धति का ज्ञान एवं महत्व

भारतीय संगीत के क्षेत्र में स्वरलिपि पद्धति के जन्म से नई क्रान्ति का सूत्रपात हुआ। आधुनिक काल में संगीत का जिस प्रकार प्रचार–प्रसार हो रहा है उसका एक मात्र कारण है– स्वरलिपि मूलक संगीत शिक्षा की व्यवस्था। प्राचीनकाल से मध्यकाल तक मुख्य रूप से गुरू शिष्य परम्परा द्वारा गुरू के सम्मुख शिक्षा दी जाती थी। उस समय स्वरलिपि पद्धति के चलन में न होने से शिक्षण पद्धति में सभी कुछ कंठस्थ करना होता था। उस समय मौलिक रूप में संगीत शिक्षण दिया जाता था। मध्यकाल के पश्चात आधुनिक काल के पूर्वाध में प्रसिद्ध संगीतज्ञ पं0 विष्णु नारायण भातखंडे एव पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर के प्रयासों के द्वारा स्वरलिपि पद्धति का जन्म हुआ, जिससे संगीत शिक्षण अत्यन्त सुविधाजनक हो गया। मध्यकाल में संगीत में जो अंतत मतभिन्नताएं उत्पन्न हुई थी उनके कारण संगीत के स्वरूप में कुछ बिखराव सा हो गया था और इसका प्रमुख कारण था, किसी भी चीज का लिखित रूप में प्रचलन में न होना। सम्भव है कि प्राचीन काल में स्वरलिपि का प्रयोग केवल प्रबन्धों की रचना या ध्रुपदों की रचना करने तथा उन्हें समझने हेतु किया जाता होगा,

परन्तु प्रत्यक्ष शिक्षा देते समय बंदिश की स्वरलिपि शिष्यों के सन्मुख नहीं आती होगी। गुरू अपने शिष्यों को सिखाते समय भी स्वरलिपि का आधार नहीं देते थे। गुरू की रचना तीन–चार पीढ़ियों के पश्चात केवल कंठगत रूप में ही विद्यमान रहती थी। बंदिश की स्वरलिपि रचनाकार के पास होती थी या कालान्तर में नष्ट हो जाती थी। ऐसी स्थिति में बंदिश की प्रामाणिकता का कोई लिखित आधार उपलब्ध नहीं होता था। एक ही गुरू के अनेक शिष्य एक ही बंदिश को भिन्न–भिन्न तरीके से गाते हुए मिलते थे। कालान्तर से ये शिष्य –'हमारे घराने में उक्त बंदिश इसी प्रकार से गायी जाती है या हमारे गुरू ने हमें इसी प्रकार से सिखाया है' इस प्रकार से भी कहते रहे होंगे।

स्वरलिपि के आधार पर संगीत की शिक्षा अधिक वैज्ञानिक हो गयी है। वर्तमान समय में जो संगीत का प्रचार–प्रसार तीव्र गति से हुआ है उसका एक महत्वपूर्ण कारण स्वरलिपि मूलक संगीत शिक्षण का चलन भी है। स्वरलिपि का स्थान संगीत शिक्षण में महत्वपूर्ण है। स्वरलिपि पद्धति के जन्म से पूर्व विद्यार्थी एवं शिष्य गुरू से प्राप्त ज्ञान को कंठस्थ कर लय ताल के साथ गेय पदों का गायन करता था, परन्तु इसमें बहुत अधिक समय लगता था क्योंकि जब तक शिष्य को गुरू द्वारा लिया गया पाठ कंठस्थ नहीं होता था तब तक उसे सीखते रहना पड़ता था। इतना होते हुए भी संगीत सीखने के पश्चात भी शिष्य को रागों के विषय में पूर्ण ज्ञान नहीं हो पाता था। गायन–वादन का प्रदर्शन करने हेतु यह उचित है, परन्तु इससे रागों का शास्त्रीय ज्ञान उतना नहीं हो पाता था जितना वर्तमान में स्वरलिपि पद्धति के कारण सम्भव हो सका है।

आधुनिक काल में स्वरलिपि पद्धति के कारण संगीत शिक्षण अत्यन्त सुविधाजनक एवं सर्वसुलभ हो गया है। विद्यालयी संगीत शिक्षा में स्वरलिपि पद्धति द्वारा बहुत कम समय में संगीत शिक्षक एक ही साथ बहुत अधिक विद्यार्थियों को भली–भांति संगीत शिक्षा दे सकते हैं। संगीत शिक्षक विद्यार्थियों को प्रयोगात्मक रूप से राग एवं अन्य रचनाओं को सिखाने से पूर्व इनके गीतों की स्वरलिपि लिखवा देते हैं तथा इसके उपरान्त गेय रचना की पक्तियों को स्वरलिपि के अनुसार गाकर समझाते हैं जिसका अनुकरण सभी छात्र करते हैं। इस पद्धति से सरलतापूर्वक विद्यार्थी लगन से अपने पाठ को सीखते है। स्वरलिपि पद्धति के द्वारा गीत के विभिन्न अंग स्थायी, अन्तरा आदि के प्रत्येक अव्यव में स्वरों का प्रयोग होता है तथा स्वरों में विश्रान्ति के स्थानों को भी विद्यार्थी भली–भांति समझ लेते हैं। मात्र प्रयोगात्मक दृष्टि से अगर स्वरलिपि का आश्रय न लेते हुए संगीत शिक्षण किया जाता है तब उसमें अधिक समय की आवश्यकता होती ही है, साथ में इस विषमता से गायन व वादन में वैज्ञानिकता का भी ह्रास होने लगता है।

पुराने समय में गुरू–शिष्य परम्परा में केवल गा–बजा कर ही संगीत शिक्षण होता आया है। परन्तु वर्तमान समय में यह सम्भव नहीं है। आजकल घरानेदार संगीत शिक्षण में भी स्वरलिपि पद्धति का पूर्ण रूप से प्रयोग होने लगा है क्योंकि आज गुरू एवं शिष्य दोनों के पास ही संगीत शिक्षण हेतु अधिक समय नहीं रहता तथा शिष्य को गुरू के सम्मुख सीखने के पश्चात अभ्यास हेतु यह अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि वह अपने सबक को लिपिबद्ध करके निरन्तर उसका गायन, वादन कर सके। विद्यालयों में स्वरलिपि पद्धति के अभाव में संगीत शिक्षण असम्भव है। क्योंकि यहाँ एक ही कक्षा में बहुत विद्यार्थी होते हैं जिन्हें अलग–अलग प्रयोगात्मक रूप से सिखाने के लिए बहुत अधिक समय की आवश्यकता होती है। समय के अभाव में कक्षा के प्रत्येक विद्यार्थी को अपनी बंदिश कंठस्थ करवाना आज के शिक्षकों को सम्भव नहीं है, क्योंकि निर्धारित अवधि में निर्धारित पाठ्यक्रम भी पूरा करना होता है। अतः बंदिश की स्वरलिपि समझाकर और उसका आधार देकर विद्यार्थियों से कम समय में अधिक और सही बंदिशें सिखायी जा सकती हैं। विद्यार्थियों को जो भी सिखाना है, उसका आधार उन्हें समझाने से वे अल्पावधि में अधिक शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

स्वरलिपि का आधुनिक शिक्षा में अत्यधिक उपयोग यह भी है कि जो विद्यार्थी थोड़ी बहुत संगीत शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं वे भी अन्य कई पुस्तकों में लिखित बंदिशों को गा–बजा सकने में कुछ अंश में सफल होते हैं।

1.4 भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति

हिन्दुस्तानी संगीत में भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति उत्तम मानी जाती है। इसे लिखना एवं पढ़ना विष्णु दिगम्बर पलुष्कर पद्धति की अपेक्षा सरल एवं सुगम है। दक्षिण भारत में पलुष्कर पद्धति का चलन है परन्तु उत्तर भारत में मुख्य रूप से भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति का प्रयोग होता है।

1.4.1 स्वर चिन्हः–

(i) शुद्ध स्वरों के लिए इस पद्धति में कोई चिन्ह नहीं होता है। जैसे – रे ग म प स्वर, चिन्ह रहित हैं अर्थात यह शुद्ध हैं।

(ii) कोमल स्वरों के लिए स्वर के नीचे आड़ी रेखा खींच दी जाती है। जैसे – रे ग ध, यह स्वर कोमल कहलाते हैं।

(iii) तीव्र स्वर जो मात्र 'म' स्वर ही होता है इसको दर्शाने के लिए 'म' स्वर के ऊपर एक खड़ी रेखा खींच दी जाती है। जैसे– मं

1.4.2 सप्तक चिन्हः–

(i) सप्तक को दर्शाने के लिए भी निम्न चिन्ह होते हैं। मध्य सप्तक के स्वरों में कोई चिन्ह नहीं होता है। जैसे– रे ग म । यह स्वर चिन्ह रहित होने से मध्य सप्तक के स्वर कहलाएंगे।

(ii) मन्द्र सप्तक के स्वरों को दर्शाने के लिए इन स्वरों के नीचे एक बिन्दु लगा दिया जाता है। जैसे – नी़ ध़ प़ । यह स्वर मन्द्र सप्तक के हैं।

(iii) तार सप्तक के स्वरों के लिए स्वरों के ऊपर एक बिन्दु लगा देते हैं। जैसे– गं मं पं। इन स्वरों को तार सप्तक के स्वर कहेंगे।

1.4.3 स्वर मानः–स्वर मान के लिए निम्न चिन्हों से उन्हें दर्शाया जाता है।

1 मात्रा के लिए कोई चिन्ह नहीं होता है, जैसे	सा
1½ मात्रा को दर्शाने के लिए –	सा–रे
2 मात्रा को दर्शाने के लिए–	सा– रे–
½ मात्रा को दर्शाने के लिए–	रे ग म प
⅓ मात्रा को दर्शाने के लिए–	रे ग म
$_{1/6}$ मात्रा को दर्शाने के लिए–	रेगमपधप

1.4.4 स्वर सौन्दर्य के चिन्हः–

(i) स्वर सौन्दर्य को दर्शाने के लिए स्वर में निम्न प्रकार चिन्ह लगाए जाते हैं। मींड को दर्शाने के लिए स्वरों के ऊपर अर्द्धचन्द्राकार चिन्ह लगाते हैं। जैसे– **प ग**

(ii) कण स्वर को दर्शाने के लिए मुख्य स्वर के ऊपर कण स्वर को सूक्ष्म रूप में लिख देते हैं, जैसे **ग्प**

(iii) खटका को दर्शाने के लिए स्वर को कोष्ठक में लिखते हैं, जैसे–**(प)** खटका का अर्थ यह है कि मुख्य स्वर के आगे व पीछे के स्वर को लिया जाता है, जैसे– (प) को दर्शाया है तब उसको इस प्रकार लेंगे –**(ध प म प)**

(iv) गीत उच्चारण के लिए निम्न चिन्ह प्रयुक्त किए जाते है, जैसे–**श या ऽ ऽ म**

स्वरलिपि पद्धतियों का विशेष महत्व है परन्तु भारतीय शास्त्रीय संगीत की पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए या किसी भी रचना को पूर्ण रूप से लिपिबद्ध करना किसी भी स्वरलिपि पद्धति के लिए असंभव है।

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. स्वरलिपि पद्धति का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
2. भातखंडे स्वरलिपि पद्धति में स्वर चिन्हों को बताइये।

ख) एक शब्द में उत्तर दीजिएः–

1. कोमल स्वरों में कौन सा चिन्ह प्रयोग होता है?
2. तार सप्तक के स्वरों के ऊपर कौन सा चिन्ह लगाते हैं?
3. मींड़ दर्शाने के लिए किस प्रकार का चिन्ह लगाते हैं?

ग) सत्य/असत्य बताइयेः–

1. तीव्र मध्यम में स्वर के नीचे रेखा लगती है।
2. मध्य सप्तक के लिए स्वरों में कोई चिन्ह नहीं लगता है।
3. मन्द्र सप्तक में स्वरों के ऊपर बिन्दु लगाते हैं।

1.5 पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर स्वरलिपि पद्धति

उत्तर भारत में भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति का ही चलन है। परन्तु दक्षिण भारत में पूर्ण रूप से पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर स्वरलिपि पद्धति का प्रयोग बहुतायत में होता है। पलुस्कर पद्धति भातखण्डे पद्धति से थोड़ी भिन्न तथा उसकी अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक प्रतीत होती है। पलुस्कर पद्धति में मात्राओं का लेखन सूक्ष्मता के साथ होता है। उन्होंने पाश्चात्य पद्धति से मिलते जुलते कई पृथक चिन्हों का प्रयोग किया है।

1.5.1 स्वर चिन्हः–

1. शुद्ध स्वरों के लिए इस पद्धति में कोई चिन्ह नहीं होता है। जैसे– रे ग म प स्वर चिन्ह रहित हैं अर्थात यह शुद्ध हैं।
2. कोमल स्वरों के लिए स्वर के नीचे हलन्त लगाया जाता है। जैसे– रे् ग् ध्, यह स्वर कोमल कहलाते हैं।
3. तीव्र स्वर जो मात्र 'म' स्वर ही होता है इसको दर्शाने के लिए 'म' स्वर के नीचे हलन्त खींच दिया जाता है। जैसे– म्र

1.5.2 सप्तक चिन्हः–

1. सप्तक को दर्शाने के लिए भी निम्न चिन्ह होते हैं। मध्य सप्तक के स्वरों में कोई चिन्ह नहीं होता है। जैसे– रे ग म । यह स्वर चिन्ह रहित होने से मध्य सप्तक के स्वर कहलाएंगे।
2. मन्द्र सप्तक के स्वरों को दर्शाने के लिए स्वरों के ऊपर एक बिन्दु लगा दिया जाता है। जैसे– निं धं पं । यह स्वर मन्द्र सप्तक के हैं।
3. तार सप्तक के स्वरों के लिए स्वरों के ऊपर एक रेखा लगा देते हैं। जैसे–गं मं पं , इन स्वरों को तार सप्तक के स्वर कहेंगे।

1.5.3. स्वर मान :– स्वर मान के लिए निम्न चिन्हों से उन्हें दर्शाया जाता है।

1 मात्रा के लिए पड़ी रेखा से रेखांकित किया जाता है, जैसे –सा

1½ मात्रा को दर्शाने के लिए, सा रे

2 मात्रा को दर्शाने के लिए, सा रे

½ मात्रा को दर्शाने के लिए, रे ग म प

⅓ मात्रा को दर्शाने के लिए, रे ग म

$_{1/6}$ मात्रा को दर्शाने के लिए, रे ग म

1.5.4 स्वर सौन्दर्य के चिन्हः–

(i) स्वर सौन्दर्य को दर्शाने के लिए स्वर में निम्न प्रकार चिन्ह लगाए जाते हैं। मींड को दर्शाने के

(ii) लिए स्वरों के उपर अर्द्धचन्द्राकार चिन्ह लगाते हैं, जैसे–**प ग**

(iii) कण स्वर को दर्शाने के लिए मुख्य स्वर के ऊपर कण स्वर को सूक्ष्म रूप में लिख देते हैं, जैसे **मप**

(iv) खटका को दर्शाने के लिए स्वर को कोष्ठक में लिखते हैं, जैसे–**(प)** खटका का अर्थ यह है कि मुख्य स्वर के आगे व पीछे के स्वर को लिया जाता है, जैसे– (प) को दर्शाया है तब उसको इस प्रकार लेगे **(ध प म प)**

(v) गीत उच्चारण के लिए निम्न चिन्ह प्रयुक्त किए जाते है, जैसे–**श या —— म**

आधुनिक संगीत शिक्षा में स्वरलिपि का स्थान विशेष महत्वपूर्ण है। पुरानी बंदिशों की शिक्षा देने हेतु संग्रहित बंदिशों का आधार लिया जाता है। अलग–अलग घरानों में या विद्यालयों में संगीत सीखकर शिक्षक के पद पर कार्य करने वाले अध्यापकों को अपने शिष्यों को शिक्षा देने में सुलभता हो सके इस कारण पाठ्यक्रम की पुस्तकों में स्वरलिपि सहित राग की बंदिशें दी जाती हैं। इसका एक कारण यह भी है कि राग की निश्चित बंदिश सभी विद्यार्थियों को निश्चित तरीके से सिखायी जा सकें।

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. विष्णु दिगम्बर स्वरलिपि पद्धति का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
2. विष्णु दिगम्बर स्वरलिपि पद्धति में स्वर चिन्हों को बताइये।

ख) एक शब्द में उत्तर दोः–

1. कोमल स्वरों में कौन सा चिन्ह प्रयोग होता है?
2. तार सप्तक के स्वरों के ऊपर कौन सा चिन्ह लगाते हैं?
3. मींड़ दर्शाने के लिए किस प्रकार का चिन्ह लगाते हैं?

1.6 स्वरलिपि पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन

संगीत के गेय या वाद्य रूप को स्वर, तालबद्ध एवं शास्त्रीय परम्परागत रूप में सुरक्षित और गुरू–शिष्य परम्परा को चिरस्थायी अक्षुण्ण बनाये रखने की एक सुबोध परम्परा है नोटेशन पद्धति। यह स्वरलिपिबद्ध गायन और वाद्य की परम्परा यूरोपीय संगीत पद्धति में भी प्राप्य है। भारतीय संगीत में उपलब्ध इन स्वरलिपि पद्धतियों को शायद यूरोपीय नोटेशन सिस्टम से ही अधिक प्रेरणा मिली है। जो भी हो, भारतवर्ष में मूलतः दो शैलियाँ प्रचलित है– उत्तर भारतीय और कर्नाटकी। उत्तर भारत में प्रधानतः भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति तथा दक्षिण में विष्णु दिगम्बर पलुस्कर स्वरलिपि पद्धति का चलन है।

1.6.1 प्राचीनकाल एवं आधुनिक स्वरलिपि पद्धतियों की तुलना–हिन्दुस्तानी संगीत स्वरलिपि की पद्धति कोई नई वस्तु नहीं है। वैदिक वाड़गमय में मंत्र पढ़ने में आवाज़ की उच्चता–नीचता अर्थात् उदात्त अनुदात्त के चिन्ह लिखे ही नहीं जाते थे वरन् हस्त संकेत में भी होते थे। षड्ज, ऋषभ, गाँधार, मध्यम, इत्यादि सप्तस्वरों के नाम छोटे करके उनको सा, रे, ग, म इत्यादि कहना भी एक स्वर संकेत(स्वरलिपि) की ही प्रणाली है। जब से षड्ज, ऋषभ, इत्यादि संज्ञायें प्रचार में आई तभी से संगीत ग्रन्थों में उनको छोटा करके सा, रे इत्यादि छोटे नामों से पुकारने लगे। उनके शुद्ध विकृत भेदों के लिये कोई चिन्ह ग्रन्थों में नहीं होते थे। इसका कारण यह है कि स्वर 'रागों' में या 'जातियों' में आते हैं। प्रत्येक 'जाति' के स्वरों की शुद्ध–विकृत अवस्थायें जाति के ग्राम–मूर्छना अथवा राग के 'मेलों' से निश्चित होती थी, अतएव उनको और विशेष चिन्हों की आवश्यकता नहीं थी। इसका उदाहरण इस प्रकार समझिये कि 'बागेश्री' 'काफी' मेल से उत्पन्न हुआ है इतना कहने से ही उसमें गंधार, निषाद, कोमल एवं बाकी सब स्वर शुद्ध निश्चित मान लिये जाते थे। गंधार, निषाद को उनकी कोमल अवस्था दिखलाने के लिये विशेष चिन्ह नहीं थे। इसलिए पुराने ग्रन्थों में विकृत स्वरों के लिये चिन्ह नहीं हैं।

संगीत रत्नाकर में मन्द्र तथा तार सप्तक के स्वरों के लिये चिन्ह है, मन्द्र स्वरों के ऊपर बिन्दी होती है एवं तार स्वरों के ऊपर एक खड़ी लकीर होती है। गीत के शब्द के अन्तिम स्वर के ठहराव के लिये उसके आगे पूज्य दिया जाता है। एक मात्रा के अवकाश में आने वाले अनेक स्वर एक साथ छोटे अक्षरों में लिखे जाते हैं। रत्नाकर के स्वराध्याय में सातवे जाति प्रकरण में 'पंचमी' नाम की जाति का गीत ऐसे लिखा गया है:–

पा धनि नी नी मा नी मा पा	1	गा गा सा सा मां मां पां पां	2
ह र ० मू ० र्ध जा ० न		नं म हे ० श म म र	
पां पां धां नीं नीं नीं गा सा	3	पा मा धा नी निध पा पा पा	4
प ति बा ० हु स्तं ० भ		न म नं ० तं ० ० ०	
पा पा री री री री री री	5	मां निंग सा सध नी नी नी नी	6
प्र ण मा ० मि पु रू षा		मु ख० प झ० ० ल ० क्ष्मी	
सा सा सा मा पा पा पा पा	7	धा मा धा नी पा पा पा पा	8
ह र मं ० बि का ० प		ति म जे ० यं ० ० ०	

इस उदाहरण से स्पष्ट है कि गीत के शब्द नीचे और स्वर ऊपर लिखे हुये हैं। पूरे एक मात्रा अवकाश के स्वर दीर्घ लिखे गये हैं जैसे सा, री, गा, मा इत्यादि। आधे मात्रा अथवा उससे भी कम अवकाश के स्वर ह्रस्व लिखे जाते हैं जैसे धनि, निध, साध इत्यादि। मन्द्र स्वर ऊपर बिन्दी देकर लिखे गये हैं और तार स्वर ऊपर खड़ी लकीर देकर लिखे हुये हैं।

स्वरलिपि साधन है, साध्य नहीं। सीढ़ी है मंजिल नहीं अतएव वह सीढ़ी सरल होनी चाहिये। स्वरलिपि क्लिष्ट होने से संगीत पढ़ने में कठिनाई होती है। हिन्दुस्तानी संगीत की स्वरलिपि अति सरल है। वैदिक 'उदात्त', 'अनुदात्त' संकेत एवं रत्नाकर की स्वरलिपि के आधार पर वह साधी हुई है। उसका विचार आगे किया जाता है।

किसी भी गीत को अथवा वाद्य प्रबन्ध को स्वर ताल चिन्हों के सहित लिखने की रीति को स्वरलिपि कहते हैं। पुराने ग्रन्थों की भाँति हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति में भी स्वर छोटे नामों से पुकारे तथा लिखे जाते हैं जैसे सा, रे, ग, म, प, ध, नि।

हिन्दुस्तानी संगीत का शुद्ध मेल 'बिलावल' माना गया है क्योंकि संगीत सीखने वालों को पहले इसी ठाठ के स्वरों की तालीम दी जाती है। बिलावल(शुद्ध मेल) के सब स्वर शुद्ध मेल के स्वर हैं इसीलिये शुद्ध स्वर कहलाते हैं।

शुद्ध स्वरों के लिये हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति के स्वरलिपि में कोई चिन्ह नहीं होता। वह इस प्रकार लिखे गये हैं। सा, रे, ग, म, प, ध, नी। बांकी पाँच स्वर अर्थात् रे कोमल, ग कोमल, तीव्र म, कोमल ध, कोमल नी, विकृत स्वर कहलाते हैं। विकृत के मानी बदले हुये, यानि वह अपने शुद्ध स्थान से हटे हुए होते हैं। विकृत स्वरों के लिए चिन्ह होता है। कोमल विकृत का चिन्ह स्वर के नीचे आड़ी लकीर देने से होता है जैसे रे– कोमल रे; ग– कोमल ग; ध– कोमल ध; नि–कोमल नी। तीव्र विकृत केवल एक स्वर मध्यम है। उसका चिन्ह ऊपर खड़ी लकीर देने से होता हैं जैसे 'म'– तीव्र म।

यही दो स्वर चिन्ह वैदिक स्वर संकेत में आते हैं। अनुदात्त यानी वो स्वर जो नीचे के स्वरों में कहे जाते हैं उनके नीचे आड़ी लकीर दी जाती है। ऋग्वेद में स्वरित यानी ऊँचे स्वरों में कहने वाले अक्षरों के ऊपर खड़ी लकीर दी जाती है।

हिन्दुस्तानी संगीत में स्वरों के लिखने के लिये वैदिक चिन्ह तीव्र कोमल के लिये और रत्नाकर के चिन्ह मन्द्र तार के लिये, थोड़े अन्तर के साथ, लिये गए हैं। रत्नाकर में मन्द्र सप्तक के स्वरों के ऊपर बिन्दी होती है, वही बिन्दी हिन्दुस्तानी संगीत में तार स्वरों के ऊपर और मन्द्र स्वरों के नीचे दी जाती है। ऊपर बिन्दी रखने से वाद्य संगीत का संकेत होता है क्योंकि वाद्यों में मन्द्र सप्तक के स्वर ऊपर की तरफ बजते हैं। रत्नाकर के तार सप्तक के स्वर का चिन्ह तीव्र विकृति के लिये उपयोग किया गया है। यह विकृति केवल मध्यम स्वर को ही होती है, अतएव मध्यम के ऊपर 'म' ऐसी लकीर देकर तीव्र मध्यम समझा जाता है। तार सप्तक के स्वरों के ऊपर बिन्दी रखने से बड़ी सरलता हो गई है।

रत्नाकर के अनुसार हिन्दुस्तानी संगीत स्वरलिपि में भी गीत के अक्षरों के ऊपर उनके स्वर लिखे जाते हैं। इसी ग्रन्थ के अनुसार एक मात्रा के अन्दर आने वाले सब स्वर एक साथ लिखे जाते हैं। रत्नाकर में एक मात्रा काल के स्वर दीर्घ एवं आधी मात्रा या उससे भी कम अवकाश वाले स्वर ह्रस्व करके लिखे गये हैं और वह सब एक साथ लिखे गये हैं। हर एक स्वर या अक्षर का अवकाश अलग–अलग चिन्हों से नहीं दिखलाया गया। हिन्दुस्तानी संगीत स्वरलिपि में एक पूरी मात्रा आकार के स्वरों की अपेक्षा एक मात्रा से कम कालावधि के स्वर छोटी आकृति करके लिखे जाते हैं। यह छोटे स्वर सब ऐसे एक 'कंस' में लपेटे जाते हैं। उदाहरणार्थ 'ग' यह एक पूरी मात्रा का एक स्वर हुआ, 'गम' इसमें आधी मात्रा का एक एक ऐसे दो स्वर, 'गमप' इसमें तिहाई मात्रा का एक ऐसे तीन स्वर एवं 'रेगमप' में एक चौथाई मात्रा का एक एक ऐसे चार स्वर हुए।

भारतीय संगीत की विशेषता यह है कि उसमें स्वरोच्चार करते समय प्रायः स्वर का आरम्भ क्या गाने में क्या बजाने में ठीक उसी पर नहीं किया जाता। किसी और ऊँचे या नीचे स्वर से उठकर उदिष्ट स्वर पर आया जाता है। यह हमारे संगीत में बहुत महत्वपूर्ण है। वरन् यूं कहिये कि इनमें हमारे संगीत का प्राण है। पुराने ग्रंथों में स्वरोच्चार के विषय में 'गमक' समझाये गये हैं।

1.6.2 भातखण्डे एवं विष्णु दिगम्बर पलुस्कर स्वरलिपि पद्धतियों की तुलना – भातखण्डे जी और विष्णु दिगम्बर जी का आर्विभाव ऐसे युग में हुआ जिसको अन्धकार युग कहा जा सकता है। कला और संस्कृति के क्षेत्रों में उस समय शिथिलता छायी हुई थी। संगीत और विलासप्रियता का घनिष्ठ सम्बन्ध था। मुस्लिम शासन काल में ग्रन्थकारों और कलाकारों के पारिवारिक सम्बन्ध के अभाव के साथ ही कला को प्राप्त मुस्लिम आश्रय के फलस्वरूप संगीत विज्ञान और संगीत कला के मध्य एक बहुत बड़ी खाई उत्पन्न हो गयी थी। मुस्लिम सत्ता के उपरान्त ही ब्रिटिश सत्ता का पदार्पण हुआ तथा ब्रिटिश राज्य काल में तो भारतीय संगीत को लोग पूर्णतः विस्मृत कर चुके थे। इसी कार्य को, जो असम्भव प्रतीत होता था, पण्डित भातखण्डे ने अपने हाथ में लिया। संगीत के प्रति अपार प्रेमवश, उन्होंने अपना पूर्ण जीवन भारतीय संगीत, कला एवं विद्या के उत्थान के लिये अर्पित कर दिया। इन दोनों महापुरूषों के सामने दो समस्याएं थी। जनसाधारण के लिये शास्त्रीय संगीत सुलभ कराना और उसे लोकप्रिय बनाना तथा संगीत की गायन–वादन शैलियों का सुधार और वैज्ञानिक नोटेशन पद्धति का प्रचलन। नोटेशन पद्धति से यद्यपि किसी कलाकार का निर्माण नहीं होता, बल्कि यह तो केवल उस सीमा तक सहायता करती है जहाँ तक जनता में संगीत के प्रति रूचि में अभिवृद्धि होती है।

भातखण्डे जी और विष्णु दिगम्बर जी का तो यही लक्ष्य था कि संगीत की प्रतिष्ठा बढ़े और घर–घर में संगीत का बोलबाला हो। शिक्षित वर्ग के बच्चों के जीवन में संगीत घुल–मिल जाये। वे यह भी चाहते थे कि विश्वविद्यालयों और कालेजों के पाठ्यक्रमों में संगीत समावेश हो। स्वरलिपि के पीछे एक उद्देश्य यह भी था कि भारतीय संगीत की सांस्कृतिक परम्परा के अनन्त वैभव को सामान्य जन के समक्ष उपस्थित किया जाये।

इस दृष्टिकोण से 19वीं शती के अन्तिम पचास वर्ष से 20वीं शती के प्रथम पचास वर्ष तक को भारत के पुनर्जागरण का काल कहा जा सकता है। जिस काल में इन्होंने जन्म लिया, उस समय न तो संगीत का कोई शास्त्रीय विवरण बतलाया जाता था, न ही कोई व्यवस्थित स्वरलिपि। ऐसी स्थिति में भातखण्डे जी ने प्राचीन संगीत ग्रन्थों का अध्ययन किया और भारत का भ्रमण कर संगीतज्ञों से भेंट की। पुस्तकालयों में जाकर संगीत ग्रन्थ पड़े। तदोपरान्त उन्होंने अपना संशोधन कार्य प्रारम्भ किया। एक सबल स्वरलिपि का ढंग निकाला और 'श्री मलक्ष्यसंगीतम्', क्रमिक पुस्तक मलिकायें इत्यादि कई पुस्तकें लिखी। जिन वस्तुओं को योग्य और निपुण उस्ताद किसी को नहीं सिखलाते थे, उनका संग्रह करके अत्यन्त सरल स्वरलिपि में लिखकर छः भागों में पण्डित जी छोड़ गये हैं। परम्परागत रागदारी गीत, ध्रुपद, ख्याल, तरानें, ठुमरियाँ, टप्पे इत्यादि को सीखकर उन्होंने स्वर लिपिबद्ध किया।

The two outstanding figures pandit Vishnu Digambar and Pandit V.N. Bhatkhande who realy personified in themselves the various aspects of the musical activity. The two 'Vishnus' of Maharasthra together represent the first great attempt at the revival of Hindustani Music in modern times. They achieved success through public concerts by opening music schools; through evoling a compact system of Notation.

इनसे पूर्व श्री सुरेन्द्र मोहन टैगोर, कृष्णवन्धोपाध्याय, क्षेत्रमोहन गोस्वामी आदि के द्वारा भी वाद्य संगत को स्वर लिपिबद्ध कर लिखने का प्रयास हुआ, किन्तु यह सब प्रयत्न कितने सफल हुए यह कहना दुष्कर है। आज समस्त उत्तर भारत में शिक्षण प्रशिक्षण के शिक्षा क्रम में इसी क्रमिक साहित्य को प्रमाण माना जाता है। उत्तर भारत में सामान्य विद्यार्थियों में भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति का ही प्रचलन है। विष्णु दिगम्बर पद्धति इससे थोड़ी भिन्न रही है, यह अधिक वैज्ञानिक है। पलुस्कर पद्धति में मात्राओं का लेखन अधिक सूक्ष्मता के साथ किया जाता है। इन्होंने पाश्चात्य पद्धति से मिलते–जुलते विशेष प्रकार के पृथक–पृथक चिन्ह बनाये, जबकि भातखण्डे जी ने 1–1 मात्रा के अन्तर में ही विभिन्न मात्रा के स्वर चिन्हों को दर्शाने का प्रयत्न किया, इन्होंने विष्णु दिम्गबर जी के

समान कुछ विशेष चिन्ह प्रयोग नहीं किये। दोनों पद्धतियों की तुलना निम्न सारणी द्वारा स्पष्ट हो जायेगी, जिसमें ताल पक्ष के चिन्हों को भी दर्शाया गया है।

भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति	विष्णु दिगम्बर पलुस्कर स्वरलिपि पद्धति
स्वर चिन्ह	**स्वर चिन्ह**
शुद्ध स्वर– रे ग म (चिन्ह रहित) कोमल स्वर–रे॒ ग॒म॒ तीव्र स्वर– मं	शुद्ध स्वर– रे ग म (चिन्ह रहित) कोमल स्वर– रे् ग् म् तीव्र स्वर– म्र
सप्तक चिन्ह मध्य सप्तक– ग म प(चिन्ह रहित) मन्द्र सप्तक– ग़ म़ प़ तार सप्तक– गं मं पं	**सप्तक चिन्ह** मध्य सप्तक– ग म प(चिन्ह रहित) मन्द्र सप्तक– गं मं पं तार सप्तक– गंमंपं
स्वर मान 1 मात्रा के लिए कोई चिन्ह नहीं होता है, जैसे– स 1½ मात्रा को दर्शाने के लिए, स–रे 2 मात्रा को दर्शाने के लिए, सा– रे– ½ मात्रा को दर्शाने के लिए, रे ग ⅓ मात्रा को दर्शाने के लिए, रेगम 1/6मात्रा को दर्शाने के लिए, रेगमपधप	**स्वर मान** 1मात्रा के लिए पड़ी रेखा से रेखांकित किया जाता है, जैसे–स॒ 1½ मात्रा को दर्शाने के लिए, स॒ ० रे 2 मात्रा को दर्शाने के लिए, सा रे ऽ ऽ ½ मात्रा को दर्शाने के लिए, रे ग म प ० ० ० ० ⅓ मात्रा को दर्शाने के लिए, रे ग म ⅓ ⅓ ⅓ 1/6मात्रा को दर्शाने के लिए, रे ग म 1/6 1/6 1/6
ताल चिन्ह– सम X खाली 0 विभाग | ताली– ताली संख्या जैसे– 2, 3, 4	ताल चिन्ह– सम 1 खाली + विभाग | ताली विभाग संख्या जैसे– 1, 5, 13

भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति एवं पं0 पलुस्कर पद्धतियों में कुछ विशेषताएँ निम्नलिखित हैः–

1. दोनों पद्धतियाँ छपाई की दृष्टि में सरल एवं सस्ती है।
2. दोनों पद्धतियों को आसानी से पड़ा एवं समझा जा सकता है।

3. स्वरों के साथ उनके कोमल तथा तीव्र होने का चिन्ह दिया रहता है, जिससे स्वरों की स्थिति का बोध होता है।
4. खटका, मुरकी, गमक आदि के चिन्हों का प्रयोग इन पद्धतियों में आंशिक रूप से किया जाता है।

इन दोनों पद्धतियों में कुछ विशेषताओं के साथ–साथ कुछ कमियाँ भी देखी जा सकती हैः–
1. दोनों पद्धतियों में नाद के छोटे–बड़े पन को दर्शाने के लिए चिन्ह का प्रयोग नहीं किया गया है।
2. इन पद्धतियों पर स्वरों पर शान्त रहने के लिए कोई चिन्ह प्रयोग में नहीं लाए गये हैं।
3. भारतीय राग में स्वरों का विशेष महत्व है, जैसे– दरबारी कान्हड़ा, मियाँ मल्हार एवं मुल्तानी आदि रागों में कोमल गान्धार विभिन्न तरीकों से लगता है। किसी में थोड़ा चढ़ा हुआ, किसी में थोड़ा उतरा हुआ। ऐसी स्थिति में इस प्रकार के स्वरों को लिपिबद्ध करने के लिए कोई विशेष चिन्ह प्रयोग नहीं किये गये हैं।

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. भातखण्डे एवं विष्णु दिगम्बर स्वरलिपि पद्धति में स्वर चिन्हों की विवेचना कीजिए।
2. संगीत रत्नाकर में वर्णित स्वरलिपि पद्धति को संक्षेप में समझाइए।

1.7 आकार मात्रिक एवं पाश्चात्य स्वरलिपि का संक्षिप्त अध्ययन

भारतवर्ष में भातखण्डे एवं विष्णु दिगम्बर स्वरलिपि पद्धति के अतिरिक्त रवीन्द्र संगीत के अन्तर्गत आकार मात्रिक तथा पाश्चात्य स्वरलिपि पद्धति के अन्तर्गत स्टाफ नोटेशन पद्धति का चलन है। कविरत्न रवीन्द्रनाथ ठाकुर जिन्होंने संगीत की एक नई विधा को जन्म दिया, उसी विधा का नाम है रवीन्द्र संगीत। जिसका प्रभाव सम्पूर्ण पूर्वी भारत पर तो है ही, अन्यत्र भी उसे गाया बजाया जाता है। रवीन्द्र संगीत को आकार मात्रिक स्वरलिपि पद्धति के माध्यम से लिपिबद्ध किया जाता है।

इसके साथ पाश्चात्य स्वरलिपि पद्धति का भी संगीत में अत्यधिक महत्व है। इसका प्रयोग वर्तमान में हमारे फिल्म संगीत में विशेष रूप से होता है। पाश्चात्य स्वरलिपि पद्धति में स्टाफ नोटेशन नामक पद्धति सबसे प्रमुख है। भातखण्डे पद्धति से पलुस्कर पद्धति एवं पलुस्कर पद्धति से पाश्चात्य पद्धति अधिक उत्तम है।

1.7.1 आकार मात्रिक स्वरलिपि पद्धति – रवीन्द्रनाथ के 215 गीत ऐसे है जिन्हें हिन्दुस्तानी संगीत में से रूपान्तरित किया था। ध्रुपद, ख्याल से जुड़े इन गीतों का विशेष महत्व है। रवीन्द्रनाथ ने अपने गीतों की रचना में कुल 90 राग–रागिनियों को स्थान दिया है। जिनमें भूपाली एवं भैरवी उन्हें अधिक प्रिय थे। रवीन्द्रनाथ करीब 2000 गीत लिखे है और उन्हें आकार मात्रिक नामक स्वरलिपि में लिपिबद्ध किया है। रवीन्द्रनाथ की स्वरलिपि पद्धति सरल एवं शीघ्र ग्रहण करने के योग्य है। आकार मात्रिक स्वरलिपि पद्धति में शुद्व स्वरों में कोई चिन्ह नहीं लगाते हैं। इस लिपि में एक विशेष बात यह है कि कोमल एवं तीव्र स्वरों के लिए चिन्ह नहीं लगाते बल्कि स्वर का नाम बदल देते है, जैसे–

शुद्ध स्वर	कोमल स्वर
रे ग ध नि	ऋ ड़ द ण

मन्द्र सप्तक के स्वरों में स्वर के नीचे हलन्त का चिन्ह लगाया जाता है तथा तार सप्तक के स्वरों के ऊपर खड़ी रेखा खीची जाती है।

1.7.2 पाश्चात्य स्वरलिपि पद्धति – पाश्चात्य संगीत में किसी धुन अथवा गीत को स्वरलिपि के अनुसार ही गाया अथवा बजाया जाता है। पाश्चात्य स्वरलिपि पद्धति में स्टाफ नोटेशन पद्धति को ही स्वीकार किया गया है। इस पद्धति में प्रबलता के चिन्हों के प्रयोग से नाद के छोटे–बड़े पन को भी सुगमता से दर्शाया जा सकता है। इस लिपि में प्रत्येक स्वरों के साथ ही उनका काल मान भी लिपिबद्ध रहता है। विभिन्न प्रकार के सप्तकों को दर्शाने के लिए विभिन्न प्रकार के चिन्हों का प्रयोग किया जाता है। इस पद्धति में प्रारम्भ में किसी एक रेखा को मध्य सप्तक का सा मानकर उसमें विशेष प्रकार का अण्डाकार चिन्ह बना देते हैं। इसके पश्चात ऊपर के स्वरों के लिए क्रमशः ऊपर रेखा खीचते हैं तथा नीचे के स्वरों के लिए क्रमशः नीचे की ओर रेखा खीचते हैं। हर स्वर को रेखा में दर्शाने से अधिक रेखाओं की आवश्यकता होती है। अतः उसमें परिवर्तन कर एक स्वर को रेखा पर तथा दूसरे को दो रेखाओं के बीच में रखा जाता है। इस प्रकार पाश्चात्य संगीत में विद्वानों ने 11 रेखाओं का एक समूह बनाया जिसमें सप्तक के सभी स्वरों को सरलता से दर्शाया जा सके।

1.8 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान चुके हैं कि स्वरलिपि पद्धति के आने के बाद से संगीत सीखना, सुनना एवं सीखाना नितान्त सरल हो गया है। विशेष रूप से विद्यार्थियों को इससे बहुत सहायता प्राप्त हुई है। भातखंडे जी ने बड़े–बड़े संगीतज्ञों द्वारा जो संगीत सीखा एवं सुना उसे स्वरलिपि पद्धति द्वारा आज लगभग 150 वर्षों से भी अधिक समय तक सुरक्षित रखा है तथा उसका गायन आज सभी संगीत विद्यार्थी कर रहे हैं। स्वरलिपि पद्धति के माध्यम से गायक–वादक तथा संगीत शिक्षक एवं छात्र–छात्राएँ उन रागों एवं गीतों को कंठस्थ करने में सक्षम हैं जिनका अध्ययन वे पहले नहीं कर पाते थे। सामूहिक विद्यालयी संगीत शिक्षा में समानता लाने की दृष्टि से तथा प्रमाणिकता सिद्ध करने की दृष्टि से तथा प्रामाणिकता सिद्ध करने की दृष्टि से प्रचलित गायन–वादन सामग्री को सरल, सुगम स्वरलिपि का अविष्कार कर संकलित किया गया।

1.9 शब्दावली

- **सप्तक** : भारतीय संगीत में सप्तक से भाव, सात स्वरों का क्रमिक समूह है। सप्तक तीन प्रकार के होते हैं– मन्द्र, मध्य एवं तार सप्तक। मन्द्र सप्तक में आवाज भारी होती है तथा यह मध्य सप्तक के स्वरों से दुगुने नीचे होता है। मध्य सप्तक में स्वरों की आवाज न बहुत ऊँची न बहुत नीची होती है। तार सप्तक के स्वरों की आवाज मन्द्र सप्तक से चौगुनी तथा मध्य सप्तक से दुगुनी ऊँची होती है।
- **नाद का छोटा–बड़ा पन** : नाद के छोटे–बड़े पन का अर्थ है आवाज जो पैदा हो रही है वह धीरे है या जोर से उत्पन्न हो रही है। धीरे से उत्पन्न आवाज को नाद का छोटापन तथा जोर से उत्पन्न आवाज को नाद का बड़ापन कहते हैं।
- **उदात्त** : उदात्तः प्राचीन सामगान में प्रयोग होने वाले स्वरों का सम्बोधन।
- **कण स्वर** : मूल स्वरों का स्पर्श करने वाला स्वर।
- **खटका** : द्रुत गति से अन्य स्वर को स्पर्श करने की क्रिया।

1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.4 की उत्तरमाला :–

ख) एक शब्द में उत्तर दोः–

1. स्वर के नीचे (–) चिन्ह लगाते हैं।
2. बिन्दु (स्वर के पर)
3 चिन्ह ⁀ का प्रयोग होता है।

3ग) सत्य असत्य बताइयेः–

1. असत्य 2. सत्य 3. असत्य

1.5 की उत्तरमाला :–

ख) एक शब्द में उत्तर दोः–

1. स्वर के नीचे हलन्त(्) लगाते हैं।
2. तार सप्तक के ऊपर खड़ी लकीर लगाते है।
3. स्वरों के ऊपर ⁀ चिन्ह लगाते हैं।

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पंडित विष्णु नारायण, (1970), हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 1 एवं भाग 2, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. पाठक, पंडित जगदीश नारायण, (1996), संगीत निबन्ध माला, पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
3. गोबर्धन, शान्ति, (1995), संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2, पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
4. सेन, डॉ0 अनीता, (1991), रवीन्द्र संगीत, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।

1.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, प्रो0 हरिश्चन्द्र, राग परिचय भाग 1 तथा 2, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. गर्ग, डॉ0 लक्ष्मी नारायण, (2001), राग विशारद भाग–1, संगीत कार्यालय, हाथरस।

1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति का वर्णन कीजिए।
2. भारतवर्ष में मुख्य रूप से कितनी स्वरलिपि पद्धतियों का चलन है? विस्तारपूर्वक चर्चा कीजिए।

इकाई 2 – भारतीय स्वर वाद्यों (तत् एवं सुषिर) की उत्पत्ति एवं विकास

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 वाद्यों की स्थिति
2.3.1 वाद्यों की उत्पत्ति एवं विकास
2.3.2 वाद्यों का वर्गीकरण
2.4 तत् वाद्यों की उत्पत्ति एवं विकास
2.4.1 प्राचीन कालीन तत् वाद्य
2.4.2 मध्य कालीन तत् वाद्य
2.4.3 आधुनिक कालीन तत् वाद्य
2.5 सुषिर वाद्यों की उत्पत्ति एवं विकास
2.5.1 प्राचीन कालीन सुषिर वाद्य
2.5.2 मध्य कालीन सुषिर वाद्य
2.5.3 आधुनिक कालीन सुषिर वाद्य
2.6 सारांश
2.7 शब्दावली
2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.11 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर, (एम0पी0ए0एम0आई0–502) पाठ्यक्रम की दूसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के पश्चात आप स्वरलिपि पद्धतियों के बारे में बता सकते हैं। आप बता सकते हैं कि संगीत में वाद्यों का क्या स्थान है तथा भारतीय संगीत के अन्तर्गत कितने प्रकार के प्रमुख वाद्यों की संगत की जाती है।

प्रस्तुत इकाई में स्वर वाद्यों, जिनके अन्तर्गत तत् एवं सुषिर वाद्य आते हैं, कि प्राचीन काल से आधुनिक काल तक के विकास को प्रस्तुत किया गया है। इसमें तत् एवं सुषिर वाद्यों की उत्पत्ति, विकास एवं विभिन्न कालों में उनके स्वरूप का वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप स्वर वाद्यों की विशेषताओं को समझ सकेंगे। स्वर वाद्यों की उत्पत्ति से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों को समझ सकेंगे। विभिन्न ग्रन्थों एवं कालों में जैसे वैदिक काल, रामायण काल, महाभारत काल तथा नाट्यशास्त्र, संगीत रत्नाकर, भरत भाष्यम आदि में तत् एवं सुषिर वाद्यों के तुलनात्मक अध्ययन एवं उनका विश्लेषण कर सकेंगे। विभिन्न कालों के अध्ययन से वाद्यों की संख्यात्मक वृद्धि, उनके उपयोग तथा संरचना आदि पर प्रकाश पड़ता है जो कि वाद्यों के अध्ययन के लिए प्रमुख तत्व है।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप–

- बता सकेंगे कि भारतीय संगीत में वाद्य वादन एवं इनके संगत की आवश्यकता क्यों है तथा इसी से संगीत की पूर्ण अभिव्यक्ति सम्भव है।
- समझा सकेंगे कि वाद्य वादन आनन्द प्राप्ति के लिए, मनोरंजन के लिए एवं मान प्रतिष्ठा के लिए किया जाता है। इसके साथ लोक गायन, नृत्य परम्परा में भी इसका विशेष महत्व है।
- प्रत्येक काल में वाद्यों की स्थिति को जान सकेंगे तथा किस प्रकार तत् एवं सुषिर वाद्यों का विकास शनै–शनै हुआ है, समझ सकेंगे।
- बता सकेंगे कि संगीत के कलात्मक पक्ष को प्रबल रूप देने में विशेष रूप से वाद्य यंत्रों का ही स्थान है।
- आदिम सभ्यता के मानव द्वारा प्रारम्भ में प्रयुक्त वाद्य अविकसित अवस्था में थे। वाद्यों का जो रूप आज दिखाई देता है उसका एक श्रृंखलाबद्ध इतिहास है तथा संगीत शास्त्र में वाद्यों को आज उच्च स्थान प्राप्त है।

2.3 वाद्यों की स्थिति

संस्कृति के उद्गम एवं विकास के साथ संगीत का उद्गम एवं विकास देखा जा सकता है। आदिम संगीत कलात्मक संगीत से अधिक दैनिक कार्यों के अधिक निकट था। आदिम मानव तभी गाता था जब वह कुछ अभिव्यक्त करना चाहता था। प्राचीन काल से मानव अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति के रूप में संगीत का प्रयोग करता आ रहा है। संगीत–रचना में अभिव्यक्ति, विचार एवं भाव केवल शब्दों के माध्यम से नहीं वरन् स्वरों के माध्यम से नादात्मक अभिव्यक्ति पाते हैं। इस प्रकार वाद्य में किसी भी प्रकार से भाषात्मक शब्दों का प्रयोग नहीं होता है। अपितु नादात्मक ध्वनियों के माध्यम से वे भावाभिव्यक्ति करने में सक्षम हैं। संगीतात्मक वाद्य किसी भी राष्ट्र के सांस्कृतिक उत्थान में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

भारतवर्ष में संगीत वाद्यों का प्रयोग अत्यन्त प्राचीन काल से चला आ रहा है। प्राचीन काल के धार्मिक अवशेषों, शास्त्रीय ग्रन्थों, वेदकालीन वाद्य निरूपण तथा मोहनजोदड़ों की खुदाई इस तथ्य के प्रमाण हैं कि वाद्यों का प्रभावित क्षेत्र देवी–देवताओं से भी अधिक रहा है। भारत के आदि देव शंकर जी द्वारा डमरू, सरस्वती द्वारा वीणा और कृष्ण का सम्बन्ध मुरली से स्थापित करते हुए संगीतज्ञों ने वाद्यों की आध्यात्मिक परम्परा को विकसित किया है।

मानव आरम्भ से ही अन्य प्राणियों की अपेक्षा अधिक गतिमान एवं समझदार रहा है। उसमें विचारों और भावनाओं की अभिव्यक्ति की शक्ति रही है, जिसके माध्यम से वह निरन्तर असभ्यता से सभ्यता की ओर चलायमान रहा है। वह अपने हृदय की उभरती भावनाओं को सदैव गायन एवं नृत्य के माध्यम से प्रकट करता रहा है। अपनी इसी विशेषता के कारण उसने कुछ ध्वनियाँ सुनी होंगी जिसे अनजाने में ही वह उत्पन्न करता रहता था। जैसे पृथ्वी पर चलते समय पैरों की आवाजें, दोनों हथेलियों से ताली देना, अथवा पंजों को मारने की ध्वनि, विशेष रूप से पेट, जाँघ आदि पर। सम्भवतः उसमें अपने शरीर के अंगों को ठोंक कर या पीटकर लय के प्रतिष्ठापन करने में कष्ट का अनुभव किया होगा, तब उसने प्राकृतिक रूप में उपलब्ध वस्तुओं में से कुछ का चयन कर लय के लिए उन वाद्यों का सृजन किया होगा।

2.3.1 वाद्यों की उत्पत्ति एवं विकास – संगीत की विद्यमानता आदिकाल से ही थी। विभिन्न वाद्यों की उत्पत्ति में प्रकृति का योगदान रहा है। आदि मानव के स्वानुभूत साधनों में इनका स्थान रहा है और

प्रकृति पशु–पक्षियों, वृक्ष लताओं के साहचर्य में रहते हुए आदिवासियों ने उन वाद्यों को अपने मनोरंजन का साधन बनाया। मानव समय–समय पर होने वाले उत्सवों में स्वकल्पित तथा निर्मित वाद्यों से समयानुकूल अपने मनोरंजन का साधन जुटाता रहा है और यह निर्विवाद है कि आवश्यकता अविष्कार की जननी है। लोक में वाद्यों के प्रचलन को नियमित करने के उद्देश्य से शास्त्रकारों ने इन वाद्यों का विश्लेषण और वर्गीकरण कर वाद्यों को शास्त्रीय रूप प्रदान किया। यही वाद्यों की उत्पत्ति का रहस्य है।

आदिम सभ्यता के समय मानव द्वारा प्रारम्भ में प्रयुक्त वाद्य भी अविकसित अवस्था में थे। वाद्यों का जो रूप आज दृष्टिगोचर होता है, वहाँ तक पहुँचने में वाद्यों का एक श्रृंखलाबद्ध इतिहास है। प्राचीन, मध्यकालीन तथा आधुनिक काल के वाद्यों का यदि विश्लेषणात्मक अध्ययन करें तो ज्ञात होता है कि प्राचीन काल के वाद्य पहले बहुत ही साधारण थे। धीरे–धीरे उनमें क्लिष्टता तथा बजाने में कुशलता आती गई और क्रमशः संगीत का विकास होता गया। प्रारम्भ में वाद्यों के रूप में सौन्दर्यात्मकता का अभाव था। उनकी महत्वपूर्ण ध्वनियाँ तेज नादयुक्त तथा तीखी थीं। उनके वाह्य रूप गोलाकार तथा नुकीले थे। परन्तु धीरे–धीरे मानव ने अपनी बुद्धि के विकास के साथ वाद्यों की सामग्री, बनाने के ढंग व बजाने के प्रयोग में परिवर्तन किया। प्रारम्भ में मानव के भाव भी अपरिपक्व थे। धीरे–धीरे उनमें परिष्कार हुआ और अभिव्यक्ति के प्रयोग में भी भिन्नता आने लगी। संगीत शास्त्र में वाद्यों को जो उच्च स्थान प्राप्त हुआ है, वह कई वर्षों के परिश्रम एवं संशोधन का फल है।

प्रागैतिहासिक काल में भी संगीत का प्रचलन रहा है। प्रागैतिहासिक मानव उस समय असंस्कृत तथा असभ्य था परन्तु उसे नृत्य तथा संगीत से प्रेम था। इस काल की कोई सूत्रबद्ध सामग्री उपलब्ध नहीं होती है। इसमें सन्देह नहीं कि ऐसी ही विशाल प्रागैतिहासिक सभ्यता का निदर्शन सिन्धु तथा हड़प्पा जैसे स्थानों में उपलब्ध है। मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा में जो संगीत वाद्य मिले हैं उनका हिन्दू–सभ्यता से लेकर इतिहास की रचना तक सम्बन्ध है। प्रागैतिहासिक काल में भी सगीत का प्रचलन रहा है। प्रागैतिहासिक मानव उस समय असंस्कृत तथा असभ्य था, उसे नृत्य तथा संगीत से प्रेम था। अपरिष्कृत संगीतात्मक वाद्य जैसे– लकड़ी, मिट्टी के ड्रम के समान बाँस की अथवा हड्डी की बनी बाँसुरी वह संगीत के साथ प्रयुक्त करता था। नृत्य करते समय उसमें उछल–कूद का भाव अधिक होता था तथा तालियों द्वारा वह लय को दर्शाता था। प्रागैतिहासिक मानव वीणा–वाद्य में तंत्री के लिए ताड़ की पत्तियों के रेशे, घास तथा जानवरों की आँतों का प्रयोग करता था। आदि मानव के नृत्य तथा गीत स्वतः उसकी आन्तरिक भावनाओं को व्यक्त करने का माध्यम थे। अविकसित अवस्था के रूप में आदिम मानव के वाद्यों को तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है– चमड़े से मढ़े, सुषिर एवं तत्। वाद्यों के विकास के क्रम में प्रोफेसर वॉलशेक की मान्यता रही है कि पहले ताल–वाद्य फिर तत्–वाद्य के रूप में तीर–कमान और फिर सुषिर वाद्य का अविष्कार सबसे अन्त में हुआ।

इस प्रकार वैदिक काल से पूर्व सिन्धु घाटी सभ्यता के काल में भारतीय संगीत का उद्भव हो चुका था, भले ही वह अर्द्ध विकसित रहा हो। अनेक प्रकार के वाद्य जो कि मोहनजोदड़ो, चानूदारों, हड़प्पा आदि के पहाड़ों की खोज में मिले हैं, उनसे ज्ञात हुआ कि यह सभ्यता बहुत प्राचीन तथा विकसित थी तथा सिन्धु सभ्यता के लोगों में कला के प्रति प्रेम था। मोहनजोदड़ों काल में गोल बर्तनों के आकार में पकी हुई मिट्टी के कंकड़ को डालकर बजाने का प्रयोग किया जाता था। सिन्धु सभ्यता के समय विभिन्न करताल पाये गए। इससे निष्कर्ष निकलता है कि ये अतिरिक्त वाद्य के रूप में ताल वाद्य, नृत्य तथा गीत के साथ उत्सवों में प्रयुक्त किये जाते थे। करताल बर्तन वाली मिट्टी से बनाये जाते थे।

वैदिक युग भारत के सांस्कृतिक इतिहास में प्राचीनतम युग माना जाता है। वेदों को विश्व का आदि वाङमय मानते हैं। भारतीय संगीत का उद्गम भी वेदों में परिलक्षित होता है। सामवेद का संगीत की दृष्टि से विशेष स्थान है। गायन के साथ वाद्यों का भी प्रयोग होता रहा है। उद्गाता के गायन के समय उनकी पत्नियाँ विभिन्न प्रकार की वीणाओं का वादन किया करती थीं। वैदिक समय में संगीत

का प्रयोग विभिन्न धार्मिक कार्यों में भी दृष्टिगोचर होता है ब्राह्मणों की पत्नियाँ अग्नि के चारों और पिच्छोरा अथवा पिच्छोला वीणा वाद्य बजाकर नृत्य किया करती थीं। डॉ0 परांजपे के अनुसार ऋग्वेद में निम्न वाद्यों का उल्लेख पाया जाता है– दुन्दुभि, बाण, नाली, कर्करि, गोधा, पिंग और आघाटि। वैदिक युग में हम देखते है कि तन्तु वाद्य के लिए 'वीणा' सामान्य संज्ञा प्रयुक्त की जाती है।

'वाल्मीकि रामायण' युग में प्रचलित विभिन्न वाद्यों का अध्ययन, उनका प्रयोग जन–मानस की संगीत सम्बन्धी रूचि को दर्शाते हैं। रामायण में गन्धर्वों द्वारा गान तथा वीणा–वादन का उल्लेख मिलता है। वीणा उस समय का लोकप्रिय वाद्य रहा है। वीणा, विपंची तथा वल्लकी वीणा वाद्य के विभिन्न प्रकार रहे हैं। बाल्मीकि ने निम्न वाद्यों का उल्लेख किया है– मृदंग, मड्डक, पटह, पणव। आनद्ध वाद्यों में मुरज, चेलिका, दुंदुभी, मृदंग आदि।

'महाभारत' काल में गीत, वादन और नृत्य का प्रयोग जन–जीवन के अभिन्न अंग के रूप में होता रहा है। गायन के साथ वीणादि वाद्यों का वादन होता था। वादित्र के अन्तर्गत तत्, वितत्, घन तथा सुषिर इन चतुर्विध वाद्यों के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख पाया जाता है। इस समय पणव, मृदंग, भेरी, मर्दल, पुष्कर, कांची, नुपुर आदि वाद्य प्रमुख थे।

बौद्ध तथा जैन ग्रन्थों में उपलब्ध संगीत विषयक सामग्री उस समय की सांगीतिक स्थिति को दर्शाते हैं। बौद्ध साहित्य में तत्, वितत्, घन तथा सुषिर इन चतुर्विध वाद्यों का प्रचुर उल्लेख पाया जाता है। तत् वाद्यों के अन्तर्गत निम्न वाद्यों का उल्लेख मिलता है– वीणा, परिवादिनी, विपंची, कच्छपी तथा तुम्ब वीणा। इसके अतिरिक्त मृदंग, पणव, भेरी, दुंदुभी, घण्टा, झल्लरी, तूर्य आदि प्रमुख वाद्य थे।

2.3.2 वाद्यों का वर्गीकरण – किसी भी संगीतात्मक ध्वनि–उत्पादन वस्तु को 'वाद्य' की संज्ञा दी जा सकती है। अतः ध्वनि–उत्पादन का माध्यम एक पत्थर, पत्ती से लेकर इलेक्ट्रानिक माध्यम भी हो सकता है। इस प्रकार संगीतात्मक ध्वनि अथवा गति को प्रकट करने वाले उपकरण 'वाद्य' कहलाते हैं। विभिन्न वाद्यों द्वारा उत्पन्न स्वर तथा लय को वाद्य संगीत अथवा वादन कहा जाता है।

वैदिक काल में वाद्यों का वर्गीकरण नहीं मिलता है, किन्तु चारों प्रकार के वाद्यों का उल्लेख मिल जाता है।

रामायण तथा महाभारत में 'वादित्र' के अन्तर्गत ही तत्, अवनद्ध, घन तथा सुषिर वाद्यों का अन्तर्भाव था, अलग से विभाजन नहीं मिलता है।

पाणिनि की 'अष्टाध्यायी' में वृन्दवादन के लिए 'तूर्य' शब्द का प्रयोग पाया जाता है। जिसमें सभी वाद्यों का अन्तर्भाव है। बौद्ध साहित्य में तत्, वितत्, घन तथा सुषिर इन चतुर्विध वाद्यों का प्रचुर उल्लेख पाया जाता है।

भरत ने अपने 'नाट्यशास्त्र' में चार प्रकार के वाद्य माने। प्राचीन युग के वाद्य प्रकारों को देखते हुए उनका वर्गीकरण उचित एवं पर्याप्त प्रतीत होता है।

भारतीय संगीत शास्त्र में उपलब्ध वाद्य–वर्गीकरण में भरतमुनि प्रदत्त वाद्य–वर्गीकरण ही सर्वाधिक प्राचीन, सर्वश्रेष्ठ एवं वैज्ञानिकता से परिपूर्ण है। अभिनव गुप्त ने 'नाट्यशास्त्र' की टीका में तत्, अवनद्ध एवं घन शब्दों की व्याख्या करते हुए बतलाया है कि तंत्रियों के कारण तत्, चर्मबन्धन के कारण अवनद्ध एवं ताल वाद्य की सुस्पष्टता, सघनता एवं सुन्दरता को चिरस्थायी बनाने के लिए 'घन' वाद्य विशेष की संरचना हुई। 'सुषिर' शब्द का अर्थ है 'छिद्रवाला' या 'फूँक' मारकर बजाया जाने वाला वाद्य। महर्षि भरत द्वारा निर्धारित वाद्यों के चतुर्विध वर्गीकरण तथा उनके नामों को सभी आचार्यों ने स्वीकार किया है। शार्ङदेव ने भी इसे स्वीकार किया है। शार्ङदेव ने वाद्य को शिव स्वरूप माना है। उसी वाद्य में से एक वाणी निकलती है, जिसमें स्वर, लय आदि हैं। इन्होंने भी तत्, सुषिर, अवनद्य और घन ये चार प्रकार के वाद्य बताये हैं।

इस प्रकार समस्त भारतीय विद्वानों ने ध्वनि के आधार पर वाद्यों का वर्गीकरण चार श्रेणियों में निम्नवत् किया है–

1. तत् 2. अवनद्ध 3. घन 4. सुषिर

तत् और सुषिर वाद्य श्रुति, स्वर आदि को प्रकट करते हैं जिनसे गीत प्रकट होता है। अवनद्ध से उस गीत को अनुरंजित करते हैं तथा घन से मान या गणना की जाती है। इन्हीं वाद्यों को ओर अधिक स्पष्ट रूप में कह सकते हैं–

1. **तत् वाद्य** – तंत्री अथवा तार द्वारा विस्तारित वाद्य को तत् कहते हैं। जैसे प्राचीन काल में विभिन्न वीणाएं तथा वर्तमान में सितार, सारंगी और सुरबहार आदि।
2. **सुषिर** – छिद्र युक्त वंश आदि वाद्य सुषिर कहलाते हैं। जैसे प्राचीन काल में शंख, वेणु, गोमुख आदि तथा वर्तमान में बांसुरी एवं शहनाई आदि।
3. **अवनद्ध** – चमड़े से मढ़े हुए मुख वाले वाद्य को अवनद्ध कहते हैं। जैसे प्राचीन काल में दुंदुभी, मुरज, मृदंग आदि तथा वर्तमान में पखावज, तबला, ढोलक आदि।
4. **घन** – जहाँ घात प्रहार करने से वाद्य ध्वनि उत्पन्न करता है वह घन वाद्य कहलाता है। जैसे प्राचीन काल में कांस्य ताल, घण्टा, नूपुर, कांची आदि तथा वर्तमान में घण्टा, मजीरा आदि।

अभ्यास प्रश्न

क)लघु उत्तरीय प्रश्नः–

(i) प्राचीन काल में वाद्यों की क्या स्थिति थी? बताइए।

(ii) वाद्यों को कितने भागों में वर्गीकृत किया गया है?

ख) सत्य/असत्य बताइये :–

(i) वीणा वाद्य अवनद्ध वाद्यों के अन्तर्गत आता है।

(ii) रामायण काल में तंतु वाद्यों में सितार वाद्य प्रमुख था।

(iii) चमड़े से मड़े वाद्य अवनद्ध वाद्यों की श्रेणी में आते हैं।

2.4 तत् वाद्यों की उत्पत्ति एवं विकास

'तत्' शब्द 'तनु' से निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ है 'विस्तार करना'। 'तनु' धातु में 'त' प्रत्यय लगाकर तत् शब्द बनता है, जिसका अर्थ होता है– जो व्याप्त और विस्तृत हो, जिसमें स्वर व्याप्त हो और उसका विस्तार किया जाए।

तत् वाद्य का अर्थ तन्तु वाद्य अर्थात तना हुआ तार, रेशम का डोरा अथवा ताँत इत्यादि का बना वाद्य।

तत् वाद्यों का जो आज विकसित रूप हम देखते हैं, उसके पीछे एक लम्बा इतिहास है। इस अवस्था तक पहुँचने में तत् वाद्य विभिन्न अवस्थाओं से गुजरे हैं। तत् वाद्यों का विकास मूलतः धनुष से हुआ है। इसलिए सभी देशों के प्रारम्भिक तंत्री वाद्य धनुषाकृति में प्राप्त होते हैं। तंतु वाद्य की सबसे प्रारम्भिक अवस्था को धनुष, हार्प तथा लायर के समान माना जा सकता है। तत् वाद्यों के प्रारम्भिक रूप पर विचार करने पर यह पता चलता है कि चाहे वह धनुषाकार वीणा हो या वेदों में उल्लिखित बाण अथवा बेवीलोनिया, मिस्र आदि में पाया जाने वाला हार्प या लायर सभी में स्वरोत्पत्ति का एक ही सिद्धान्त दिखाई पड़ता है और वह है प्रत्येक स्वर के लिए एक ही तार का प्रयोग। अति प्राचीन काल में कहीं भी एक तार पर अधिक स्वरों को निकालने की किसी व्यवस्था का पता नहीं चलता।

वैदिक काल में वाण में सौ तंत्रियों का उल्लेख मिलता है। इन तंत्रियों को सुर में मिलाने के लिए बार–बार खोलकर बाँधा जाता होगा। प्राचीन चित्रों में हम देखते हैं कि उसमें खूँटी नहीं हैं।

सम्भव है इन तारों को पुनः मिलाने के लिए तारों को खिसकाकर तनाव को कम या ज्यादा करके नियमित किया जाता होगा। इस प्रकार धनुष आकार की वीणा का प्राचीन भारत में काफी चलन था। तंत्री वाद्यों में सारिकाओं का प्रयोग तंत्र वाद्यों के विकास का अगला चरण कहा जा सकता है। किन्नरी वीणा से ही तंत्री वाद्यों में सारिका की परम्परा का प्रारम्भ माना जाता है। इस प्रकार एक ही तार से विभिन्न स्वरों की उत्पत्ति सम्भव हुई। प्रारम्भ में ये सारिकाएँ काँच अथवा जानवरों की हड्डियों की बनी होती थी। शार्ङदेव ने किन्नरी वीणा का वर्णन करते समय काँसे की सारिकाओं का उल्लेख किया है। वाद्यों के निर्माण में अधिकांश उन्हीं वस्तुओं का प्रयोग किया है जो प्रकृति प्रदत्त हैं। बाद में कृत्रिम वस्तुओं का प्रयोग होने लगा।

2.4.1 प्राचीन कालीन तत् वाद्य – भारत में तत् वाद्यों की परम्परा उतनी ही प्राचीन है जितनी वैदिक परम्परा। 'वीणा' शब्द का प्रयोग मध्यकाल तक तंत्री वाद्य के साथ उपनाम की भांति जुड़ा रहा। धीरे–धीरे 'वीणा' का प्रयोग विशेष प्रकार के वाद्य के लिए होने लगा। आधुनिक समय में वीणा कहते ही रूद्र वीणा, विचित्र वीणा, सरस्वती वीणा की ओर ध्यान आकर्षित होता है। तत् वाद्यों की एक समृद्ध परम्परा रही है। भरत से अभिनवगुप्त, शार्ङदेव सभी ने वीणा के विभिन्न प्रकारों की चर्चा अपने ग्रन्थ में की है। इनमें अगुँली, कोण, गज, डण्डियों से आघात द्वारा तथा बायें हाथ की अँगुलियों से अथवा किसी अन्य वस्तु से बजने वाले अनेक प्रकार हैं।

वैदिक युग से अभिप्राय उस सुदीर्घ काल खण्ड से है, जिसमें चार वेदों तथा उनके विविध अंगों का विस्तार हुआ है। वेदों में सामवेद को संगीत का ग्रन्थ माना गया है। वेदकालीन सामगान की परम्परा बड़ी विशाल है। वैदिक कालीन तंत्री वाद्यों में वीणा सर्वाधिक प्रमुख वाद्य है। वीणा ऋग्वेद कालीन संगीत परम्परा का प्रमुख तत् वाद्य रहा है। वैदिक कालीन वीणाओं के नाम निम्नलिखित हैं–

काष्ठ वीणा – वैदिक कालीन वीणाओं में काष्ठ वीणा एक है। यह वीणा आत्मरहित है। इसके द्वारा संगीतोपयोगी नाद व्यवहृत होता है। यह वीणा केवल सीमित स्थान तक आहत तथा सूक्ष्म नाद को प्रकाशित करती है। सात्त्विक वृत्ति वाले पुरूष ही काष्ठ वीणा द्वारा मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं।

गात्र वीणा – इस वीणा का उल्लेख नारदीय शिक्षा में मिलता है। इसके द्वारा सामवेद का गान किया जाता है। वैदिक शिक्षा ग्रन्थों में गात्र वीणा का उल्लेख मिलता है। गात्र वीणा वास्तव में कोई वाद्य नहीं है अपितु सामगायक द्वारा अपने हाथों की अँगुलियों के पोरों में जो स्वरों की कल्पना है वही गात्र वीणा वादन है।

अन्तर वीणा – अन्तर वीणा गात्र वीणा से श्रेष्ठ है। गान्धार ग्राम होने के कारण इस वीणा का सम्बन्ध देवलोक से है, जिसे क्रिया रूप में लाने वाली प्रकृति है।

वाण वीणा – वाण नामक तंत्री वाद्य वैदिक युग का सर्वाधिक प्रचलित एवं महत्वपूर्ण प्रकार था जो उसकी व्याख्या में प्रयुक्त 'महावीणा' संज्ञा से भी स्पष्ट हो जाता है। ऋग्वेद में वाण नामक तंत्री वाद्य की गम्भीर ध्वनि का उल्लेख है।

आघाटि वीणा – यह वैदिक कालीन वीणा है। ऋग्वेद में इसका उल्लेख पाया जाता है। पं0 क्षितिमोहन सैन के अनुसार– "आघाटि का अर्थ घाट अर्थात् पदों से निर्मित वाद्य से है।"

कर्करी वीणा – यह एक प्राचीन वीणा है। इसका उल्लेख वैदिक काल में मिलता है। कर्करी एक ऐसा फल है जो पानी में होता है तथा इसकी पेंदी में छेद होता है। सम्भवतः इससे बनी वीणा कर्करी वीणा कहलाती थी।

काण्ड वीणा – यह वैदिक कालीन वीणा है। यज्ञ मंडप में काण्ड वीणा का वादन होता था। उसके साथ अन्य प्रकार के वाद्य भी बजाये जाते थे।

आडम्बर वीणा – वाल्मीकि रामायण तथा यतिमान पादखण्ड में इसका नामोल्लेख प्राप्त होता है। आडम्बर को वैदिक युग का तत् वाद्य कहा जाता है।

अलाबु वीणा – यह वैदिक कालीन वीणाओं में से एक है। अलाबु वीणा का उल्लेख 'लाट्यायन श्रोत' सूत्र में हुआ है। अलाबु वीणा में तुम्बा जोड़ा जाता है और इसका सिर बन्दर के मुँह जैसी वक्र आकृति का होता है।

पिनाकी वीणा – यह एक प्राचीन वीणा का प्रकार है। भगवान शंकर के नाम से यह प्रसिद्ध हुई। पिनाक अथवा पिनाकी वीणा धनुषाकार होती है। पिनाकी वीणा में एक तुम्बा होता है और यह गज से बजायी जाती है। यह वीणा धनुषाकार गज से बजायी जाती है। इसमें तुम्बे लगे रहते हैं और वाद्य आकृति बहुत कुछ किन्नरी वीणा के समान होती है।

कच्छपी वीणा – कच्छपी वीणा का उल्लेख प्राचीन एवं मध्यकाल दोनों में उपलब्ध है। महाभारत में कच्छपी वीणा का उल्लेख प्राप्त होता है। यह आचार्य भरत द्वारा निर्दिष्ट एक प्राचीन वीणा हैं जो कि अप्रचलित है। भरत ने तत् वाद्यों के अंग तथा प्रत्यंग वाद्यों के विवेचन में कच्छपी वीणा को प्रत्यंग वाद्य कहा है।

विपंची – विपंची वीणा का उल्लेख प्राचीन एवं मध्यकाल दोनों में उपलब्ध है। इसका उल्लेख बाल्मीकि रामायण के सुन्दरकाण्ड में उपलब्ध है। शार्ङदेव ने एकतंत्री वीणा का तो विस्तृत वर्णन किया है परन्तु विपंची के तारों का भरत के समान उल्लेख भर किया है। जिससे ज्ञात होता है कि विपंची में नौ तार होते थे। भरत ने विपंची का वादन केवल कोण द्वारा करने को कहा है। शार्ङदेव के अनुसार विपंची का वादन कोण अथवा अँगुलियों दोनों से किया जा सकता था। वादन में सहजता न होने के कारण सम्भव है कि विपंची का वादन कम होता गया होगा। धीरे–धीरे अन्य वीणाओं का प्रचार होने से विपंची ने गौंण स्थान ग्रहण कर लिया और शार्ङदेव के समय मत्तकोकिला, एकतंत्री, किन्नरी आदि वीणाएँ अधिक प्रचार में रही।

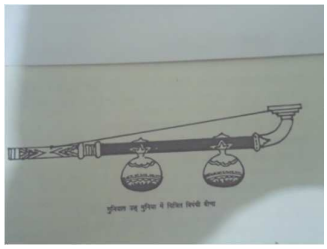

विपंची वीणा(मध्यकालीन)

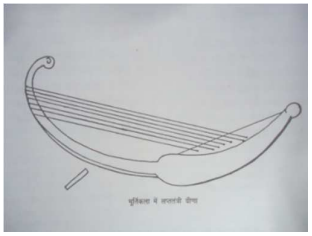

सप्ततंत्री वीणा

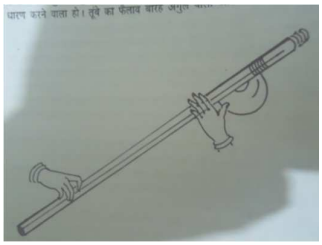

आलापिनी

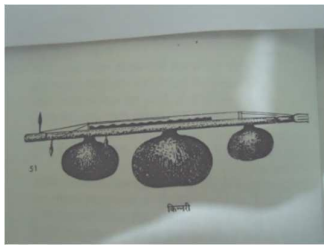

किन्नरी वीणा

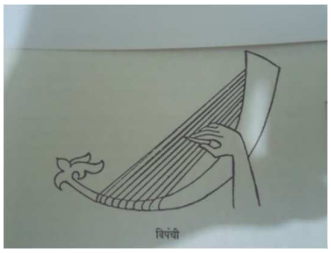

विपंची वीणा(प्राचीन कालीन)

2.4.2 मध्यकालीन तत् वाद्य – मध्यकाल में 'वीणा' तत् वाद्यों के लिए सामान्य संज्ञा थी। सभी तंतु वाद्यों को वीणा कहा जाता था। मध्य युगीन ग्रन्थों में वीणा के निम्न प्रकार उल्लिखित हैं–

चित्रा – शार्ङदेव ने चित्रा के सम्बन्ध में यह उल्लेख किया है– 'तंत्रीभिः सप्तभिश्चित्रा' इससे केवल यही अनुमान किया जा सकता है कि उसमें सात तार होते थे। इसके अतिरिक्त उस वीणा का रूप वर्णन नहीं मिलता है। चित्रा वीणा में तारों को मिलाने की क्या व्यवस्था थी, इस सम्बन्ध में यदि अन्य ग्रन्थों का अध्ययन करें तो देखेंगे कि भरत, नान्यदेव, सोमेश्वर, शार्ङदेव, पार्श्वदेव किसी ने भी वर्णन नहीं किया है। शार्ङदेव के श्लोक से केवल तार–संख्या का ज्ञान होता है।

मत्तकोकिला – वाल्मीकि रामायण के किष्किन्धा काण्ड में मत्तकोकिला शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका उल्लेख प्राचीन एवं मध्यकाल दोनों में उपलब्ध है। 'संगीत रत्नाकर' में मत्तकोकिला की चर्चा करते हुए इसमें इक्कीस तंत्रियों का उल्लेख किया है तथा उसे सभी वीणाओं में प्रमुख माना है। भरत ने अपने ग्रन्थ में कहीं भी स्वयं मत्तकोकिला का नाम नहीं लिया है और न ही इक्कीस तंत्री वीणा की चर्चा की है। भरत से पूर्व भी 'मत्तकोकिला' का अस्तित्व मात्र रामायण दृष्टिगोचर होता है। भरत से पूर्व भी हमें मत्तकोकिला वीणा का उल्लेख मिलता है। अतः यह मानना असंगत न होगा कि इक्कीस तंत्री वीणा अथवा मत्तकोकिला वीणा उस समय प्रचार में थी। शार्ङदेव ने मत्तकोकिला का वर्णन करते हुए इक्कीस तंत्री वाली वीणा का नाम मत्तकोकिला कहा है। कल्लिनाथ ने इसका लोक में अन्यत्र नाम स्वरमण्डल बताया है।

एकतंत्री वीणा – शार्ङदेव ने इस वीणा के दो भेद स्वर वीणा और श्रुति वीणा बताए हैं–

ततं वीणा द्विधा स च श्रुति स्वर विवेचनात्।

स्वर वीणा के अन्तर्गत एकतंत्री वीणा का वर्णन किया है। शार्ङदेव ने वाद्याध्याय के श्लोक संख्या चौव्वन में वीणा के मंगल कार्य के बारे में बताया है। इसके दर्शन और स्पर्शमात्र से सभी प्रकार के सुख एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है, ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त हो जाता है, पतित से पतित व्यक्ति का जीवन भी सफल हो जाता है। अन्य वीणा इसी वीणा के भेद हैं। सोमेश्वर व सुधाकलश ने भी एकतंत्री वीणा द्वारा मोक्ष प्राप्ति बताई है।

बिना पर्दे वाले वाद्य जैसे सारंगी, सरोद इत्यादि वाद्यों में जिस प्रकार श्रुतिज्ञान व स्वरज्ञान के आधार पर स्वरों को उत्पन्न किया जाता है, उसी प्रकार से एकतंत्री वीणा में भी स्वरों की अभिव्यक्ति होती होगी। भरत के पश्चात् ही एकतंत्री वीणा का महत्व बढ़ने लगा। सोमेश्वर, पार्श्वदेव एवं शार्ङदेव सभी ने एकतंत्री का सर्व वीणाओं में प्रधान माना है।

आलापिनी – शार्ङदेव ने आलापिनी से सम्बन्धित लक्षण बताते हुए कहा है कि इस वीणा में दण्ड नौ मुठ्ठी का होना चाहिए। दो अंगुल की परिधि वाली गोलाई में हो। दण्ड की विशेषता बताते हुए कहा है– दण्ड, चिकना, समान, अच्छा गोलाई में हो।

शार्ङदेव के अनुसार इस वीणा में भेड़, बकरी की आँत की तंत्री बनाई जाए जो पतली और चिकनी, समआकार और मजबूत हो। सोमेश्वर ने भेड़ से निर्मित तंत्री के लिए कहा है जो कि सूक्ष्म, कोमल, दृढ़ और समान हो। सोमेश्वर, शार्ङदेवव पार्श्वदेव के आलापिनी वर्णन में 'बिन्दू' क्रिया के अन्तर्गत मन्द्र, मध्य, तार स्थान का उल्लेख किया है। इससे यह तो स्पष्ट है कि इस वीणा में मन्द्र, मध्य व तार स्थानों के स्वरों का वादन सम्भव था।

किन्नरी वीणा – किन्नरी वीणा का पर्दे वाले वाद्यों के साथ एक निकट सम्बन्ध है। सर्वप्रथम पर्दे वाली वीणा के रूप में मतंग की किन्नरी वीणा को जाना जाता है। शिल्पकृतियों के माध्यम से ज्ञात होता है

कि पर्दे वाले तंत्री वाद्यों का प्रचार लगभग आठवीं शताब्दी के आस–पास देखने को मिलता है। मतंग को किन्नरी वीणा के अविष्कारक के रूप में जाना जाता है। शार्ङदेव ने 'संगीत रत्नाकर' में किन्नरी का लक्षण बताते हुए कहा है कि यह दो प्रकार की होती है– लघ्वी और बृहती (छोटी–बड़ी)।

निशंक वीणा – लम्बाई में चार हाथ लम्बी तंत्री बाँधें। उसके प्रान्त के अतिरिक्त अंश में कुछ ऊपर प्रान्त में बाँधें और अन्य प्रान्त के द्वारा आधे हाथ बराबर हो। जिसकी मोटाई आलापिनी के तुल्य हो, नीचे स्थित काष्ठ में आगे से दो अंगुल छोड़कर तंत्री बाँधे। फिर, उस तंत्री और दारूणी को तूंबे में बाँधकर वीणावादन करें। इस प्रकार के लक्षण वाली निशंक वीणा होती है। इस निशंक वीणा के द्वारा सब स्वरों की अभिव्यक्ति होती है।

2.4.3 आधुनिक कालीन तत् वाद्य – आधुनिक युग में वीणा शब्द का प्रयोग वाद्य विशेष के लिए नहीं होता है। उनके अलग–अलग नामकरण आज हो चुके हैं। आधुनिक कालीन तत् वाद्यों में आज प्रमुख रूप से निम्नलिखित वाद्य प्रचलित हैं, जैसे– रूद्रवीणा, विचित्र वीणा, सितार, सुरबहार, सरोद, सारंगी, वायलिन, इसराज, स्वर मण्डल, मेंडोलिन, तानपूरा, गिटार, गोट्टू वाद्यम् आदि।

रूद्र वीणा (बीन) – रूद्र वीणा किन्नरी वीणा का ही परिष्कृत रूप है। प्राचीन चित्रों में किन्नरी वीणा एवं रूद्र वीणा की आकृति में काफी समानता दिखाई देती है। प्राचीन काल में सभी तत् वाद्यों को वीणा कहा जाता था। आधुनिक समय में इस वीणा के दो रूप देखने को मिलते है। 1. उत्तर भारतीय वीणा 2. दक्षिणात्य वीणा

इसे नारद वीणा, सार वीणा, काधे की बीन आदि नामों से भी सम्बोधित किया जाता है।

विचित्र वीणा – विचित्र वीणा का उल्लेख प्राचीन ग्रन्थों में नहीं मिलता है। अतः इसे आधुनिक वाद्य कहा जा सकता है। इसका वादन केवल उत्तर भारत में होता हैं। वर्तमान में इसका प्रचलन होता जा रहा है। इसे बट्टा बीन के नाम से भी जाना जाता है। इसका विकास प्राचीन एकतंत्री वीणा के आधार पर हुआ है।

सितार – आधुनिक युग का सर्वाधिक प्रचलित तत् वाद्य 'सितार' है। सारिका युक्त वाद्यों के विकास की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप सितार का विकास हुआ। सितार की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न मत हैं। अमीर खुसरो द्वारा इसका अविष्कार माना गया। परन्तु यह निराधार है। क्योंकि स्वयं अमीर खुसरो ने स्वयं सितार वाद्य का उल्लेख नहीं किया हैं। कुछ विद्वान सितार को प्राचीन त्रितंत्री वीणा का परिवर्तित रूप मानते हैं। पं0 शार्ङदेव ने इस वीणा का उल्लेख किया है।

सुरबहार – सुरबहार उत्तरी भारत के तंत्री वाद्यों में एक है तथा प्राचीन सारिका युक्त वाद्यों की परम्परा का ही विकसित रूप है। इसका आकार सितार से बड़ा होता है तथा तार भी सितार की तुलना में मोटे होते हैं। इसकी ध्वनि सितार की तुलना में गम्भीर होती है।

सरोद – कुछ विद्वानों ने सरोद वाद्य का विकास चित्रा वीणा से माना है। अमरावती, गुप्तकाल तथा अंजता आदि की विभिन्न शिल्पाकृतियों से हमें चित्रा वीणा की आकृति सरोद के समान दिखाई देती है। इस आधार पर इससे इसका सम्बन्ध जोड़ना उचित है। सरोद को रबाब एवं सुरसिंगार का विकसित रूप कहा जा सकता है। रबाब में चमड़े की खाल मढ़ी जाती है तथा सुरसिंगार में चमड़े के स्थान पर लकड़ी की तबली लगाई जाती है। सरोद वाद्य में चमड़े की तबली तथा स्टील की प्लेट के प्रयोग से गूंज में और वृद्धि हुई है।

सारंगी – सारंगी वाद्य की परिकल्पना रावणहस्त वीणा से की गई है। गज से बजाये जाने वाले वाद्यों की परम्परा में पिनाकी तथा निशंक वीणा का उल्लेख मिलता है। इसी के आधार पर गज वाद्यों का विकास हुआ है। शास्त्रीय संगीत के साथ संगत करने हेतु वर्तमान में यह सबसे महत्वपूर्ण वाद्य है। सारंगी लोक वाद्य के रूप में भी भारत के विभिन्न भागों में देखने को मिलती है।

वायलिन – वायलिन विदेशी वाद्य होते हुए भी भारतीय शास्त्रीय संगीत में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना चुका है। इसका मुख्य कारण है कि इस वाद्य में भारतीय संगीत की विशेषताओं को समाहित करने की क्षमता है। इसका भारतीय नाम बेला भी है। यह गज से बजाने वाले वाद्यो की श्रेणी में आता है।

इसराज

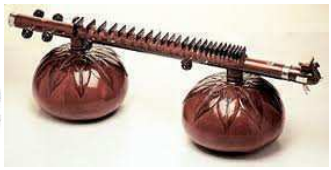

रूद्रवीणा

सन्तूर

सारंगी

सरोद

सितार

विचित्र वीणा

तत् वाद्य वर्गीकरणः तत् वाद्य होते हुए भी मिजराब, जवा, बट्टे, गज, वस्तु के आघात से अँगुलियों द्वारा तंत्री को छेड़ना, इन प्रक्रियाओं से ध्वनि की तीव्रता उसकी जाति एवं वादन की तकनीक में भिन्नता आ जाती है।

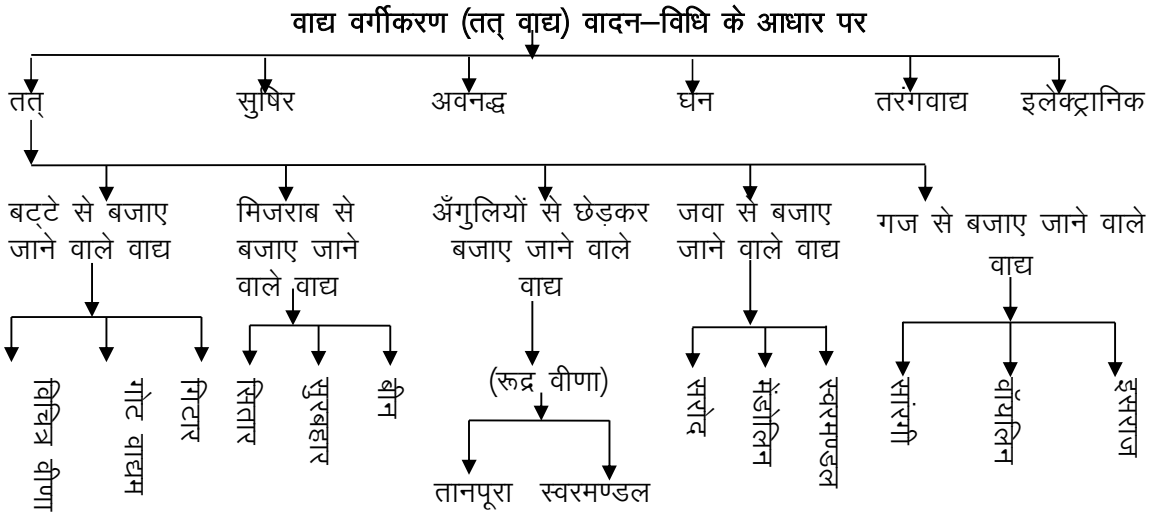

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्नः–

(i) प्राचीन कालीन गात्र वीणा के विषय में बताइये।

(ii) मध्यकालीन एकतंत्री वीणा के विषय में बताइये।

(iii) सितार के विषय में संक्षेप में लिखिये।

ख) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :–

(i) चित्रा वीणा ..... वाद्यों की श्रेणी में आती है।

(ii) ..... वीणा सबसे प्रथम पर्दे वाली वीणा मानी जाती है।

(iii) सितार को प्राचीन ..... वीणा का परिवर्तित रूप मानते हैं।

2.5 सुषिर वाद्यों की उत्पत्ति एवं विकास

मुख वायु द्वारा बजाए जाने वाले वाद्य 'सुषिर वाद्य' कहलाते हैं। इन वाद्यों में वायु के दबाव को घटा–बढ़ाकर स्वर को ऊँचा–नीचा किया जाता है। 'शुषि' का अर्थ है 'छिद्र'। भारत में वंशीवादन की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। सिन्धु सभ्यता में भी वंशी के प्रयोग के सम्बन्ध में उल्लेख मिलते हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद में वंशीवादन का स्पष्ट उल्लेख है। भरत ने 'नाट्यशास्त्र' में सुषिर वाद्य के लक्षण इस प्रकार बताए हैं। बुध जन बाँस से निर्मित या रन्ध्रयुक्त वाद्य को सुषिर वाद्य जानें, जिसकी स्वर, ग्राम आदि में होने वाली विधियाँ वीणा के समान होती हैं।

वंशी भी प्रकृति से प्राप्त वाद्य का उदाहरण है। आधुनिक विद्वानों की मान्यता रही है कि मानव ने शिकार या घूमते समय बाँस की शाखाओं से कुछ मधुर स्वर सुने, बाद में उसने जब इस ओर ध्यान दिया तो ज्ञात हुआ पक्षियों द्वारा खोखले किए गए छिद्रों से जब हवा निकलती थी तो एक प्रकार का कम्पन करती थी, जिससे नाद अथवा ध्वनि निकलती थी। इस प्रकार मानव को वंशी निर्माण की प्रेरणा प्राप्त हुई।

सुषिर वाद्यों का महत्व तत् वाद्यों के समान ही है, क्योंकि दोनों का प्रयोजन एक ही है। संगीत के स्वर भाग में 'तत्' और 'सुषिर' वाद्यों का उपयोग है। 'तत्' और 'सुषिर' वाद्यों में ही स्वर के परम प्रयोजन 'रंजन' की सृष्टि होती है।

2.5.1 प्राचीन कालीन सुषिर वाद्य – घन वर्ग के वाद्यों के पश्चात सुषिर वाद्यों का प्रादुर्भाव हुआ होगा। क्योंकि सुषिर वाद्य प्रकृति द्वारा प्रदत्त नरसल, श्रृंग या जानवरों की हड्डी आदि से निर्मित होते थे। मुँह से सीटी उत्पन्न करने की प्रक्रिया सुषिर वाद्यों की जननी मानी जा सकती है। मानव ने कौतुहल वश वृक्ष के पत्तों तथा लकड़ी के दो टुकड़ों को मुँह में लगाकर ध्वनि निकालने का प्रयास किया होगा। विकास के प्रथम चरण में मानव ने वंश, शंख, श्रृंग में फूँक मारकर ध्वनि निकालने का प्रयास किया होगा। सुषिर वाद्यों में हमें प्रारम्भ में बांसुरी एक विकसित रूप में प्राप्त होती है। जिसे वेणु, बंशी, मुरली आदि अनेक लोकप्रिय नामों से जाना जाता रहा है।

मोहनजोदड़ो की खुदाई से प्राप्त खिलौने में चिड़िया के आकार की मिट्टी से बनी सीटी, वेदों में नाड़ी, वेणु, तुणव, शंख आदि सुषिर वाद्यों का कई स्थानों पर उल्लेख मिलना इस बात की पुष्टि करता है कि उक्त काल में भी सुषिर वाद्यों का प्रचलन रहा होगा। प्राचीन कालीन सुषिर वाद्यों में प्रमुख रूप से निम्न वाद्यों का उल्लेख प्राप्त होता है–

नाड़ी – वंशी के रूप में नाड़ी वाद्य का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। नाड़ी शब्द से एक नलिका के रूप का आभास होता है जिससे स्पष्ट होता है कि यह एक सुषिर वाद्य है जो फूँककर बजाया जाता था।

तुणव – वैदिक काल में तुणव का उल्लेख इस प्रकार मिलता है। 'तुणव बाद की संहिताओं और ब्राहमणों में यह एक वाद्य यंत्र सम्भवतः वंशी का द्योतक है।' तुणव एक प्रकार का वंश वाद्य रहा होगा। परन्तु इसके अतिरिक्त इसमें छिद्रों की संख्या तथा वादन प्रक्रिया सम्बन्धी कोई भी जानकारी उपलब्ध नहीं है।

बकुरा – बकुरा को सुषिर वाद्य के रूप में लिया है। शंख को बकुरा का परिवर्तित रूप माना है। वैदिक ग्रन्थों में वर्णित वर्णन तथा अन्य सभी विद्वानों के दृष्टिकोण के आधार पर बकुरा को सुषिर वाद्य मानना उचित होगा।

गोमुख – गोमुख के नाम से ही विदित होता है कि यह सुषिर वाद्य गौ के मुख के समान होता होगा।

श्रृंग – यह भैस के श्रृंग से बनाया जाता है जो कि हाथी की सूँड़ के समान निर्दोष, कोमल, सुघटित होता है। इसके मूल में बैल के सींग को धतूरे (कुन्द) पुष्प के समान आठ अंगुल खण्ड का रखना चाहिए। इसके अग्रभाग में दो अंगुल से परिमित छेदन करके फूत्कार रन्ध्र बनाकर तुथु (तुम्बु) इस शब्द के ग्वाले के झुण्ड में बजाया जाता है। यह वाद्य ध्वान गम्भीर कहा जाता है।

शंख – शार्ङदेव शंख का लक्षण कहते हैं "जिसकी नाभि उत्खात(गहरी) हो। उस प्रकार के शंख का बारह/ग्यारह अंगुल का शिखर धात से मधु–उच्छिष्ट से करना चाहिए। मूल से आरम्भ करके आगे तक दिखाई देती हुई आकृति क्रम से बड़ी होती हुई प्रमाण की होती है। शिखर के मुख में रन्ध्र आधे अंगुल प्रमाण का होता है। बीच में मध्य भाग माष (उड़द) के प्रमाण का होना चाहिए।"

महाभारत काल में शंख का विशेष महत्व रहा हैं। पाण्डव एवं कृष्ण के पास अपनी–अपनी विशिष्टता को बताने के लिए अपना शंख था।

रामायण एवं महाभारत काल में भी विभिन्न सुषिर वाद्यों का उल्लेख प्राप्त होता है। जैसे– शंख, वेणु, गोविषाण आदि। बौद्ध एवं जैन ग्रन्थों में तूर्य, कुराल, श्रृंग, शंख आदि सुषिर वाद्यों का उल्लेख प्राप्त होता है।

वंश – शार्ङदेव ने सुषिर वाद्यों का वर्णन करते समय सर्वप्रथम वंश का वर्णन किया है। शार्ङदेव के अनुसार वंशी खैर की लकड़ी, हाथी दाँत, चन्दन, रक्त चन्दन, लोहे, काँसे, चाँदी या सोने की बनाई जाती है। यह गोलाकार, चिकनी तथा गाँठरहित हो। इस रन्ध्र का प्रमाण छोटी अँगुली का व्यास है। यह रन्ध्र पूरी बाँसुरी में एक–सा रहता है। सिर स्थल बन्द रहता है। दो, तीन या चार अंगुल की दूरी पर अँगुली प्रमाण का वायु पूरित करने के लिए छेद करना चाहिए। इसे शार्ङदेव ने मुखरन्ध्र कहा है।

नाट्यशास्त्र में भरत ने वंश में चुतःश्रुतिक, त्रिश्रुतिक तथा द्विश्रुतिक स्वरों को स्पष्ट बताया है। भरत ने यशस्वी वंशवादक को बलवान अर्थात शक्तिशाली श्वास वाला, अवहित बुद्धि अर्थात् एकाग्र बुद्धिवाला, गीत तथा ताल का ज्ञान रखने वाला, अच्छे गाने वाला, श्रावक, मधुर, स्निग्ध तथा दृढ़ पाणि अर्थात् स्वर स्थान में अंगुलि का अचल या स्थिर रहना परम आवश्यक माना है।

2.5.2 मध्यकालीन सुषिर वाद्य – मध्यकालीन समस्त ग्रन्थों में निम्नलिखित सुषिर वाद्यों का उल्लेख प्राप्त होता है :–

पाव – शार्ङदेव ने 'पाव' के विषय में वर्णन करते हुए कहा है, वेणु से बनाया हुआ नौ अंगुल से परिमित वंश के पत्तों से ढका हुआ पाव होता है। यह लोकरीति से बजाया जाता है।

पविका – शार्ङदेव ने पाविका के लक्षण इस प्रकार बताए हैं। यह वेणु से बनी हुई बारह अंगुल दीर्घ, एक अँगूठे जितनी मोटी, गर्भ में कनिष्का अँगुली के अग्र भाग जितनी रन्ध्र को आश्रित पाविका होनी चाहिए। इसमें कनिष्का अँगुली जितनी स्थूलता से फूत्कार रन्ध्र करना चाहिए। पाँच रन्ध्र स्वरों के उत्पादक होते हैं। अनेक प्रकार के वादन रागयुक्त और वेगकारी होते हैं।

मुरली – 'संगीत रत्नाकर' में मुरली का वर्णन इस प्रकार मिलता है। यह दो हाथ से अधिक विस्तार वाली मुख रन्ध्र से युक्त तथा चार स्वर रन्ध्र वाली होती है तथा इसकी ध्वनि मधुर होती है।

मधुकरी – शार्ङदेव ने मधुकरी का वर्णन इस प्रकार किया है–श्रृंग के द्वारा बनायी गयी अथवा काहला के समान लकड़ी से बनायी गयी अट्ठाईस अंगुल दीर्घ की मधुकरी होती है। तुबरी (आडकी) के बीज के समान उसका मुख रन्ध्र बनाया जाना चाहिए। उस मुख रन्ध्र से चार अंगुल छोड़कर सात रन्ध्र करने चाहिए। मधुर नाद की सृष्टि के लिए यव के समान स्थूल चार अंगुल ताँबे की बनी हुई नलिका मुख रन्ध्र में स्थापित करनी चाहिए।

काहला – शार्ङदेव ने काहला के विषय में कहा है– ताँबे अथवा चाँदी अथवा सोने से मध्य में छिद्र वाले धतूरे पुष्प के आकार के मुख वाले तीन हाथ जितनी दीर्घ काहला हा हू वर्ण से युक्त वीर–विरूद के उच्चारण के लिए लोक में बजायी जाती है। पार्श्वदेव ने भी सोमेश्वर एवं शार्ङदेव के कथनों की पुनरावृत्ति की है। पार्श्वदेव द्वारा वर्णित सुषिर वाद्यों के अध्ययन करने पर हम यह पाते हैं कि पार्श्वदेव ने वाद्यों के विषय में सोमेश्वर एवं शार्ङदेव के समान विस्तार से चर्चा नहीं की है। सुषिर वाद्यो के अन्तर्गत केवल काहला का वर्णन किया है।

पावो

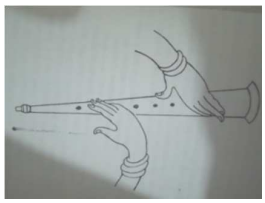

मधुकरी

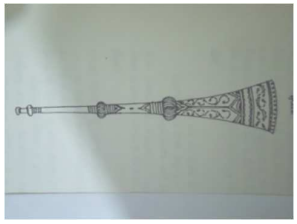

काहला

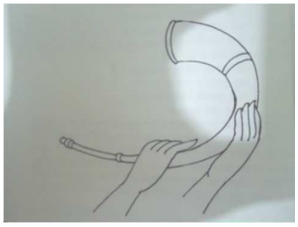

श्रृंग

2.5.3 आधुनिक कालीन सुषिर वाद्य – वर्तमान समय में प्रमुख रूप से निम्नलिखित सुषिर वाद्य प्रचलन में है, जैसे– वंशी, शहनाई, नादस्वरम्, सुन्दरी, हारमोनियम, क्लेरियोनेट आदि।

वंशी – वर्तमान समय में इसको बाँसुरी के नाम से जाना जाता है। संगीत के प्राचीन वाद्यों में 'वंशी' एक है। वंशी के निर्माण तथा आकार प्रकार में अन्य वाद्यों की तुलना में सबसे कम परिवर्तन हुआ। वंशी के विभिन्न रूप, उनकी लम्बाई व छिद्रों की संख्या के आधार पर देखने को मिलते हैं। आधुनिक बाँसुरी के दो प्रकार प्रचलित है–

1. सीधी बाँसुरी एवं 2. आड़ी बाँसुरी

आधुनिक वंशी वादन में आड़ी वंशी का वादन अधिक प्रचलित है। वंशी वादन में स्वर की सही अनुभूति होना परम आवश्यक है। वायु अथवा फूँक के कम ज्यादा होने से इसमें सूक्ष्म स्वर का अन्तर रह जाता है।

शहनाई – सुषिर वाद्यों में शहनाई आज एक महत्वपूर्ण वाद्य के रूप में जाना जाता है। मधुकरी नामक वाद्य से इसकी उत्पत्ति मानी जाती है। पश्चिमी का ओबो वाद्य शहनाई के समान ही होता है। कुछ लोग शहनाई को फारसी वाद्य भी मानते हैं। शहनाई में ध्वनि उत्पत्ति का सिद्धान्त वही है जो वंशी में रहता है। इसकी मुख नलिका वंशी से भिन्न होती है। बाँसुरी को फूँक द्वारा बजाया जाता है। शहनाई की रीड को होठ के बीच में रखकर बजाते हैं। बनावट में साधारण वाद्य है तथा लकड़ी का बना होता है।

सुन्दरी – एक ही लकड़ी में सुन्दरी वाद्य का पूरा भाग बना होता है। इसमें स्टील के प्याले के स्थान पर लकड़ी का प्याला होता है। यह शहनाई से छोटा होता है। सुन्दरी का वादन तार सप्तक में अधिक होता है तथा मन्द्र सप्तक में इसका वादन नहीं हो पाता। यह महाराष्ट्र में अत्यन्त प्रचलित है।

हारमोनियम – वर्तमान में सबसे प्रचलित वाद्यों में हारमोनियम का स्थान है। चाहे शास्त्रीय संगीत हो या सुगम संगीत सभी की संगत में हारमोनियम की मुख्य भूमिका है।

वंशी(बाँसुरी)

हारमोनियम

शहनाई

सुषिर वाद्य–फूँक के आधार पर

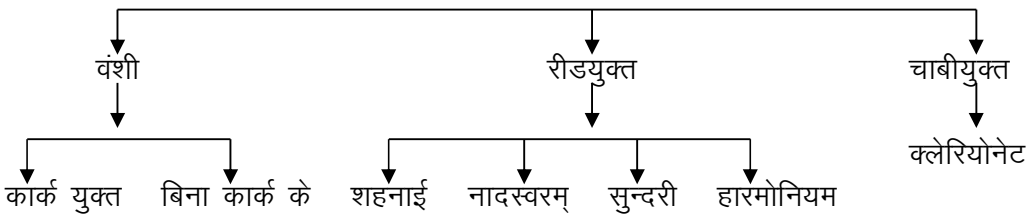

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्नः–

(i) आधुनिक कालीन सुषिर वाद्यों में सबसे प्रमुख वाद्य कौन सा है?

ख) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–

(i) शहनाई ..... वाद्यों की श्रेणी में आता है।

(ii) ..... सुषिर वाद्य ताँबे अथवा चाँदी का बना होता है।

(iii) वंशी वाद्य का निर्माण .....से होता है।

ग)सत्य/असत्य बताइये :–

(i) पाव सुषिर वाद्यों की श्रेणी में आता है।

(ii) श्रृंग वाद्य भैंस के सींग से बनता है।

2.6 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप जान चुके हैं कि संगीत में स्वर वाद्यों की परम्परा का विकास विभिन्न कालों में निरन्तर होता आया है। वाद्यों के ऐतिहासिक स्वरूप को भी आप क्रमबद्ध स्पष्ट रूप में जान चुके हैं। वाद्यों का जो आज स्वरूप दिखाई देता है, वह क्रमशः बहुत वर्षों के सतत प्रयास की प्रक्रिया का फल है। प्रारम्भिक अवस्था में वाद्य संरचना की दृष्टि से साधारण थे। धीरे–धीरे क्लिष्टता आती गई। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि विभिन्न कालों में वर्णित वाद्यों के अध्ययन से स्पष्ट है कि वाद्यों का उपयोग किसी न किसी रूप में मानव की मनोवैज्ञानिक क्रियाओं के अधिक समीप रहा है। वाद्य अधिकांशतः सामूहिक रूप में प्रयुक्त होते रहे हैं। स्वतंत्र वादन की परम्परा का विकास शनै–शनै हुआ है। भारतीय स्वर वाद्यों के अन्तर्गत तत् वाद्यों में वीणा सबसे प्रमुख है। गीत का अनुकरण अथवा स्वतंत्र वादन में प्रयुक्त वीणाएँ स्वर वीणा कहलाती हैं। सुषिर वाद्यों का महत्व तत् वाद्यों के समान है क्योंकि दोनों का प्रयोजन एक ही है। तत् वाद्यों में विपंची, एकतंत्री, किन्नरी आदि का महत्व समय के साथ कम हो गया परन्तु सुषिर वाद्यों में वंशी का एकछत्र साम्राज्य सदा से रहा है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप तत् एवं सुषिर वाद्यों के क्रमबद्ध विकास को भली–भांति जान चुके हैं।

2.7 शब्दावली

1. **नादात्मक** – संगीत के अन्तर्गत मधुर ध्वनि को नाद कहा जाता है। सम्पूर्ण संगीत नाद पर आश्रित है। नादात्मक का अर्थ है–मधुर स्वर से परिपूर्ण ध्वनि।

2. **द्विश्रुतिक, त्रिश्रुतिक एवं चतुर्श्रुतिक** – भारतीय शास्त्रीय संगीत में सात स्वर विभिन्न श्रुतियों पर स्थापित माने गये हैं। प्राचीन समय से 22 श्रुतियों का प्रचलन था। प्रत्येक स्वर की श्रुतियाँ भिन्न–भिन्न हैं। जैसे– षड़ज एवं पंचम, चतुर्श्रुतिक है; गन्धार एवं निषाद, त्रिश्रुतिक तथा धैवत एवं ऋषभ, द्विश्रुतिक है।

3. **आहत नाद** – किसी वाह्य वस्तु के घर्षण एवं प्रहार से उत्पन्न नाद आहत नाद कहलाता है। जैसे तानपुरे के तार पर प्रहार से नाद उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त अनाहत नाद वह है जिससे स्वयंभू स्वरों की उत्पत्ति होती है।

4. **श्रुति वीणा, स्वर वीणा** – श्रुति वीणा द्वारा श्रुतियों को दर्शाया जाता है और सम्पूर्ण गीत रचना जो स्वरों पर आधारित हो वह स्वर वीणा के द्वारा दर्शायी जाती है।

5. **ग्ज** – अनेक तत् वाद्य गज से बजाये जाते हैं, जैसे सारंगी, वायलिन। गज घोड़े के बालों का बना होता है। लकड़ी के दोनों किनारों पर घुन्टी लगाकर छेद करते हैं, जिसमें घोड़े के बालों को कसा जाता है।

2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.3 की उत्तरमाला :–

ख)सत्य/असत्य बताइये :–

(i) असत्य

(ii) असत्य

(iii)सत्य

2.4 की उत्तरमाला :–

ख)रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :–

(i) तत्

(ii) किन्नरी

(iii) त्रितंत्री

2.5 की उत्तरमाला :–

ख)रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–

(i) सुषिर

(ii) काहला

(iii) बाँस

ग)सत्य/असत्य बताइये :–

(i) पाव सुषिर वाद्यों की श्रेणी में आता है।

उत्तरः सत्य

(ii) श्रृंग वाद्य भैस के सींग से बनता है।

उत्तरः सत्य

2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सेठ, डॉ0 रेखा, (2002), *भारतीय तंत्र वाद्यों की उत्पत्ति एवं विकास,* ईशान प्रकाशन, मेरठ।
2. पंराजपे, डॉ0 शरच्चन्द्र श्रीधर, (1969), *भारतीय संगीत का इतिहास,* चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी।
3. जायसवाल, डॉ0 राधेश्याम, (1983), *भारतीय सुषिर वाद्यों का इतिहास,* वाराणसेय संस्कृत संस्थान, वाराणसी।

2.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. जैन, भानु कुमार, (1983), *हिन्दुस्तानी संगीत में तंतु वाद्य,* संगीत महाविद्यालय, भोपाल।
2. मिश्र, पं0 लालमणि, (1973), *भारतीय संगीत वाद्य,* भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।

2.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. वाद्यों की उत्पत्ति को समझाते हुए तत् वाद्यों के विकास क्रम को समझाईये।
2. सुषिर वाद्यों की उत्पत्ति एवं विकास के सम्बन्ध में एक निबन्ध लिखिये।

इकाई 3 – तंत्र वाद्य के घराने

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 घराना तथा वादन शैली का अर्थ
3.4 तंत्र वाद्य के प्रमुख घराने
3.4.1 तानसेन का घराना अथवा सैनी घराना
3.4.2 रामपुर के बीन (रूद्रवीणा) वादकों का घराना
3.4.3 बीनकार बंदे अली खाँ का घराना
3.4.4 मसीत खाँ का घराना
3.4.5 इमदाद खाँ का घराना
3.4.6 मुश्ताक़ अली खाँ का घराना
3.4.7 सरोदिया गुलाम अली खाँ बगंश का घराना
3.4.8 अलाउद्दीन खाँ का घराना अथवा मैहर घराना
3.4.9 विघ्नेश्वर शास्त्री का वायलिन घराना
3.4.10 शम्भूनाथ मिश्र का सारंगी घराना
3.5 सारांश
3.6 शब्दावली
3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची
3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर, (एम0पी0ए0एम0आई0–502) पाठ्यक्रम की तीसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के पश्चात आप बता सकते हैं कि वाद्य कितने प्रकार के होते हैं तथा तंत्र वाद्य के अन्तर्गत किन वाद्यों का समावेश होता है।

प्रस्तुत इकाई में तंत्र वाद्य के घरानों की विशेषताओं एवं उनके प्रमुख संगीतज्ञों का संक्षिप्त परिचय एवं वादन शैली की चर्चा की गई है। तंत्र वाद्य के प्रमुख घराने एवं वादन शैली(बाज) तथा शिष्य परम्परा बहुत विस्तृत है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप तंत्र वाद्यों के विभिन्न घरानों की शिष्य परम्परा को जानेंगे तथा उनकी भिन्न–भिन्न वादन शैली का विश्लेषण कर सकेंगे। भारतीय संगीत के अन्तर्गत बहुत से तंत्रीवादक ऐसे हैं जो अनेक वाद्यों को बजाने में निपुण रहे हैं। उनके विषय में भी आप जान सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप–

- बता सकेंगे कि तंत्री वाद्य में घरानों का निर्माण किस प्रकार हुआ।
- समझ सकेंगे की तंत्री वाद्य के एक घराने में एक से अधिक वाद्यों को बजाने वाले विशिष्ट संगीतज्ञ हैं तथा विभिन्न घरानों के संस्थापक संगीतज्ञ किस प्रकार विशिष्ट वादन शैली के कारण प्रसिद्धि पाते हैं तथा उनकी एक लम्बी शिष्य परम्परा होती है।
- विभिन्न घरानों की वादन शैली को श्रेणीबद्ध कर सकेंगे अर्थात प्रत्येक घराने में जो शैलीगत विशेषताएँ हैं जिनसे घराने अपना एक अलग अस्तित्व प्राप्त करते हैं, बता सकेंगे।
- वर्तमान में इतने अधिक तंत्र वादकों के विषय में तथा उनकी प्रस्तुति एवं अभिव्यक्ति में अन्तर कर सकेंगे क्योंकि आप उनके विशिष्ट घरानों की शैली को जान चुके होंगे।
- समझ सकेंगे कि कलाकारों की शिक्षा, साहित्यिक कार्य, शिष्य परम्परा तथा वादन विशेषताओं का क्या स्वरूप है।

3.3 घराना तथा वादन शैली का अर्थ

संस्कृति के विकास के साथ ही संगीत का निरन्तर विकास होता आया है। भारतीय संस्कृति में संगीत को सदैव आदर की दृष्टि से देखा जाता है। संगीत की परम्परा घरानों के रूप में निरन्तर चली आ रही है। सामान्य रूप से घराना शब्द का अर्थ कुल, वंश, परिवार, गोत्र, किसी विद्या के लिए प्रसिद्ध कुल आदि होता है। संगीत में भी घराना शब्द का प्रयोग प्रचलित है। डॉ0 एस0 परांजपे ने 'संगीत बोध' में लिखा है कि, "घराना एक विशिष्ट गायन शैली, वादन शैली या नृत्य शैली या 'रीति' जिस कलाकार के द्वारा प्रवर्तित होती है, वे ही उसके संस्थापक माने जाते हैं और उन्हीं के नाम से अथवा निवास स्थान से घराने का नामकरण होता है।" घराने का सूत्रपात तब होता है, जब घराने की शैली में कोई विलक्षणता हो या कोई अनोखा तत्व हो। शैली का अनोखापन घराने का विशिष्ट लक्षण होता है।" इस कथन से स्पष्ट है कि संगीत में घराना शब्द शैली को दर्शाता है। वाद्य संगीत में भी घरानों का विशेष महत्व है। वाद्य संगीत में बजाने की रीति को चलती भाषा में 'बाज' कहा जाता है। बाज का अर्थ बजाने की रीति अथवा स्टाइल। बाज शब्द एक प्रकार की विशिष्ट शैली का ही द्योतक है। शैली और बाज एक–दूसरे के पर्याय हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि घराना शब्द जहाँ एक ओर वंश परम्परा का बोध कराता हैं, वहीं दूसरी ओर विशिष्ट शैली अर्थात् बाज का भी बोध कराता है। किसी भी नई विलक्षण गायकी अथवा बाज का घराना अपने आप नहीं बन सकता। घराना बनने की भी एक शर्त होती है, जो अनिवार्य है। किसी घराने की शैली की सुव्यवस्थित परम्परा और उसके विशेष संगीत का क्रम ही उसे घराना बनने का अधिकार देते हैं। गायकों अथवा वादकों की कम से कम तीन या चार पीढ़ियों के बाद ही किसी घराने का जन्म हो सकता है और संगीत में प्रगति हो सकती है। एक घराने की विशेषता उसकी शैली में होती है और वह उसी से जाना जाता है। शैली ही उसकी प्रतिष्ठा की सूचक बन जाती है। एक घराने पर उसकी शैली की छाप पड़ी होती है, परन्तु शैलियों का जन्म घरानों के साथ ही हुआ। एक घराना ही किसी शैली का प्रारम्भकर्ता या जन्मदाता होता है और उसका उद्गम स्थान बन जाता है।

3.4 तंत्र वाद्य के प्रमुख घराने

संगीत के उत्तरोत्तर विकास के साथ ही वाद्य के घराने अथवा शैलियों का भी क्रमिक विकास हुआ। संगीतज्ञों की सृजनात्मक अभिव्यक्ति के द्वारा ही किसी विशेष वादन शैली का जन्म होता है। जैसा आप जान चुके है वादन की शैली को 'बाज' कहा जाता है। आचार्य भरत ने 'नाट्यशास्त्र' में तत्, अवनद्ध, घन एवं सुषिर चार प्रकार के वाद्यों का वर्णन किया है। तत् को ही 'तंत्रीकृत' कहा गया है। रूपात्मक सौन्दर्य और नादात्मक माधुर्य के कारण तंत्री वाद्य जनमानस में लोकप्रिय रहे हैं। शास्त्रीय संगीत के सिद्धान्तों की प्रामाणिकता को सिद्ध करने के लिए भी ये वाद्य बड़े उपयोगी सिद्ध हुए हैं। अतः स्पष्ट है कि प्राचीन काल से ही संगीत विद्या में तंत्री वाद्यों का अपना महत्वपूर्ण स्थान रहा है। आज भी संगीत की प्रत्येक विधा में तंत्री वाद्यों का विशेष महत्व है। क्योंकि इन वाद्यों का एकल वादन में तो प्रयोग होता ही है, साथ ही इनका संगत एवं वाद्यवृंद (आर्केस्ट्रा) में भी बहुतायत से प्रयोग होता है।

वर्तमान में गायन, वादन एवं नृत्य तीनों ही विधाओं में बहुत से घरानों का प्रचलन है। तंत्री वादकों के घराने भी स्थान विशेष और व्यक्ति विशेष के नाम पर ही प्रचलित दिखाई देते हैं। तंत्री वाद्य में सेनी घराने का नाम विशेष रूप से प्रसिद्ध है। सेनी घराने का सम्बन्ध तानसेन से बताया जाता है।

3.4.1 तानसेन का घराना अथवा सेनी घराना – तानसेन की वंश परम्परा को सेनिया नाम से जाना जाता है। तानसेन का घराना तीन भागों में विभक्त हो गया था। पहले घराने में थे– तानसेन के पुत्र तथा वंशीय लोग, दूसरे में थे– पुत्री तथा दामाद के वंशज और तीसरे में तानसेन के शिष्य सम्प्रदाय के कलाकार थे। तानसेन की पुत्र परम्परा एवं शिष्य परम्परा तो रही, परन्तु तानसेन की पुत्री के होने न होने पर विद्वानों के विभिन्न मत है।

(i) तानसेन की पुत्री अथवा दामाद का घराना – प्रसिद्ध विद्वान बृहस्पति के अनुसार बैजू के शिष्य बख्शू एवं बख्शू के शिष्य तानसेन थे। तानसेन की कन्या सरस्वती का विवाह राजा समोखन सिंह के पुत्र नौबत खाँ(मिश्री सिंह) से हो गया था। समोखन सिंह के पुत्र मिश्री सिंह अद्वितीय वीणा वादक थे। अनेक विद्वानों ने इस बात का खण्डन करते हुए कहा है कि तानसेन की पुत्री होना मात्र कल्पना थी। इस सम्बन्ध में कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता है।

(ii) तानसेन की पुत्र परम्परा – तानसेन के चार पुत्रों के नाम सूरत सेन, शरत सेन, तरंग सेन और विलास खाँ बताया गया है। सूरत सेन का पुत्र मोहन सेन को बताया है। विलास खाँ के केवल एक शिष्य मिसरी खाँ का वर्णन ही उपलब्ध है। विलास खाँ के दामाद लाल खाँ के पौत्र भूपत खाँ तक तानसेन की पुत्र वंश परम्परा चलती रही।

(iii) तानसेन की शिष्य परम्परा – तानसेन के शिष्य मियाचंद, रंग खाँ और बख्त खाँ हुए। लाल खाँ, तानसेन के पुत्र के दामाद के साथ तानसेन के शिष्य भी रहे। रंग खाँ की शिष्या बसन्ती रही। इस प्रकार कह सकते हैं कि तानसेन की पुत्री के सम्बन्ध में प्रमाणिक जानकारी नहीं मिलती है। यहाँ तक अबुल फज़ल द्वारा प्रस्तुत सूची में भी इसका उल्लेख नहीं है।

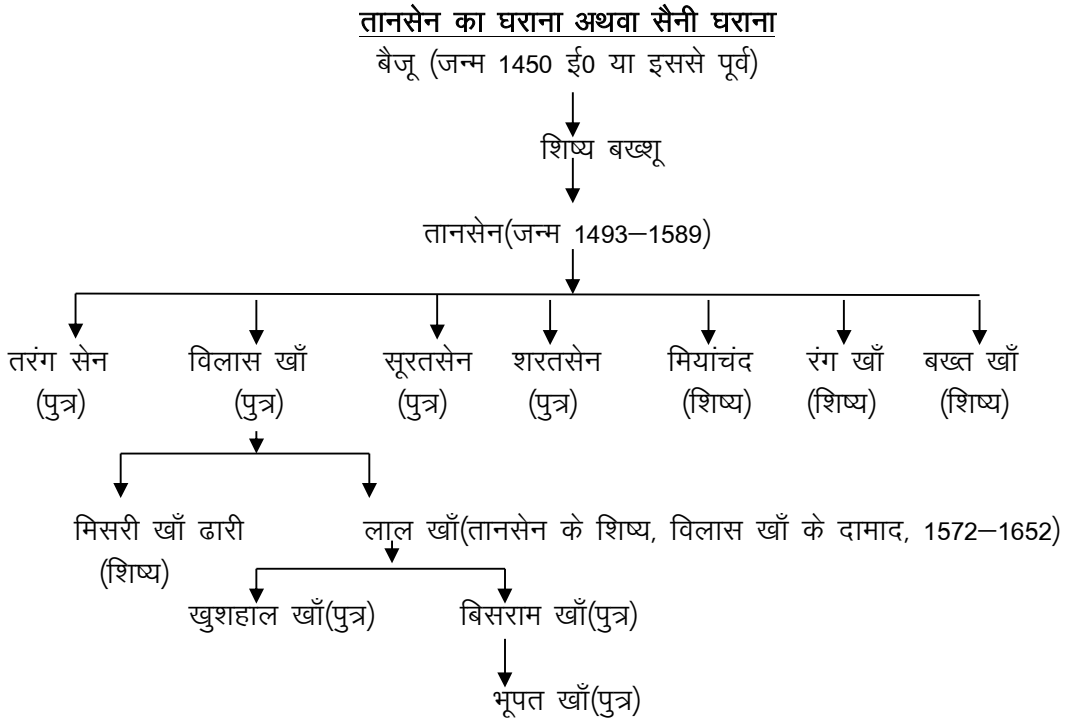

3.4.2 रामपुर के बीन (रूद्रवीणा) वादकों का घराना – उमराव खाँ एवं मोहम्मद अली खाँ नामक दो भाइयों द्वारा इस घराने की नींव पड़ी। उमराव खाँ प्रसिद्ध बीन वादकों में थे जो काशी नरेश की सभा में संगीतज्ञ रहे। इनकी वादन शैली में आलाप के बारह अंग प्रचलित रहे। इनके बड़े पुत्र अमीर खाँ ने बीन वादन परम्परा का निर्वाह करते हुए रामपुर दरबार में आश्रय पाया। इन्हें अनेक ध्रुपद भी कंठस्थ थे। इनके एकमात्र पुत्र वजीर खाँ थे। प्रसिद्ध बीनकार अमीर खाँ के पुत्र एवं उमराव खाँ के पौत्र होने के कारण संगीत विद्या वजीर खाँ को परम्परागत पैतृक सम्पत्ति के रूप में प्राप्त हुई। अपने वालिद के समान ही इन्हें भी बहुत से ध्रुपद याद थे। इन्हें रागों की अत्यन्त मार्मिक जानकारी थी। इनके तीन पुत्र नजीर खाँ उर्फ प्यारे मियां, नसीर खाँ और सगीर खाँ थे। इनकी विलक्षण प्रतिभा का पता इसी बात से चलता है कि इन्हें आलाप के अंगों के बड़े हिस्से में भोग–आभोग और छोटे हिस्से में लड़ंत जोड़ने का श्रेय दिया जाता है। इनके प्रमुख शिष्यों में नवाब हामिद अली, मैहर के बाबा अलाउद्दीन खाँ(सरोद), ग्वालियर के उस्ताद हाफ़िज अली खाँ(सरोद), मुहम्मद हुसैन, तारा प्रसाद घोष(ध्रुपद), प्रमथ नाथ बंदोपाध्याय आदि हुए। आचार्य बृहस्पति के अनुसार भातखण्डे जी वज़ीर खाँ के विधिवत् शिष्य हुए थे। वज़ीर खाँ ने अपने अन्तिम समय में अपने पौत्र दबीर खाँ को बीन वादन की तालीम प्रदान की। दबीर खाँ को संगीत की विद्या परम्परागत पैतृक सम्पत्ति के रूप में प्राप्त हुई। इन्होंने बीन की तालीम वज़ीर खाँ से प्राप्त की जो अपने युग के श्रेष्ठ बीन वादक थे। दबीर खाँ को बीन के साथ ध्रुपद की तालीम भी मिली थी। इनके शिष्यों में क्षमेन्द्र मोहन ठाकुर, कालिदास सान्याल, जितेन्द्र मोहन सेनगुप्त, राधिका मोहन मैत्र आदि कई कलाकार हुए।

रामपुर के बीन (रूद्रवीणा) वादकों का घराना

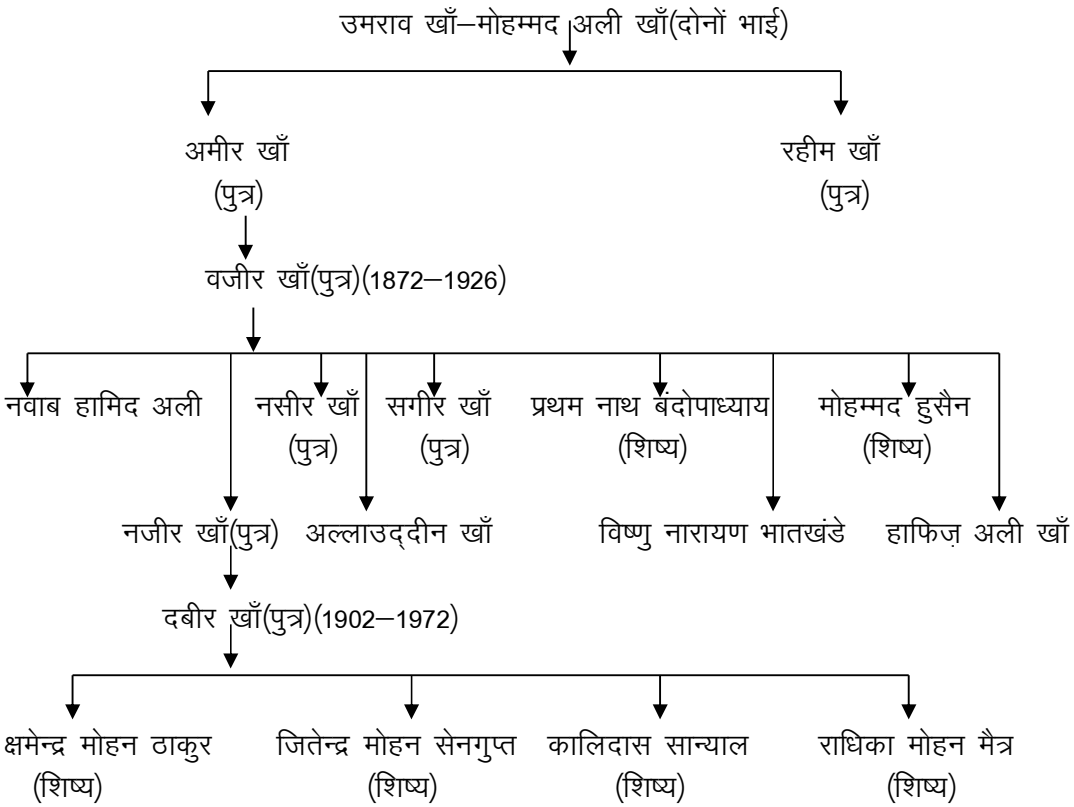

3.4.3 बीनकार बन्दे अली खाँ का घराना – बीन वादन में बन्दे अली खाँ विशिष्ट महारथ हासिल थी। इनकी विशिष्ट वादन शैली के कारण इनके नाम से इस घराने की नींव पड़ी। इनके दादा खाँ साहब रहीम अली दिल्ली दरबार में दरबारी गायक के रूप में रहते थे। इनके पिता का नाम गुलाम ज़ाकिर था। इनके घराने के सम्बन्ध में मतभेद पाया जाता है। एक मत के अनुसार सहारनपुर, दूसरे मत के अनुसार किराना और तीसरे मत के अनुसार हसन खाँ दाढ़ी से इनका सम्बन्ध बताया जाता है।

बन्दे अली खाँ ने अपने पिता और चाचा से संगीत सीखा। इन्हें फ़ैयाज हुसैन खाँ एवं बहराम खाँ से भी तालीम मिली। यह भी कहा जाता है कि वीणा वादन की शिक्षा इन्हें सदारंग के बड़े लड़के निर्मल शाह के द्वारा प्राप्त हुई। वीणा वादन की कला में वह उत्तरोत्तर उन्नति करते गए और जयपुर, ग्वालियर तथा इन्दौर दरबार में विशेष रूप से उन्होंने अपनी कला का प्रदर्शन बहुत समय तक किया।

वादन शैली – बंदे अली खाँ के बीन वादन में आलाप चारी की यह विशेषता थी कि उसमें मींड, घसीट, बहलाव और स्वर क्रियाओं के अन्य प्रदर्शन अति विलम्बित लय में होते थे और गमक का प्रयोग वे बहुधा द्रुत लय में करते थे। एक मत के अनुसार इन्होंने किसी को बीन की तालीम नहीं दी। अन्य मतानुसार मुराद खाँ को इनसे ही तालीम हासिल हुई। रजब अली भी इनके शागिर्द बताए जाते हैं।

उस्ताद रजब अली खाँ ने बीन हसन खाँ अंबेठे वालों से सीखी। ये दिलरूबा एवं सितार भी उत्तम बजाते थे। बीनकार बन्दे अली खाँ से भी इन्हें शिक्षा प्राप्त हुई थी, जयपुर के महाराजा राम सिंह भी इनके शागिर्द हुए थे तथा इनसे बीन सीखी थी। सितार की कुछ गतें भी इन्होंने रची थीं, जो इनके खानदान वालों को अभी तक याद हैं।

उस्ताद मुराद खाँ भी बन्दे अली खाँ के शागिर्द थे। बीनकारों में इनका कोई जोड़ न था। इनके पुत्र निसार हुसैन खाँ सितार बहुत अच्छा बजाते थे, जिनका कम उम्र में ही इनके रहते स्वर्गवास हो गया।

वादन शैली : मुराद खाँ बीन पर आलाप बजाने में जितने प्रवीण थे, उतनी ही खूबी से वह गतकारी और गायकी प्रस्तुत करने में भी कुशल थे। वह जब बीन बजाने बैठते तो उसमें लीन हो जाते। मुराद खाँ ने बीन पर ध्रुपद बाज न बजाते हुए ख्याल पद्धति से बीन वादन करके सैकड़ों महफिलों में अपना रंग जमाया। वह अपने आप को ख्यालिया बीनकार कहते थे। खाँ साहब ने अपने कई अच्छे शागिर्द तैयार किए, जिनमें इन्दौर के बाबू खाँ, अहमदाबाद के मुशर्रफ खाँ, धारवाड़ के कृष्णराव पालंदे तथा श्री कृष्णराव कोल्हापुरे के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

उस्ताद मुशर्रफ़ खाँ ने सम्पूर्ण हिन्दुस्तान के बीनकारों में अपना नाम स्थापित करने वाले मुराद खाँ से तालीम हासिल की। उस्ताद मुसाहब अली खाँ, मुशर्रफ़ खाँ के बड़े सुपुत्र थे और इन्होंने बीन की तालीम पिता से ही हासिल की थी। उस्ताद सादिक अली खाँ, मुशर्रफ़ खाँ के द्वितीय पुत्र थे। अपने पिता से ही उन्होंने शिक्षा प्राप्त की थी। बहुत दिनों तक झालावाड़ रियासत में रहे। अलवर के महाराज जयसिंह ने इन्हें जागीर एवं ईनाम आदि देकर अपने यहाँ रखा था।

उस्ताद असद अली खाँ को अपने पिता सादिक अली खाँ से बीन की शिक्षा मिली। यह अपने वादन में आलाप, जोड़, झाला बड़ी चयनदारी और क्रमबद्ध शैली से प्रस्तुत करते थे। इनका वादन ध्रुवपद की खंडार बानी शैली पर आधारित रहा। पंडित कृष्णराव कोल्हापुरे, उस्ताद मुराद खाँ के शिष्य थे। ये बीनवादक के रूप में प्रसिद्ध हुए। यह बड़ौदा संस्थान में बीनकार रहे। इनके बीनवादन में ख्याल अंग की प्रधानता थी। उस्ताद बाबू खाँ ने भी संगीत शिक्षा मुराद खाँ से प्राप्त की। ये इन्दौर महाराज के यहाँ दरबारी संगीतज्ञ के रूप में कार्यरत रहे।

बीनकार बन्दे अली खाँ का घराना

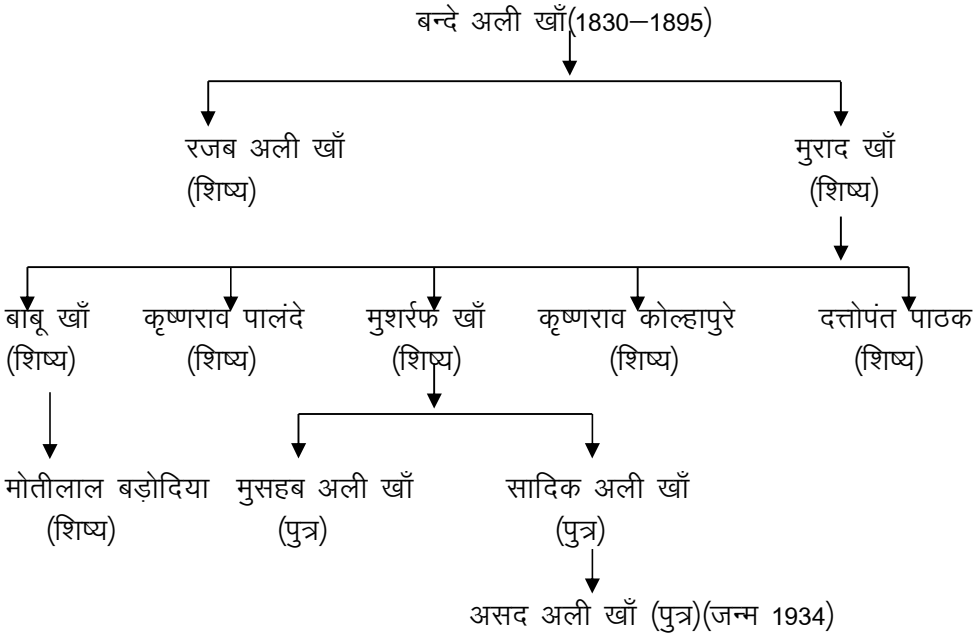

3.4.4 मसीत खाँ का घराना – सितार वादक के रूप में प्रथम नाम अमीर खुसरो (फकीर) का मिलता है, जो मसीत खाँ के दादा थे। फिरोज खाँ के पुत्र मसीत खाँ हुए। मसीत खाँ ने पिता से सितार बजाना सीखकर सितार को कुछ परिष्कृत किया। मसीत खाँ के पुत्र बहादुर खाँ थे। रहीम सेन, मसीत खाँ के भानजे एवं शिष्य दुलह खाँ के दामाद थे। बहादुर खाँ ने कई गत तोड़ों की रचना की। इनकी शुद्ध सारंग की गत बहुत प्रसिद्ध है। यह बीनकार भी थे। उस्ताद मसीत खाँ ने अपने भानजे दुलह खाँ को सितार सिखाया। दुलह खाँ ध्रुपद और वीणावादन में बड़े प्रवीण थे। यह अपने समय के नामी कलाकार थे। कुछ समय तक ग्वालियर नरेश के यहाँ भी रहे। दूलह खाँ ने अपने जामाता (दामाद) रहीम सेन को सितार सिखाया।

उस्ताद रहीम सेन ध्रुपद के अच्छे उस्ताद रहे। रहीम सेन के तीन पुत्र अमृत सेन, न्यायतसेन और लालसेन थे। रहीम सेन के और भी बहुत शिष्य थे, इनमें से हुसैन खाँ सबसे प्रवीण थे।

उस्ताद अमृत सेन यद्यपि रहीम सेन के पुत्र थे तथापि सितार पांडित्य में वह रहीम सेन के पुत्र नहीं, बल्कि भाई प्रतीत होते थे। इसी पांडित्य के कारण लोग एक साथ अमृत सेन रहीम सेन नाम पुकारते थे।

वादन शैली – मियां अमृत सेन जैसे राग के बादशाह थे वैसे लय–ताल के भी बादशाह थे। बड़े–बड़े पखावजी इनके लय–ताल के पांडित्य से चकित हो जाते थे। वह जोड़ बजाकर जब गत बजाते थे, तो पखावजी के ताल के आधार पर नहीं, बल्कि अपने पैर से ताल देते हुए उसके विश्वास पर बजाते थे। सितार की बहुत सी गतें तो मसीत खाँ आदि उस्तादों की बनाई चली आ रही थीं, वे सीधी–सीधी प्राचीन कहलाती थीं। कुछ रागों की गतें रहीम सेन ने भी बनाईं। शेष बहुत सी गतों की रचना अमृत सेन द्वारा की गईं। ये गतें लय की टेढ़ी चाल और मींडों से भरी रहती थीं। वह मसीतखानी बाज बजाते थे। इनकी गतों में प्रचलित मसीतखानी के मिज़राब के बोलों के अतिरिक्त विशेष प्रकार की मिज़राबों के बोलों का भी प्रयोग दिखाई देता है।

इनके दो छोटे भाई न्यामत सेन और लालसेन थे। इनमें से न्यामत सेन को अमृत सेन ने सितार सिखाया था, जो छोटी उम्र में ही मथुरा में स्वर्गवासी हुए। अतः अपने मामा मियां हैदरबख्श के कुटुम्ब को ही अपना कुटम्ब समझते थे। हैदरबख्श के दो पुत्र मम्मू खाँ और अलमू खाँ थे। मम्मू खाँ के पुत्र हफ़ीज खाँ को अमृत सेन ने ऐसा सितार सिखाया कि हफ़ीज खाँ भी सितार में नाम कर गये। मियां अमृत सेन की बहन हैदरबख्श के ज्येष्ठ पुत्र वजीर खाँ को ब्याही थी, जिसने अमीर खाँ एवं निहाल सेन दो पुत्र हुए। अमृत सेन ने इन दोनों को भी सितार सिखाया।

उस्ताद अमीर खाँ के पिता का नाम वजीर खाँ था, जो हैदरबख्श ध्रुपदिये के ज्येष्ठ पुत्र थे। अमृत सेन की बहन वजीर खाँ से ब्याही थी। अतः रिश्ते में अमृत सेन इनके मामा लगते थे। अमीर खाँ के एक भाई निहाल सेन थे। अमीर खाँ ने अपने मामा अमृत सेन से और नाना रहीम सेन से शिक्षा प्राप्त की थी। अमृत सेन के शिष्यों में अमीर खाँ सबसे विद्वान और कीर्तिमान हुए।

मसीत खाँ का घराना

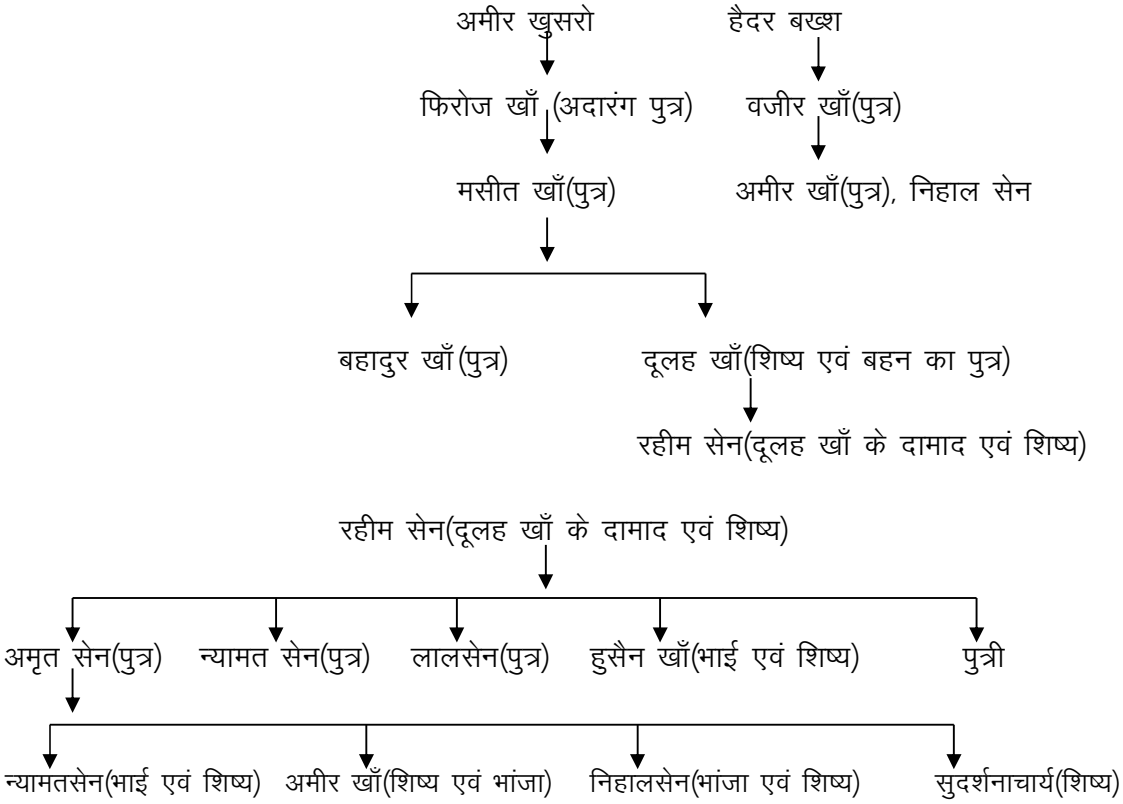

3.4.5 इमदाद खाँ का घराना – वाद्य संगीत में एक महत्वपूर्ण घराना है 'इमदाद खाँ घराना'। कुछ लोग इसे 'इटावा घराना' या 'इमदादखानी बाज' के नाम से भी सम्बोधित करते हैं। इस घराने के कलाकार पिछली चार पीढ़ियों से सुरबहार और सितार की साधना करते रहे हैं। इन्होंने सुरबहार और सितार की वादन शैली को एक नया आयाम दिया है। उस्ताद इमदाद खाँ को प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता उस्ताद साहब दादा खाँ से ही प्राप्त हुई। इनके दो पुत्र इनायत खाँ और वहीद हुसैन खाँ हुए तथा तीन पुत्रियाँ हुईं। इनके प्रमुख शिष्यों में ब्रजेन्द्र किशोर राय चौधरी, प्रकाश चन्द्र सेन (इसराज), कल्याणी मल्लिक और उ0 मम्मन खाँ (सारंगी) आदि हुए। वह जब इन्दौर में तुकोजीराव होलकर के दरबार में थे, तब सन् 1920 में उनका स्वर्गवास हो गया।

उस्ताद इनायत खाँ की शिक्षा–दीक्षा इनके पिता उ0 इमदाद खाँ से हुई। इसके अतिरिक्त इन्होंने अलादिया खाँ, अलाबंदे खाँ, जाकिरूद्दीन खाँ, दौलत खाँ और सज्जाद मुहम्मद से भी तालीम हासिल की। उस्ताद इनायत खाँ के दो पुत्र विलायत खाँ और इमरत खाँ हुए तथा तीन पुत्रियाँ नसीरन बीबी, शरीफन बीबी तथा रहीयन बीबी हुई। बंगाल में इन्होंने बहुत से लोगों को संगीत की शिक्षा प्रदान की। इनके शिष्यों में उल्लेखनीय नाम हैं– जितेन्द्र मोहन सेनगुप्त, डी0टी0 जोशी, विमलाकान्त रायचौधरी, वीरेन्द्र किशोर रायचौधरी, अमियकांति भट्टाचार्य, क्षेमेन्द्र मोहन ठाकुर, जान गोमेस, ज्ञानकांत लाहिड़ी, विपिनचन्द्र दास, विमलेन्दु मुखर्जी आदि।

वादन शैली : उस्ताद इनायत खाँ मसीतखानी और रजाखानी गत बजाते थे। इन्होंने बढ़त करने का सिलसिला कायम किया। वह एक पर्दे पर बहुत देर तक आलाप किया करते थे, उस्ताद इमदाद खाँ के समय में जो मुर्कियां प्रचलित नहीं थीं, उन मुर्कियों को उस्ताद इनायत खाँ ने सितार में बजाना

प्रारम्भ कर दिया। वह गत तोड़ा वादन में प्रवीण थे और उसे विकसित रूप प्रदान करने में उनका सराहनीय योगदान रहा। छूट की तानों के साथ ही विभिन्न प्रकार की तिहाइयों के भी वह मर्मज्ञ थे। तबले और पखावज की लय की काट तराश को उन्होंने गत और तोड़ों में समाहित किया। आलाप और तानें बहुत कुछ सधी हुई होती थी। झाले में आप विशेष प्रकार का समां बांधते थे, जिसे सुनकर लोग मुग्ध हो जाते थे। इसके अतिरिक्त उस्ताद इनायत खाँ ने हाथ की तकनीक को भी बहुत विकसित किया। उस्ताद इमदाद खाँ के पौत्र एवं उस्ताद इनायत खाँ के पुत्र उस्ताद विलायत खाँ ने अपने घराने का नाम खूब रोशन किया। इनका जन्म सन् 1927 में सांगीतिक परिवार में हुआ, जिसमें पीढ़ियों से सुरबहार और सितार की निरन्तर साधना की जाती रही। उस्ताद इमदाद खाँ की अपेक्षा इनके सुरबहार और सितार की जवारी अधिक खुली हुई तथा आस (गूंज) युक्त थी। राग बागेश्री एवं बिहाग का प्रारम्भ इन्होंने तरबों को छेड़कर किया है तथा जिसमें इन्होंने अतिमंद्र सप्तक के स्वरों का प्रयोग भी किया है, जिससे स्पष्ट है कि उस्ताद इमदाद खाँ के समान ही ये सितार मिलाते थे, किन्तु आजकल इनके घराने में अतिमंद्र सप्तक के स्वरों का प्रयोग नहीं किया जाता, क्योंकि तारों को परिवर्तित कर दिया गया है। उस्ताद इनायत खाँ का रिकार्ड सुनने से स्पष्ट होता है कि वह उत्कृष्ट ढंग से मींड का प्रयोग अपने वादन में करते थे। उस्ताद विलायत खाँ ने अपनी शैली और तकनीक को प्रस्तुत करने के लिए सितार की बनावट में और भी परिवर्तन किए। तबली मोटी कर दी, तार गहन बड़ा कर दिया और पर्दे भी मोटे प्रयोग करना प्रारम्भ किया तथा घुड़च की ऊँचाई भी बढ़ा दी।

उस्ताद विलायत खाँ आलाप के बाद जोड़ बजाते हैं, उसमें कई दर्जे कायम करते हैं। इस जोड़ अंग में तीनताल का एक चक्र बनाते हैं। इस चक्र में वह विभिन्न मात्राओं से उठकर बहुत ही आकर्षक ढंग से एक निश्चित स्वर पर आते हैं। इस प्रकार के वादन का कोई विशेष नाम उन्होंने नहीं दिया, किन्तु अरविन्द पारिख ने इसे लड़गुथाव के नाम से सम्बोधित किया। वास्तव में देखा जाए तो यह उस्तात विलायत खाँ की ही अपनी सूझ–बूझ का परिणाम है लेकिन इसके मूल में उस्ताद इमदाद खाँ द्वारा स्थापित किए गए कुछ मूल सिद्धान्त हैं।

उस्ताद विलायत खाँ साहब के सुपुत्र शुजात खाँ आजकल अच्छा सितार बजा रहे हैं। इमरत खाँ ने भी उस्ताद विलायत खाँ से मार्गदर्शन प्राप्त किया है। इनके प्रमुख शिष्यों में अरविन्द पारिख, कल्याणी राज, काशीनाथ मुखोपाध्याय, बेंजामिन गोमस, हशमत अली खाँ, गिरिराज, धर्मवीर आदि विशेष उल्लेखनीय है।

अरविन्द पारिख एक व्यवसायी संगीतज्ञ न होकर एक शौकीन कलाकार ही हैं। इन्होंने अपनी संगीत साधना से संगीत जगत में अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया है।

इनके शिष्य बुधादित्य मुखर्जी ने सितार वादन के क्षेत्र को समृद्ध बनाया तथा विशेष दिशा दी है। एक प्रकार से इन्होंने देश और विदेश में भारतीय संगीत का गौरव बढ़ाया।

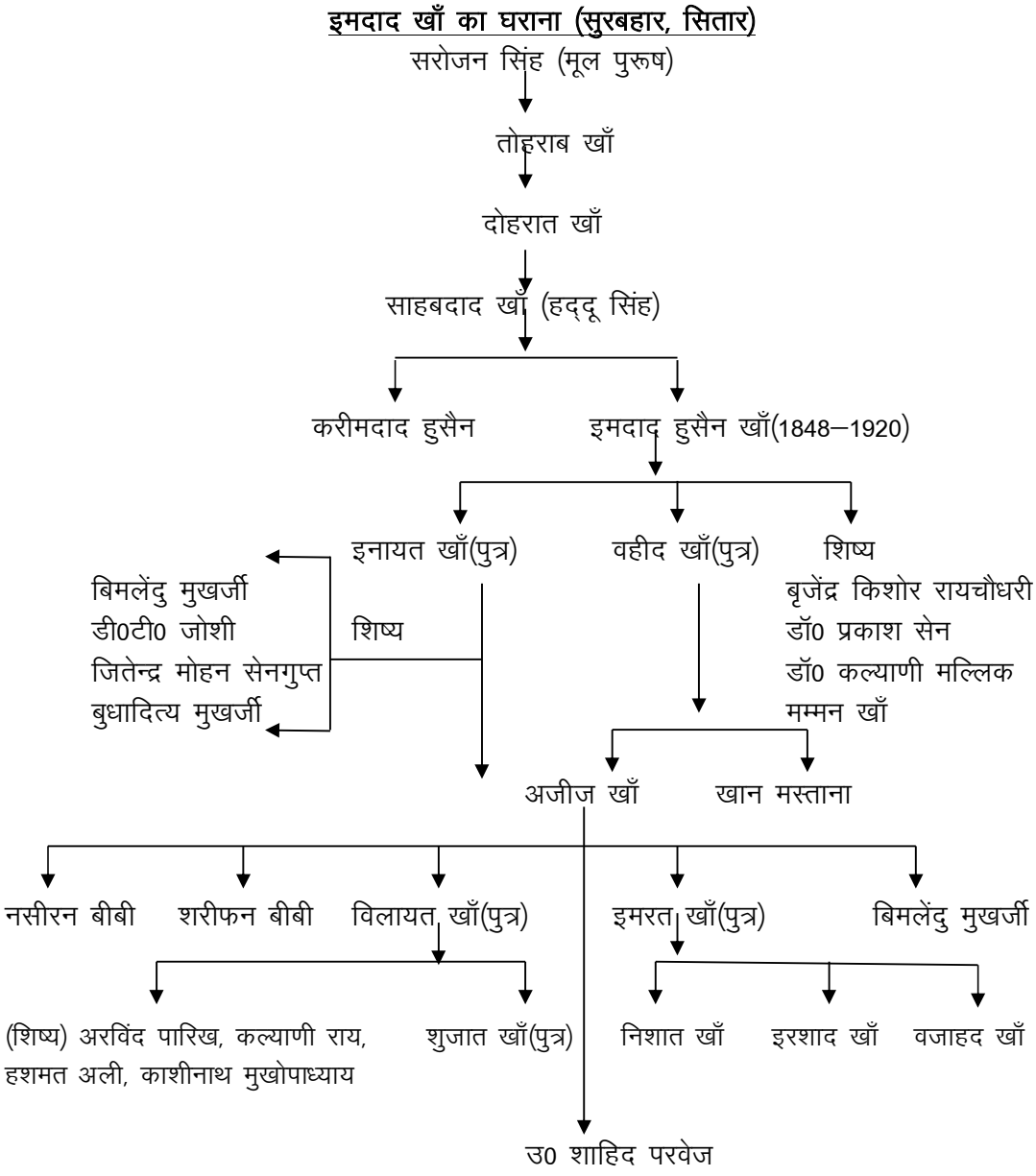
इमदाद खाँ का घराना (सुरबहार, सितार)
सरोजन सिंह (मूल पुरूष)
तोहराब खाँ
दोहरात खाँ
साहबदाद खाँ (हद्दू सिंह)
करीमदाद हुसैन
इमदाद हुसैन खाँ(1848–1920)
इनायत खाँ(पुत्र)
वहीद खाँ(पुत्र)
शिष्य
बृजेंद्र किशोर रायचौधरी
डॉ0 प्रकाश सेन
डॉ0 कल्याणी मल्लिक
मम्मन खाँ
बिमलेंदु मुखर्जी
डी0टी0 जोशी
जितेन्द्र मोहन सेनगुप्त
बुधादित्य मुखर्जी
शिष्य
अजीज खाँ
खान मस्ताना
नसीरन बीबी
शरीफन बीबी
विलायत खाँ(पुत्र)
इमरत खाँ(पुत्र)
बिमलेंदु मुखर्जी
(शिष्य) अरविंद पारिख, कल्याणी राय,
हशमत अली, काशीनाथ मुखोपाध्याय
शुजात खाँ(पुत्र)
निशात खाँ
इरशाद खाँ
वजाहद खाँ
उ0 शाहिद परवेज

3.4.6 मुश्ताक अली खाँ का घराना – उस्ताद मुश्ताक़ अली खाँ सितार वादन की विशिष्ट शैली को अपनाकर घराने को जन्म दिया। इनके पिता आशिक अली खाँ थे। इनके पूर्वज जग्गू खाँ एवं मक्कू खाँ हुए। आशिक अली खाँ की शिक्षा वारिस अली खाँ बीनकर से हुई। यह भी जानकारी मिलती है कि इन्होंने बरकतुल्ला खाँ(सितारिये) से भी तालीम हासिल की। यह वीणा और सुरबहार भी बजाते थे। यह सुरबहार का वादन तीन मिजराब पहनकर करते थे। आलाप बजाने में उन्होंने दक्षता प्राप्त की थी। इन्हीं के सुपुत्र उस्ताद मुश्ताक़ अली खाँ के नाम पर इस घराने का नाम पड़ा। इनके शिष्यों में अमिय गोपाल भट्टाचार्य तथा प्रसिद्ध बेला वादक जी0एन0 गोस्वामी हुए।

उस्ताद मुश्ताक़ अली खाँ की शिक्षा अपने पिता उस्ताद आशिक अली खाँ से हुई। प्राचीन परम्परा का निर्वाह करते हुए वह सितार में 17 पर्दों का प्रयोग करना ही उपयुक्त समझते थे।

वादन शैली : उस्ताद मुश्ताक़ अली खाँ मसीतखानी गत के बोलों का भी यथायोग्य निर्वाह करने के ही पक्षधर थे। वह सुरबहार भी उत्तम ढंग से बजाते थे। विशेष बात यह है कि सुरबहार का वादन वह तीन मिजराब पहनकर करते थे। इनके अनुसार तीन मिजराब पहनकर सुरबहार वादन की परम्परा उनके घराने के वारिस अली खाँ(बीनकार) ने प्रारम्भ की। इनके शिष्यों में अरूण कुमार, अशोक घोष, देबू चौधरी विशेष उल्लेखनीय है।

प्रो0 देबव्रत चौधरी ने उस्ताद मुश्ताक़ अली खाँ से विशेष मार्गदर्शन प्राप्त किया। अपनी परम्परा के निर्वाह यह उत्तम ढंग से कर रहे हैं। इनके द्वारा सात नवीन रागों की रचना की गई है, यथा– विश्वेश्वरी, पलास सारंग, अनुरंजनी, आशिकी ललित, स्वनंदेश्वरी, कल्याणी बिलावल। कई विद्यार्थियों ने सितार में इनसे मार्गदर्शन प्राप्त किया और कर रहे हैं, जिनमें शर्मिष्ठा सेन(घोष), इंद्राणी चक्रवर्ती, रविन्द्र अदेशरा, सुनीता धर, अनुपम महाजन, सुपुत्र प्रतीक चौधरी, अंजना भार्गव आदि हैं।

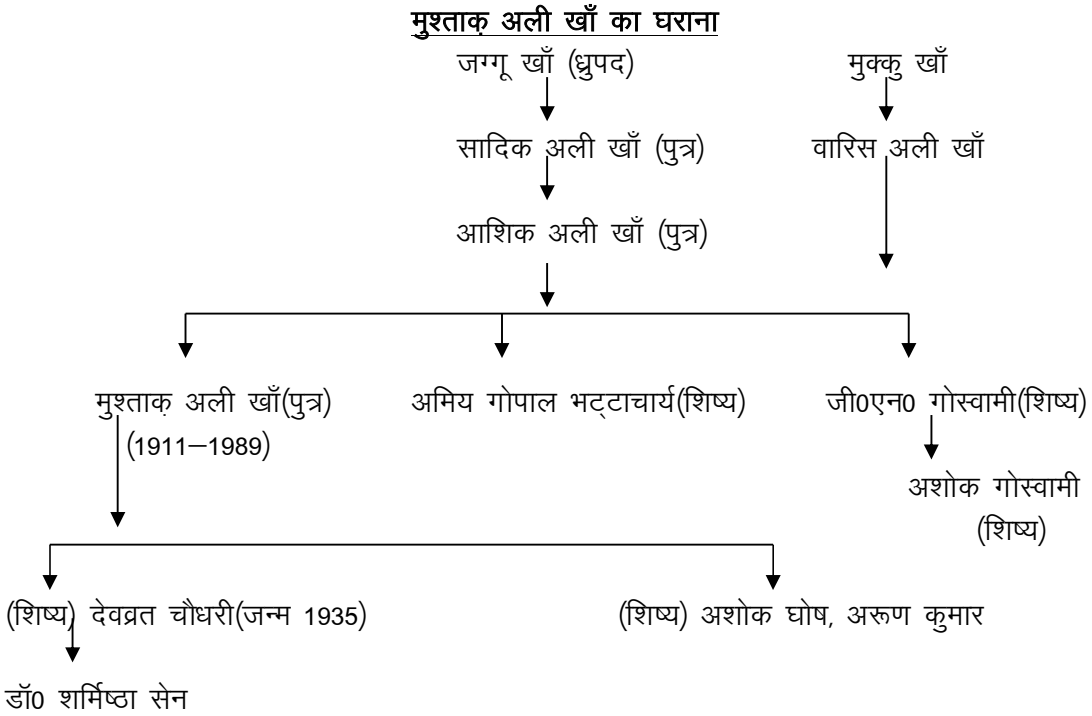

3.4.7 सरोदिया गुलाम अली खाँ बंगश का घराना – भारत में प्रचलित सरोद के घरानों में से एक महत्वपूर्ण घराना है 'गुलाम अली खाँ का बंगश घराना'। आज के प्रसिद्ध सरोद वादक उस्ताद अमजद अली खाँ के परदादा उस्ताद गुलाम अली खाँ बंगश हुए। उन्हीं के नाम से इस घराने को सम्बोधित किया जाता है। गुलाम अली खाँ ने भारत भर में घूम–घूमकर यश अर्जित किया। अंत में यह ग्वालियर दरबार के आश्रय में रहे। गुलाम अली खाँ के चार पुत्र जुम्मा खाँ, हुसैन खाँ, मुराद खाँ और नन्हे खाँ हुए। जुम्मा खाँ (जुम्मत खाँ) मक्का चले गए और लौटकर वापस नहीं आए। हुसैन खाँ ने सितार अपनाया और ग्वालियर के दरबारी कलाकार हुए। उस्ताद मुराद खाँ और उस्ताद नन्हे खाँ ने ही सरोद वादन की परम्परा को आगे बढ़ाया। उस्ताद मुराद खाँ के सम्बन्ध में आचार्य बृहस्पति जी का मत है कि इन्होंने ही सरोद पर फौलाद की तबली चढ़ाई और फौलाद के तार चढ़ाए। इनके शिष्य अब्दुल्ला और अमीर खाँ हुए। बंगाल और बिहार में सरोद के प्रचार का श्रेय मुराद खाँ को ही दिया जाता है। अमीरखानी(सरोदिये का) बाज उस्ताद अमीर खाँ के नाम से प्रचलित हुआ। इनकी शिष्य परम्परा में पं0 राधिका मोहन मैत्र, वीरेन्द्र किशोर रायचौधरी, ब्रजेन्द्र किशोर रायचौधरी, विमलाकान्त रायचौधरी, तिमिर बरन भट्टाचार्य आदि हुए। इनके शिष्य पं0 राधिका मोहन मैत्र ने इनकी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए स्वयं के चिन्तन एवं मनन से तत्कालीन प्रचलित सरोद शैली में ख्याल शैली का सम्मिश्रण किया। इनकी कला मुख्यतः परम्परानुयायी होने के कारण 'आलाप के अंगों' का यथायोग्य निर्वाह इनके वादन में दिखाई देता है।

वादन शैली : आपकी सूझबूझ ही थी कि राग के स्वरूप को खंडित किए बिना वह उसे एक अलग दृष्टिकोण से सुन्दर रूप में गत के माध्यम से प्रस्तुत करते थे। उत्कृष्ट तान एवं तोड़ों को बजाकर सम पर आने पर इनका अपना ढंग था। वह इकहरा तान भी बजाते थे। उन्होंने सरोद में इकहरा तान लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इसके अतिरिक्त वह बोल और इकहरा तान के मिश्रण से एक विशेष प्रकार की तान बजाते थे।

उस्ताद नन्हे खाँ जो कि उस्ताद गुलाम अली खाँ के चतुर्थ पुत्र थे, ग्वालियर नरेश श्रीमंत माधव राव सिन्धिया के समय रहे। इनके दो पुत्र उस्ताद मुन्ने खाँ एवं उस्ताद हाफ़िज अली खाँ हुए। उस्ताद हाफ़िज अली खाँ की प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता से ही हुई। वृंदावन के प्रसिद्ध ध्रुपदिये महाराज गणेशीलाल चौबे से हाफ़िज अली खाँ ने होरी और ध्रुपद की शिक्षा प्राप्त की। हाफ़िज अली खाँ एक गुणग्राहक व्यक्ति थे, अतः उन्होंने रामपुर के एक मर्मज्ञ सारंगी वादक मुन्नन खाँ से भी पर्याप्त रूप से लाभ उठाया।

उस्ताद हाफ़िज अली खाँ को राग की शुद्धता अधिक प्रिय थी। वह धुन भी बजाते थे। ध्रुपद की शिक्षा होने के कारण सूत व गमक का कार्य उत्कृष्ट रूप से इनके सरोद वादन में दिखाई देता है। विभिन्न अलंकारों का प्रयोग इनके वादन में कम दिखाई देता है। उनकी शैली ध्रुपद और बीन के अंग से प्रभावित रही। मुबारक अली, रहमत अली तथा प्रसिद्ध सरोद वादक उस्ताद अमजद अली खाँ इनके ही सुपुत्र हैं। उस्ताद अमजद अली खाँ ने वर्तमान में इस घराने को प्रसिद्धि दिलाने में बहुमूल्य योगदान दिया है।

उस्ताद अमजद अली खाँ सरोद वादन में राग का प्रस्तुतिकरण सुव्यवस्थित रहता है, जो इनकी सतत मेहनत और अच्छे प्रशिक्षण का परिचायक है। इनके वादन में क्रम, नियम और अनुशासनादि सब विशेषताएँ विद्यमान हैं। इनके चिकारी छेड़ने का अंदाज अन्य सरोद वादकों से भिन्न है। वह सरोद को काली पाँच स्वर में मिलाकर वादन करते हैं। 'इकहरा' तान व विभिन्न प्रकार की गमक का प्रयोग अपने सरोद वादन में बड़ी उत्कृष्टता से करते हैं। इन्होंने अपनी वादन शैली में ख्याल शैली का समावेश कर लय चातुर्य से उसे और समृद्ध बनाया है। परम्परा से सीखी हुई बंदिशों के अतिरिक्त स्वरचित बंदिशों का भी प्रदर्शन बड़ी कुशलता से इनके सरोद वादन में सुनाई देता है।

सरोदिया गुलाम अली खाँ बंगश का घराना

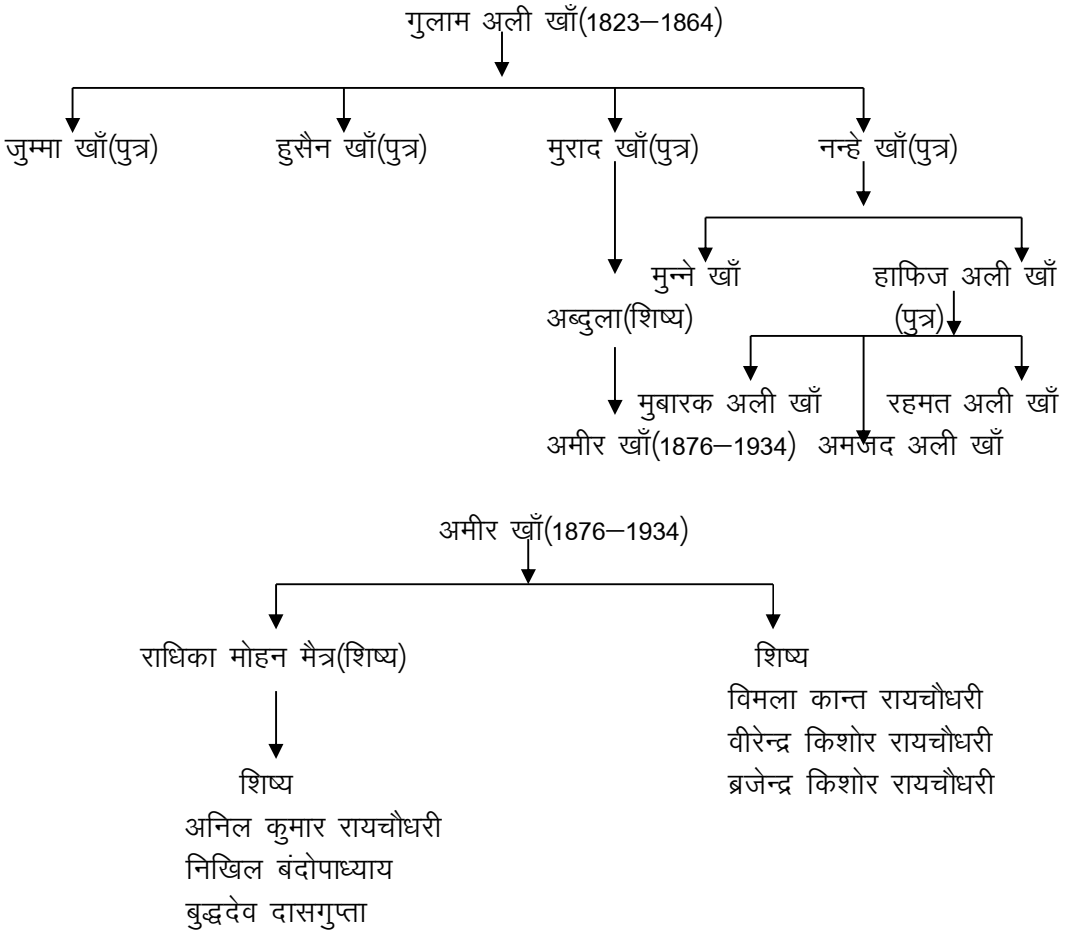

3.4.8 अलाउद्दीन खाँ का घराना अथवा मैहर घराना – संगीत जगत में उस्ताद अलाउद्दीन खाँ को 'बाबा' नाम से पुकारा जाता है। मैहर के इस प्रचंड सूर्य का तेज सारे विश्व में व्याप्त है। मैहर घराने के संस्थापक उस्ताद अलाउद्दीन खाँ के नाम पर ही इस घराने को जाना जाता है। इनका जन्म सन् 1881 में हुआ। इनकी संगीत शिक्षा गोपालचंद्र चक्रवर्ती उर्फ नूलो गोपाल, हाबूदत्त, अहमद अली खाँ और वज़ीर खाँ से हुई। अलाउद्दीन विधिवत वज़ीर खाँ के शिष्य हुए थे, परन्तु सीखने का अवसर उन्हें अन्य गुणियों से ही मिला। ईडन गार्डन के बैंड मास्टर लाबो साहब के पास उस्ताद अलाउद्दीन खाँ ने वायलिन की शिक्षा और पश्चिमी संगीत सीखा था। उस्ताद अलाउद्दीन खाँ ने 'चन्द्र सारंग' वाद्य भी बनाया। इन्होंने एक और वाद्य बनाया, जिसे बैंजो नाम दिया, जो सरोद का ही विकसित रूप था, आजकल इसे सितार–बैंजों भी कहते हैं। उस्ताद अलाउद्दीन खाँ ने मैहर वाद्यवृंद की स्थापना की, इसे ही मैहर बैंड के नाम से प्रसिद्धि मिली। प्रारम्भ में इसमें 22 कलाकार थे। बाबा स्वयं झूम–झूमकर इसमें वायलिन बजाते थे। इसे वाद्यवृंद में सितार, सरोद, सितार–बैंजो, बासुंरी, क्लोरिनेट, नलतरंग, जलतरंग, वायलिन, चेलो, तबला और हारमोनियम आदि वाद्यों का प्रयोग किया जाता था। बाबा ने इस हेतु लगभग 250 रचनाएँ कीं। वह इसमें गायक भी रखते थे। बाबा ने नये वाद्यों का सृजन किया, वाद्यों में सुधार किये, नई–नई बंदिशें रचीं। इसी प्रकार उन्होंने कुछ रागों का भी निर्माण किया। उस्ताद अलाउद्दीन खाँ ने पं0 रविशंकर और उस्ताद अली अकबर जैसे दो महान कलाकारों को संगीत की शिक्षा देकर जो वाद्य संगीत का गौरव बढ़ाया है वह अप्रतिम है। इन्हीं कलाकारों से

वाद्य संगीत का नया इतिहास प्रारम्भ हुआ। इनके अन्य प्रमुख शिष्यों में निखिल बैनर्जी (सितार), पन्नालाल घोष (बांसुरी), अजय सिन्हाराय (सितार), आशीष खाँ (सरोद), इन्द्रनील भट्टाचार्य (सितार), वीरेन्द्र किशोर रायचौधरी, सुप्रभात पाल (सरोद), श्याम गांगुली (सरोद), रोबिन घोष (बेला), तिमिर बरन भट्टाचार्य (सितार), शरनरानी बाकलीवाल (सरोद), श्रीपद बंदोपाध्याय एवं सुपुत्री अन्नपूर्णा (सुरबहार) आदि है।

वादन शैली : उस्ताद अलाउद्दीन खाँ ने बीन के 'आलाप अंग' से सरोद वादन को सजाया, जिसमें बीन के गम्भीर आलाप के साथ लड़ी, लड़गुथाव, तारपरन आदि का प्रयोग होता है। इनके वादन में विविध अलंकारों का प्रयोग बहुतायत से दिखाई देता है। इन्होंने आलाप के अतिरिक्त गत में भी तार सप्तक के स्वरों का प्रयोग किया जिससे सरोद में तीन सप्तकों का प्रयोग प्रारम्भ हुआ। ध्रुपदांगी आलाप को अच्छे ढंग से प्रस्तुत करने के लिए आपने सरोद वाद्य के आकार और तारों की संख्या में भी परिवर्तन किया। जहाँ एक ओर वह अति विलम्बित लय में गत वादन करते थे, वहीं दूसरी ओर अति द्रुत लय में भी गत प्रस्तुत करते थे। इनकी बनाई हुई गत का सम कभी–कभी ऐसे स्थान पर होता था, या कुछ ऐसा पेंच देते थे कि तबले वाले को साथ करना कठिन पड़ता था।

आपके सुपुत्र अकबर अली खाँ ने शास्त्रीय संगीत में सरोद वादन के क्षेत्र में असाधारण योगदान दिया और विश्वभर में ख्याति अर्जित की। इन्होंने देश के अतिरिक्त विदेशों में भारतीय संगीत विद्यालय की स्थापना की। इसमें 6000 से अधिक छात्रों को प्रशिक्षण दिया जा चुका है। इनके प्रमुख शिष्यों में अजय सिन्हा राय (सितार), निखिल बंदोपाध्याय (सितार), ब्रजभूषण काबरा (गिटार), शरन रानी बाकलीवाल (सरोद) आदि प्रमुख हैं।

उस्ताद अलाउद्दीन खाँ की सुपुत्री अन्नपूर्णा देवी भी शास्त्रीय संगीत की परम साधिका रही है। यह प्रचार–प्रसार से बिल्कुल दूर रहीं। इनके प्रमुख शिष्यों में निखिल बैनर्जी, इंद्रनील भट्टाचार्य, बहादुर खाँ, आशीष खाँ, ध्यानेश खाँ आदि प्रमुख हैं।

खाँ साहब के शिष्य पं0 रविशंकर के नाम से सम्भवतः ही कोई संगीत प्रेमी होगा जो परिचित न हो। पंडित रविशंकर ने भारत में सितार वाद्य को जनमानस में लोकप्रिय बनाया, वहीं दूसरी ओर भारतीय संगीत को विश्व में प्रतिष्ठित कर सितार को अन्तर्राष्ट्रीय वाद्य बना दिया। पंडित जी ने उस्ताद अलाउद्दीन खाँ से ली गई भारतीय संगीत की परम्परागत शिक्षा का मर्यादा, शुद्धता और पवित्रता बनाए रखी, वहीं दूसरी ओर वाद्य वृंद के निर्देशक के रूप में भारतीय संगीत की सीमा में रहकर सदैव नवीन प्रयोग किए।

वादन शैली : पं0 रविशंकर अपने सितार में बीनकार घराने की कला का उत्तम परिचय देते हैं। मंद्र सप्तक आलाप का वह जिस उत्कृष्टता, गम्भीरता और चैनदारी से वादन करते हैं, वह बीन की महान परम्परा की याद दिलाता है। वह बीन के अंगों का भली–भांति प्रदर्शन अपनी सितार पर करते हैं, जिसमें विलम्बित, मध्य, द्रुत, जोड़, बराबरी का जोड़ (गमक जोड़), ठोक, लड़ी, लड़गुथाव, झाला आदि का समावेश रहता है। इनके आलाप में कृंतन का काम विशेष उल्लेखनीय है। तीनताल के अतिरिक्त अन्य तालों में भी वह अपना सितार बड़ी आसानी से उत्कृष्ट ढंग से प्रस्तुत करते हैं। धमार एवं ताल सवारी में भी यह विलम्बित गत बजाते रहे हैं। इनके प्रमुख शिष्य उमाशंकर मिश्र (सितार), गोपाल कृष्ण (विचित्र वीणा), जया बोस विश्वास (सितार), विजय राघव राव (बांसुरी), कार्तिक कुमार (सितार) आदि प्रमुख हैं।

अलाउद्दीन खाँ का घराना (मैहर घराना)

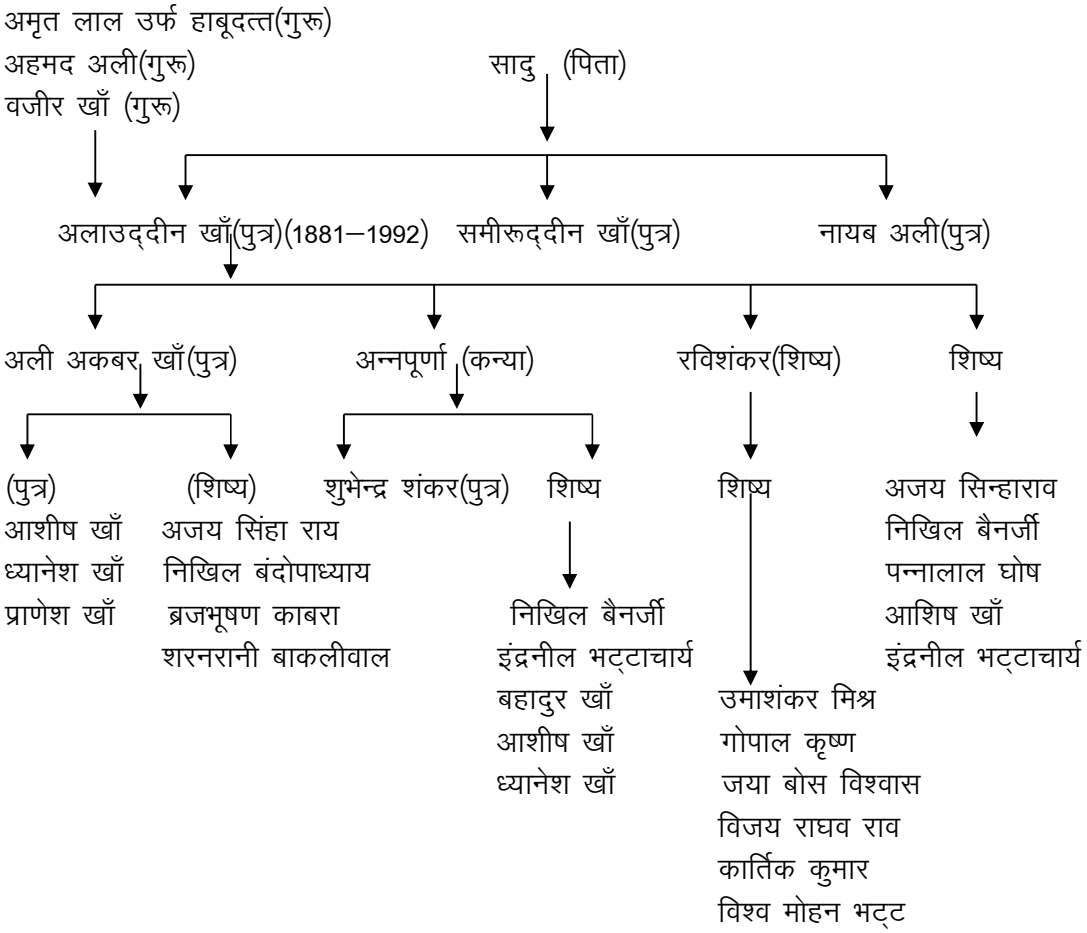

3.4.9 विघ्नेश्वर शास्त्री का वायलिन घराना – विघ्नेश्वर शास्त्री ने कर्नाटक के गोकार्ण नामक स्थान पर रहकर बेला वादन की शिक्षा प्राप्त की थी। बाद में वह उत्तर भारत के लोगों के साथ संगत करने लगे। वह अपना वायलिन सा़ प़ सा प पद्धति से मिलाकर ख्याल पद्धति से बजाते थे। यद्यपि वह महफिल के कलाकार नहीं थे, किन्तु उनके वादन में अत्यन्त मिठास थी। वह देवधर स्कूल आफ इंडियन म्यूजिक में प्राध्यापक रहे। वर्तमान के प्रसिद्ध बेला वादक डी0के0 दातार इनके ही शिष्य हैं। वी0जी0 जोग ने भी इनसे वायलिन वादन की शिक्षा प्राप्त की।

पं0 डी0के0 दातार ने अपने बड़े भाई ए0के0 दातार से गायन और विघ्नेश्वर शास्त्री से बेला वादन की शिक्षा प्राप्त की। तत्पश्चात कठिन एकान्त स्वर साधना के परिणाम स्वरूप देश के प्रमुख वादक के रूप में यश अर्जित किया। पं0 डी0वी0 पलुस्कर के सत्संग से भी उन्होंने ज्ञान अर्जित किया है। पं0 दातार बंदिश के साथ पूर्ण न्याय करते हैं। बंदिश के साथ यह एक–एक स्वर के आधार पर राग का विस्तार करते हुए स्थायी और अन्तरा समाप्त करते हैं, तत्पश्चात विभिन्न लयों के आधार पर जोड़ के अनुकरण में विस्तार को आगे बढ़ाते हुए तानों का सिलसिला प्रारम्भ होता है। तानों के विविध रूप इनके वादन का आकर्षक अंग हैं। मध्य लय की बंदिश के साथ भी आलाप और तान की विविधता कलात्मक होती है।

पं0 विघ्नेश्वर के दूसरे शिष्य पं0 वी0जी0 जोग की उत्तर भारत में वायलिन को लोकप्रिय बनाने में विशेष भूमिका रही है। प्रारम्भ में गायन की शिक्षा शंकरराव आठवले जी और गणपत बुवा पुरोहित से प्राप्त की। तत्पश्चात विघ्नेश्वर शास्त्री से बेला वादन की शिक्षा ग्रहण की। पं0 कृष्ण

नारायण रातंजनकर से भी इनको विशेष मार्गदर्शन प्राप्त होता रहा। देश के विख्यात गायकों में शायद ही कोई ऐसा गायक होगा, जिसके साथ जोग साहब ने संगत नहीं की हो। चाहे कलाकार छोटा हो या बड़ा, संगत करने में वह कभी संकोच नहीं करते। संगत करने में वह अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। इसी प्रकार देश के अधिकांश सितार, सरोद, सारंगी, शहनाई और बांसुरी वादकों के साथ इन्होंने सफल जुगलबंदी की है। उ0 बिसमिल्ला खाँ के साथ जुगलबंदी का तो आनन्द ही कुछ और है। इनके इसी विशेष गुण के कारण इन्हें जुगलबंदी का विशेषज्ञ कहना उपयुक्त प्रतीत होता है। इनके प्रमुख शिष्यों में शिशिर कणाधर चौधरी (बेला), जरीन दारूवाला (सरोद), रमेश तागड़े (बेला) विशेष उल्लेखनीय है।

विघ्नेश्वर शास्त्री का वायलिन घराना

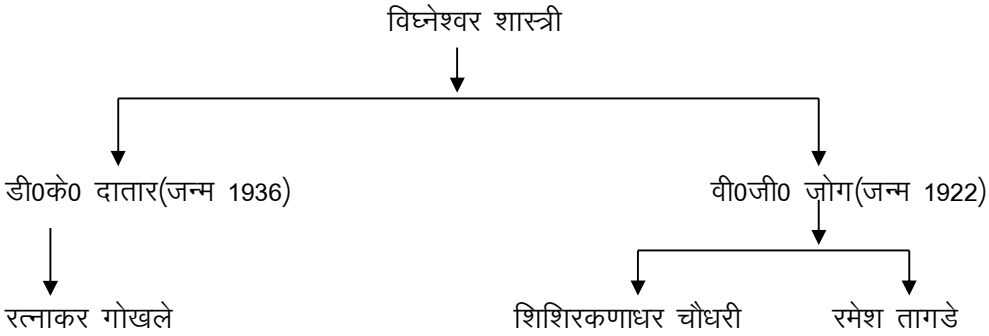

3.4.10 शम्भूनाथ मिश्र का सारंगी घराना – शम्भूनाथ मिश्र की विशिष्ट सारंगी वादन शैली के कारण उनका एक घराना बन चुका है। शम्भूनाथ को अपने पिता पं0 रामनारायण से सीखने का अवसर नहीं मिल सका। उन्होंने अपने बड़े भाई भवानी मिश्र से सारंगी वादन तथा गायन की शिक्षा प्राप्त की। रागमाला के साथ चक्करदार, फंदेदार, क्लिष्ट तानों की जटिलतम शैली बेडार अंग शम्भूनाथ मिश्र के घराने की विशेषता थी। वह टप्पा और ठुमरी को बहुत ही आकर्षक रूप से श्रोताओं के सम्मुख प्रस्तुत करते थे। इनके शिष्यों में उनके पुत्र पं. सरयू प्रसाद मिश्र का नाम उल्लेखनीय है। पं0 सरयू प्रसाद मिश्र गायन की विभिन्न विधाओं को उत्कृष्ट ढंग से प्रस्तुत करते थे। वह 'सारंगी सागर' के नाम से प्रसिद्ध हुए। यह उनकी उपाधि थी। उनके चार पुत्रों में से केवल तीन ने सारंगी वादन परम्परा को बनाए रखा, जिनका नाम है विश्वनाथ मिश्र, बैजनाथ मिश्र और गोपीनाथ मिश्र।

पं0 बैजनाथ मिश्र की संगीत शिक्षा का प्रारम्भ गायनाचार्य छोटे रामदास मिश्र के नाना पं0 ठाकुर प्रसाद मिश्र से हुआ। इन्हीं से सारंगी की भी शिक्षा प्राप्त होने के उपरान्त अपने पिता सरयू प्रसाद की देखरेख में बैजनाथ जी ने अपना सारंगी का अभ्यास क्रम नियमित रखा। विश्वनाथ प्रसाद मिश्र से भी इन्हें मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। यह देश के श्रेष्ठ सारंगी वादकों में से एक हैं तथा चारों अंग की गायकी के अतिरिक्त स्वतंत्र वादन में भी अद्वितीय हैं। इन्हें आलाप और गमक विशेष प्रिय हैं।

शम्भूनाथ मिश्र का सारंगी घराना

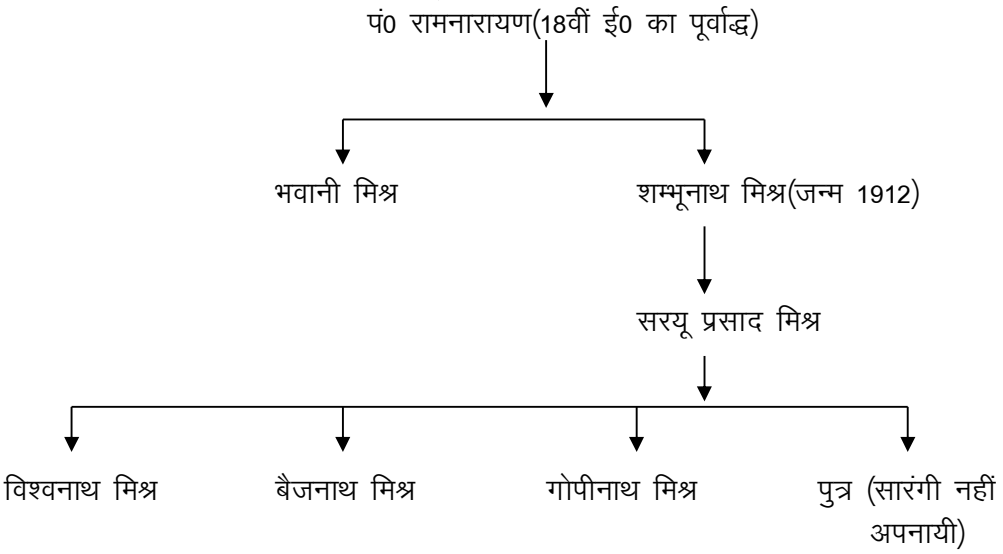

उपरोक्त प्रमुख तंत्र वाद्य के घरानों के अतिरिक्त कई अन्य घरानों का भी प्रचलन है, जो इस प्रकार है–

1. **हामिद हुसैन का लखनऊ घराना**
2. **पाठक घराना**
3. **करामतुल्ला खाँ का सरोद घराना**
4. **अलाउद्दीन का वायलिन घराना**
5. **गजानन राव का वायलिन घराना**
6. **मम्मन खाँ का सारंगी घराना**
7. **गोपाल मिश्र का सारंगी घराना**

तंत्री वाद्य के घरानों के प्रमुख कलाकार

तानसेन

उ0 बन्दे अली खाँ

उ0 अलाउद्दीन खाँ

उ0 मुश्ताक़ अली खाँ

पं0 रविशंकर

उ0 अली अकबर खाँ

विदूषी अन्नपूर्णा देवी

उ0 असद अली खाँ

उ0 अमज़द अली खाँ

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

(i) तानसेन के सेनी घराने के विषय में संक्षेप में बताइये।

(ii) उस्ताद मुश्ताक़ अली खाँ का परिचय दीजिए।

(iii) उस्ताद अलाउद्दीन खाँ की वादन शैली के विषय में बताइये।

(iv) उस्ताद इमदाद खाँ के घराने का परिचय दीजिए।

ख) एक शब्द में उत्तर दो :–

(i) तानसेन के गुरू का नाम बताइये।

(ii) उस्ताद अलाउद्दीन खाँ की पुत्री का नाम बताइये।

(iii) वायलिन वादक डी0के0 दातार किसके शिष्य थे?

ग) सत्य/असत्य बताओ :–

(i) उस्ताद इनायत खाँ सारंगी बजाते थे।

(ii) उस्ताद अली अकबर खाँ सरोद बजाते हैं।

(iii) तानसेन के पुत्र का नाम बिलास खाँ है।

घ) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–

(i) मुश्ताक़ अली खाँ का घराना ..... वाद्य से सम्बन्धित हैं।

(ii) सारंगी वादक शम्भूनाथ मिश्र के शिष्य ..... हैं।

(iii) मसीतखानी गत के निर्माता ..... हैं।

3.5 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके हैं कि एक असाधारण प्रतिभाशाली, महत्वाकांक्षी व्यक्ति अपनी गुरू परम्परा से प्राप्त प्रणाली में अपना कुछ नवीन सौन्दर्य अथवा कोई नूतन शैली या विशेषताओं को जोड़ अपना एक अलग अस्तित्व बना लेता है। भारतीय वाद्य संगीत परम्परा में तंत्र वाद्यों का प्रचलन बहुत दीर्घ काल से रहा है परन्तु घराना या बाज शब्द का प्रचलन उत्तर मध्यकाल में दिखाई देता है। संगीत की प्रत्येक विधा में तंत्री वाद्यों का विशेष महत्व है। तंत्री वाद्यों से जुड़े प्रमुख घरानों के कलाकारों ने अत्यन्त कठिन साधना पथ का चयन किया। इन कलाकारों की अथक साधना का ही परिणाम है कि भारतीय संगीत में आज भी तंत्री वाद्य के घराने अपना विशेष स्थान बनाये हुए है। इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप जान चुके हैं कि तंत्र वाद्यों से सम्बन्धित विभिन्न घरानों के कलाकारों की संगीत यात्रा कैसी रही तथा उनकी वादन शैली में क्या प्रमुख विशेषताएँ रही हैं। साथ ही विभिन्न घरानेदार तंत्र वादकों की शिष्य परम्परा एवं उनकी शिक्षा से जुड़ी समस्त जानकारी आप जान चुके हैं। विभिन्न तंत्र वादकों ने कई घरानों से वादन शैली की तालीम प्राप्त की हैं।

3.6 शब्दावली

1. **घसीट** : घसीट शब्द से तात्पर्य यह है कि इसमें स्वरों को एक–दूसरे से अलग–अलग न बजाकर परस्पर जोड़कर बजाया जाता है। इसका सम्बन्ध स्वरों के घर्षण से है।
2. **मींड** : मींड उस क्रिया को कहते है जिसमें एक स्वर दूसरे स्वर तक अखण्डित रूप से खींचा जाता है। दो स्वरों के जोड़ में बिल्कुल अन्तर नहीं लगता।
3. **बहलावा** : विभिन्न प्रकार से स्वर को अन्य स्वरों के साथ जोड़ते हुए लेने की प्रक्रिया बहलावा कहलाती है। इसमें कोई नियम का पालन नहीं होता है।
4. **मसीतखानी** : मसीतखानी गत अथवा वादन शैली के निर्माता जयपुर के मसीत खाँ थे। इसकी विशेषता विलम्बित लय में है। इस पर वीणा वादन का स्पष्ट प्रभाव दिखता है।
5. **रजाखानी** : जौनपुर के रजा खान रजाखानी या पूरब बाज के अविष्कारक थे। इसकी विशेषता द्रुत लय में है। इसमें गत एवं तोड़े द्रुत लय में बजाये जाते है।
6. **झाला** : एक–एक स्वर को अनेक बार द्रुत लय से बजाना झाला कहलाता है। झाले के अन्तर्गत रा रा बोल द्रुत लय में बजाये जाते हैं।
7. **कृन्तन** : यह तंतु वाद्य की विशिष्ट क्रिया है जिसके अन्तर्गत एक बार ही दा या रा बजाकर उसी ध्वनि में एक से अधिक पर्दों में स्वर निकाले जाते हैं।
8. **कण** : किसी स्वर को पास वाले किसी दूसरे स्वर से स्पर्श करना कण कहलाता है।
9. **खटका** : यह कण का ही प्रकार है। इसमें कण की कोमलता का अभाव है। खटके में कण स्वर का स्पर्श जोरदार या धक्के से होता है।
10. **गत** : जिस प्रकार गायन में स्वर विस्तार के बाद बंदिश गायी जाती है, उसी प्रकार तंतु वाद्यों में स्वर विस्तार के बाद गतें बजायी जाती है।

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

ख) एक शब्द में उत्तर दो :–

(i) बख्शू

(ii) विदूषी अन्नपूर्णा देवी

(iii) पं0 विघ्नेश्वर शास्त्री

ग) सत्य/असत्य बताओ :–

(i) असत्य

(ii) सत्य

(iii) सत्य

घ) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–

(i) सितार

(ii) सरयू प्रसाद मिश्र

(iii) मसीत खाँ

3.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गर्ग, श्री लक्ष्मीनारायण, (1978), *हमारे संगीत रत्न,* संगीत कार्यालय हाथरस।
2. महाडिक, डॉ0 प्रकाश, (1994), *भारतीय संगीत के तंत्री वाद्य,* मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
3. चौबे, डॉ0 सुशील कुमार, (1984), *संगीत के घरानों की चर्चा,* उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।

3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. बंदोपाध्याय, श्रीपद, (1957), *सितार मार्ग– तृतीय भाग,* वीणा मन्दिर भारतीय संगीत साहित्य प्रकाशक, दिल्ली।
2. पंराजपे, डॉ0 एस0, (1972), *संगीत बोध,* मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
3. आचार्य बृहस्पति एवं सुलोचना यजुर्वेदी, *खुसरो, तानसेन तथा अन्य कलाकार,* राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सरोद वाद्य से सम्बन्धित प्रमुख घरानों पर एक लेख लिखिये।
2. तंत्र वाद्य के अन्तर्गत बीन(वीणा) वाद्य के रामपुर एवं बन्दे अली खाँ के घरानों की विवेचना कीजिये।

इकाई 4 – पाठ्यक्रम के रागों का पूर्ण वर्णन, तुलना एवं स्वर समूह द्वारा राग पहचानना

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 राग श्यामकल्याण–पूर्ण वर्णन
4.3.1 सम्प्रकृतिक राग
4.3.2 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना
4.4 राग जैजैवन्ती – पूर्ण वर्णन
4.4.1 सम्प्रकृतिक राग
4.4.2 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना
4.5 राग पूरियाकल्याण–पूर्ण वर्णन
4.5.1 सम्प्रकृतिक राग
4.5.2 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना
4.6 राग भैरव–पूर्ण वर्णन
4.6.1 सम्प्रकृतिक राग
4.6.2 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना
4.7 राग केदार–पूर्ण वर्णन
4.7.1 सम्प्रकृतिक राग
4.7.2 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना
4.8 सारांश
4.9 शब्दावली
4.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.12 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर, (एम0पी0ए0एम0आई0–502) पाठ्यक्रम की चौथी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के पश्चात आप बता सकते हैं कि वाद्य कितने प्रकार के होते हैं तथा तंत्र वाद्य के अन्तर्गत किन वाद्यों का समावेश होता है। आप तन्त्र वाद्य के घरानों के विषय में भी आप जान चुके हैं।

इस इकाई में आप रागों का पूर्ण परिचय एवं इनके सामप्रकृतिक रागों की चर्चा की गई है तथा आपको स्वर समूहों द्वारा पहचानने के विषय में भी बताया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप राग को समझ सकेंगे और रागों की सफल कियात्मक प्रस्तुति कर सकेंगे।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

1. दिये गये राग परिचय के द्वारा आप राग का सुन्दर प्रयोग कर सकेंगे।
2. राग के मुख्य स्वर समूह द्वारा आप राग पहचान सकेंगे एवं इन स्वर समूह के प्रयोग से राग स्थापित कर सकेंगे।
3. सम्प्रकृतिक रागों की चर्चा से आप राग को एक दूसरे से अलग कर राग का स्वरूप स्थापित कर सकेंगे।

4.3 राग श्यामकल्याण – पूर्ण वर्णन

'थाट कल्याण मानत गुनि जन प–स संवाद अनूप
ओडत सम्पूरन प्रथम रात्रि, श्याम कल्याण स्वरूप'

श्यामकल्याण राग कल्याण थाट से उत्पन्न राग है। आरोह में गंधार एवं धैवत स्वर वर्जित है। अवरोह में सातों स्वरों का प्रयोग होता है, इसलिए इसकी जाति औडव–सम्पूर्ण है। वादी स्वर पंचम तथा सम्वादी षड़ज है, इस राग में दोनों मध्यमों (तीव्र म एवं शुद्ध म) का प्रयोग होता है, शेष स्वर शुद्ध हैं। यह राग कल्याण का एक प्रकार है नाम से यह तथ्य स्पष्ट है। इस नाम से ऐसा प्रतीत होता है कि इस राग में श्याम और कल्याण इन दो रागों का मिश्रण है किन्तु ऐसा नहीं है। इसमें कामोद एवं कल्याण का सुन्दर मिश्रण है। गंधार अवरोह में अल्प और वक्र हैं पूर्वांग में कामोद अंग करने के लिए गंधार अल्प करते हैं और ध प मं प म रे स्वर का प्रयोग करते हैं। गंधार का प्रयोग केवल एक ढंग से होता है जैसे– ध प मं प, ग म रे सा, प्रत्येक आलाप के अन्त में ग म रे, स्वर प्रयोग करते हैं।

आरोह में तीव्र मध्यम और अवरोह में शुद्ध मध्यम का प्रयोग होता है। इस राग में निषाद बहुत महत्वपूर्ण है यद्यपि अवरोह में धैवत वर्ज्य माना गया है फिर भी निषाद पर धैवत का कण दिया जाता है, यह कण कल्याण रागांग का सूचक है। कुछ विद्वानों ने इसे सम्पूर्ण जाति का राग माना है। मारिफुन्नगमात में इसे ऐसा ही माना गया है। वादी स्वर पंचम मानने से यह राग उत्तरांग प्रधान होना चाहिये किन्तु वास्वत में यह पूर्वांग प्रधान राग है इसलिए कुछ विद्वानों ने इसमें षड़ज वादी और पंचम सम्वादी माना है। कुछ विद्वानों ने इसमें ऋषभ वादी और पंचम सम्वादी माना है।

आरोह – सा रे मं प नि सां।
अवरोह – सां नि ध प मं प ध, मं प, ग म रे, नि़ सा।
पकड़ – रे मं प, ध प मं प, ग मं रे, नि़ सा।
मुख्य स्वर संगतियां – रे मं प, मं प, ग म रे सा
न्यास के स्वर – रे, प और नि

4.3.1 सम्प्रकृतिक राग – शुद्ध सारँग और कामोद।

शुद्ध सारँग राग से बचने के लिए अवरोह में गंधार का प्रयोग किया जाता है और कामोद राग से बचने के लिए निषाद को बढ़ाते हैं एवं गंधार का लंघन करते हैं। कामोद में रे, प, स्वर समूह बहुत महत्वपूर्ण है किन्तु श्याम कल्याण राग में यह संगति नहीं लेते हैं। मं प तथा म रे स्वर प्रयोग करते हैं।

4.3.2 स्वर समूह द्वारा राग पहचाननाः–

(1) रे मं प मं प, ग म रे सा

(2) सा म रे, मं प, ग म रे, प, मं ग, म रे नि़ सा,

(3) मं प ध, मं प, ग म रे, सा नि़, प़ प़ सा रे सा।

(4) ममरेसा नि़सारेमंपधमंप, गमरे, नि़सा,

(5) सांनिधप, मंप, रे, मं प, गमरे, नि़ रे सा।

(6) रे मं प, मं प सां, नि सां रें मं प, गं मं रें सां।

उपयुक्त स्वर समूह राग वाचक स्वर समूह हैं जो कि राग में बार–बार प्रयुक्त होते हैं जिससे श्यामकल्याण राग का स्वरूप स्थापित रहता है जिससे आप लोग राग पहचानेंगे।

4.4 राग जैजैवन्ती – पूर्ण वर्णन

विवरण – यह राग खमाज थाठ के जन्य रागों में से एक है। इसकी जाति सम्पूर्ण है। वादी स्वर ऋषभ व संवादी पंचम माना जाता है। इसका समय रात्रि के दूसरे प्रहर का अन्तिम भाग मानते हैं। इस राग में दोनों गान्धार व दोनों निषादों का प्रयोग होता है। आरोह में तीव्र ग –नि तथा अवरोह में कोमल ग–नि लेते हैं, तथापि अवरोह करने में तीव्र गान्धार भी ले सकते हैं। कोमल गान्धार केवल अवरोह में लेते हैं, किन्तु वह प्रायः दोनों ऋषभों में जकड़ा हुआ रहता है। प्रचार में इसक सोरठ–अंग का राग मानते हैं। यह मिश्र राग है। गौड़, बिलावल और सोरठ, इन तीन रागों का मिश्रण इसमें पाया जाता है। इस राग में मन्द्र पंचम और मध्य ऋषभ की संगति सुन्दर लगती है।

कोमल गान्धार के करण कुछ संगीत–मर्मज्ञ इसे 'परमेल–प्रवेशक राग' ऐसी संज्ञा देते हैं। परमेल–प्रवेशक का अर्थ है– अगले ठाठ में ले जाने वाला राग। तीव्र रे, धा तथा तीव्र ग लगने वाले राग गाने के पश्चात कोमल गान्धार व कोमल निषाद लगने वाले रागों का वर्ग आता है। उसमें प्रवेश कराने वाला यह राग है, ऐसा समझा जाता है। अर्थात् खमाज ठाठ के राग समाप्त करके काफी ठाठ के राग आरम्भ होने की सूचना यह राग देता है।

आरोह –	सा,	रे	ग	म	प,	नि	सां।			
अवरोह –	सा	नि	ध	प,	ध	म	रे	ग	रे	सा।
पकड़ –	रे	ग	रे	सा,	नि़	सा	ध़	नि़	रे,	

न्यास के स्वर – रे, म, प,

4.4.1 समप्रकृतिक राग – खमाज, देश, झिझोंटी

4.4.2 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना :–

1. **सा ध़ नि़ रे, रे ग रे सा।**
2. **रे ग म प, ध ग म रे।**
3. **म प नि ध प, ध ग म रे।**
4. **रे ग रे सा, नि़ सा ध़ नि़ रे।**
5. **म प नि सां, ध नि रे।**

4.5 राग पूरियाकल्याण – पूर्ण वर्णन

पूरियाकल्याण राग की उत्पत्ति, कल्याण तथा पूरिया नामक इन दो रागों के समन्वय से हुई है। कुछ विद्वानों पूरियाकल्याण और पूर्वाकल्याण को एक ही राग मानते हैं किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है, दोनों राग एक दूसरे से अलग है। पूर्वाकल्याण राग में मारवा, पूरिया एवं कल्याण का मिश्रण है। कुछ लोग पूर्वाकल्याण में दोनों धैवत का प्रयोग करते हैं, जो उचित लगता है क्योंकि पूर्वा में पूर्वी मारवा और पूरिया का मिश्रण होने से कोमल धैवत का प्रयोग किया जाता है। पूर्ण कल्याण के कोमल धैवत वाले प्रकार में पूर्वी, मारवा, पूरिया तथा कल्याण का सम्मिलित रूप मानना चाहिए। पूर्वाकल्याण में ऋषभ स्वर मारवा की तरह तथा पूरिया कल्याण में ऋषभ स्वर पूरियाकी तरह प्रयुक्त होता है। इसलिए पूरियाकल्याण राग पूर्वाकल्याण से अलग राग है इसमें किसी प्रकार का राग भ्रम नहीं है।

पूरियाकल्याण राग की उत्पत्ति मारवा थाट से होती है। यह सांयकाल गाया जाने वाला संधिप्रकाश राग है। संधिप्रकाश राग होने के कारण ही यह परमेल प्रवेशक राग भी है। कोमल ऋषभ के साथ शुद्ध धैवत होने के कारण यह राग अपने बाद आने वाले रे ध कोमल वाले सांयकालीन संधिप्रकाश रागों के समय (चार से सात बजे सांयकाल के अन्तिम भाग में) इस राग को गाना चाहिए। प्रायः लोग इसे देर रात्रि तक भी गाते हैं, जो शास्त्र की दृष्टि से उचित नहीं माना जाता है। इस राग का वादी स्वर गंधार तथा सम्वादी निषाद है। कुछ विद्वान षड़ज वादी तथा पंचम सम्वादी मानते हैं किन्तु दूसरा मत उचित प्रतीत होता है क्योंकि पूरियाकल्याण के पूर्वांग में पूरिया का लक्षण होने के कारण नि़ रे ग व रे नि़, स्वर का चलन राग में स्वाभाविक रूप से होने लगता है जिस कारण षड़ज का बार–बार लंघन होना शुरू हो जाता है। यहाँ पर एक बात ध्यान देने योग्य है कि संधिप्रकाश राग में (चाहे वह सुबह का हो या शाम का) षड़ज स्वर वादी नहीं होता है, यदि प्रातः कालीन संधिप्रकाश राग है तो म, प, ध इस स्वरों से वादी स्वर होगा। सुबह के संधिप्रकाश राग उतरांग वादी होते हैं उनमें कभी भी मध्यम के नीचे के स्वर वादी नहीं होंगे, तथा सांयकाल के संधिप्रकाश के सभी रागों में करीब–करीब नि़ रे ग का चलन है तथा रे नि़ की संगति होती है इस दशा में षड़ज स्वर वादी स्वर के योग्य उचित प्रतीत नहीं होता है।

आरोह – नि़ रे, ग, मं ध नि सां ।
अवरोह – सां नि ध प, मं ग रे सा।।
पकड़ – नि़ रे ग, मं ध प, मं ग, रे ग रे मं ग, रे सा

इस राग की जाति षाड़व–सम्पूर्ण है क्योंकि इसके आरोह में पंचम स्वर वर्जित है तथा अवरोह सम्पूर्ण है।

मुख्य स्वर संगतियां – सा, नि़ ध़ नि़, रे ग रे सा।
नि़ रे मं ग नि़ रे सा, नि़ ध़ नि़।
नि़ रे ग, मं ध प, मं प मं ग, रे ग रे मं ग विशेष स्वर संगति।
कल्याण अंग – मं ध नि नि ध प, सां नि ध नि ध प, मं ध नि ध, मं ध प इन स्वर समुदाय से कल्याण राग स्पष्ट होता है।
न्यास के स्वर – नि़ सा, ग, प।

4.5.1 समप्रकृतिक राग–पूरिया, कल्याण एवं पूरिया धनाश्री है।

4.5.2 स्वर समूह द्वारा राग पहचानना:–

(1) नि़ रे़ सा, नि़ ध़ नि़, रे़ नि़ ध़ प़ मं ध़ नि़ रे़ सा।
(2) नि़ रे़ ग, रे़ सा, (सा) नि़ ध़ नि़ रे़ मं ग।
(3) रे़ ग मं प, मं ग, मं रे़ ग रे़ मं ग, मं ग रे़ सा।
(4) ग रे़ ग, रे़ ग रे़ सा, मं ग रे़ ग रे़ मं ग रे़ सा।
(5) नि़ ध़ नि़ रे़ ग, मं प, मं ग रे़ मं ग, रे़ ग रे़ सा।
(6) प मं ग रे़ सा, नि़ रे़ ग मं प, ग मं ध नि सां ।
(7) मं ध नि सां, नि रें़ सां, नि रें़ गं रें सां ।
(8) नि रें़ गं रें़ मं़ गं, मं़ गं रें़ सां, नि ध नि, सां ।

उपयुक्त छोटे–छोटे स्वर समूह राग वाचक स्वर समूह हैं जिनका प्रयोग राग में बार–बार किया जाता है। इन स्वरों के माध्यम से राग के हर पहलू पर विशेष ध्यान आकर्षित होता है तथा तुरन्त ही मन मस्तिष्क पर राग छाने लगता है। इन स्वर समूह द्वारा पूरियकल्याण राग का स्वरूप स्थापित है, इससे आप लोग राग पहचानेंगे।

4.6 राग भैरव – पूर्ण वर्णन

'भैरव थाट रे–ध कोमल, धैवत ऋषभ सम्वाद
प्रात समय गुनि जन गावत, भैरव पूरण राग'

भैरव राग भैरव थाट का राग है, इस राग में ऋषभ एवं धैवत स्वर कोमल तथा शेष स्वर शुद्ध प्रयुक्त होते हैं। इस राग के आरोह तथा अवरोह में सातों स्वरों का प्रयोग होता है, इसलिए इस राग की जाति सम्पूर्ण–सम्पूर्ण है। इस राग का वादी स्वर धैवत तथा सम्वादी ऋषभ है। यही दो स्वर इस राग में आन्दोलित होते हैं। इसका गायन समय प्रातः काल प्रथम प्रहर है इसलिए इसे प्रातः कालीन संन्धिप्रकाश राग कहते हैं। यह गम्भीर प्रकृति का राग है तथा यह राग कालिंगड़ा राग से मिलता–जुलता है। इसका गम्भीर स्वभाव तथा रे–ध पर आन्दोलन भैरव राग को कालिंगड़ा से अलग कर देता है। यह अपने थाट का आश्रय है जैसे– अहीर भैरव, आनन्द भैरव आदि। इस राग में कभी–कभी पंचम को छोडकर ग म ध़ नि सां की भाँति तार सां पर जाते है। इसके आरोह में ऋषभ को अल्प रखते हैं, राग कालिंगड़ा के रे–ध स्वर की तरह आन्दोलन नहीं करते हैं। कालिंगड़ा राग में गांधार, मध्यम एवं निषाद पर न्यास किया जाता है, जैसे– सा रे़ ग म, प म ग, म प ध़ प, ग म ग, ग म प प, म ग रे़ सा इस प्रकार स्वर समूह दर्शाये जाते हैं जबकि भैरव राग में सा रे रे़ सा, सा ग म रे़, सा, ग म धध़ प, म ग म रे़ सा इस स्वर समूदाय को लेते हैं। यह गम्भीर प्रकृति का लोकप्रिय एवं मधुर राग है। इसमें विलम्बित ख्याल, मध्यलय ख्याल, तराना ध्रुपद आदि गाये जाते हैं। गम्भीर प्रकृति होने के कारण इसमें ठुमरी नहीं गायी जाती है।

आरोह –सा रे़ ग म, प ध़ नि सां ।
अवरोह –सां नि ध़ प, म ग रे़, सा।
पकड़ –ग म ध़ ध़ प, ग म रे़ रे़ सा।

मुख्य स्वर समुदाय– सा रे़ रे़ सा, ध़ नि़ सा।
ग म रे़ ऽ रे़ सा, ध़ नि़ सा रे़ ऽ सा।

ग म ध़ ऽ ध़ऽप, म प ग म रे़ ऽ रे़ ऽ सा।

न्यास के स्वर – सा रे़ प और ध़

4.6.1 सम्प्रकृतिक राग – कालिंगड़ा तथा रामकली

4.6.2 स्वर समूह द्वारा राग पहचाननाः–

(1) सा रे़ रे़ सा, ध़ नि़ सा रे़ सा।
(2) ग म रे़ऽसा, ध़ ध़ नि़ सा रे़ सा।
(3) नि़ सा ग म प, ग म ध़ ध़ प।
(4) सा ध़ ध़ प, ग म प, ग (म) रे़ सा।
(5) म प ग म ध़ ध़ प, नि ध़ प, ग म रे़ ऽ सा।
(6) ग म ध़ नि सां, ध़ नि सां, गं मं रें़ रें़ सां ।

उपयुक्त स्वर समूह राग वाचक स्वर–समूह है, जो कि राग में बार–बार प्रयोग किये जाते है। इन स्वर समूहों द्वारा भैरव राग का स्वरूप स्थापित रहता है, इन छोटे–छोटे स्वर समूहों द्वारा आप लोग राग को पहचानेंगे।

4.7 राग केदार – पूर्ण वर्णन

'मध्यम द्वै तीवर सबहि, आरोहत रिग हान ।
समसंवादी वादितें केदारा पहिचान' ।।(रागचन्द्रिकासार)

केदार राग कल्याण थाट से उत्पन्न माना जाता हैं। इस राग में दोनो मध्यमों (तीव्र म एवं शुद्ध म) का प्रयोग होता है। तीव्र मध्यम का प्रयोग आरोह में होता है तथा इस राग की एक विशेषता ऐसी है कि कभी–कभी अवरोह में दोनों मध्यम एक के बाद एक लिए जाते हैं। इस राग का वादी स्वर शुद्ध मध्यम तथा सम्वादी षड़ज है। इस राग का आरोह करते समय षड़ज से एकदम मध्यम पर जाना होता है जैसे– सा म म प, मं प ध प म, इस स्वर समूह से राग केदार का आरोह किया जाता है। अवरोह मे कोमल निषाद का अल्प प्रयोग धैवत की संगति से कभी–कभी करते हैं। उस समय कोमल निषाद का प्रयोग विवादी स्वर के रूप में प्रयुक्त होता है। राग हमीर के वर्णन में दोनो मध्यम लगने वाले रागों के विषय का जो साधारण नियम दिखाई देता है, वह इस राग पर भी लागू होता है। केदार राग का आरोह करते समय ऋषभ व गंधार स्वर वर्जित करते है तथा अवरोह में गंधार वक्र व दुर्बल रखा जाता है, इसलिए इस राग की जाति ओड़व–षाडव मानी जाती है। केदार राग में गंधार स्वर का प्रयोग कर रागांग अर्थात राग के अंग को संभालने में बड़ी सावधन बरतनी पड़ती है। वहॉ **'गमपगमरेसा'** ऐसा स्पष्ट प्रयोग होने से कामोद आदि राग दिखाई देने लगते हैं तथा **'मगरेसा'** ऐसे प्रयोग से बिलावल आदि रागों की छाया दिखाई देनी सम्भव है इसलिए केदार राग में गंधार गुप्त है, ऐसा गायकों का मानना है। यह स्वर शुद्ध मध्यम की चमक से हमेशा ढ़का हुआ रहता है। इस राग का गायन समय रात्रि का प्रथम प्रहर है। केदार के कई प्रकार प्रचलित हैं। जैसे– शुद्ध केदर, चाँदनी केदार, मलुहा केदार एवं जलधर केदार। केदार राग लोकप्रिय एवं मधुर राग है।

आरोह – सा म, म प, ध प, नि ध, सां ।
अवरोह – सां, नि ध, प, मं प ध प, म, ग म रे सा ।

पकड़ – सा, म, म प, ध प म, प म, रे सा ।
'गमरेसा' स्वर–समूह राग कामोद, हमीर एवं केदार तीनों में ही प्रयुक्त होता है।

मुख्य स्वर समुदाय– सा म, म प, मं प ध प, म ।
सा रे सा म, सा म ग प, ध प म ।
सा म, ग प, मं ध प म ।

न्यास के स्वर – सा म, प

4.7.1 समप्रकृतिक राग – हमीर, कामोद

4.7.2 स्वर समूह द्वारा राग पहचाननाः–
(1) सा रे सा, सा म ग प, म रे सा
(2) मं प ध प, मे, प म रे सा रे सा ।
(3) सा म, ग प, मं ध, प म
(4) मं प ध नि ध प म, प म रे सा ।
(5) सां नि ध प, मं प ध प, म ग, म रे सा ।
(6) प प सां रें सां, म ग, प मं, ध प, म ।
(7) मं प ध प म, म ग, प मं, ध प, म।

अभ्यास प्रश्न

क) एक शब्द में उत्तर दीजिए :–
1. श्यामकल्याण राग का थाट बताइये।

ख) सही अथवा गलत बताइये :–
3. केदार राग का वादी स्वर पंचम है।

ग) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–
1. केदार राग में दोनों.....का प्रयोग होता है।
2. श्याम कल्याण राग का गायन समय.....है।

4.8 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप पाठ्यक्रम के रागों का पूर्ण परिचय प्राप्त कर चुके हैं। परिचय के अन्त में दिये गये स्वर समूह द्वारा आप राग पहचानेंगे एवं समप्रकृतिक रागों के अध्ययन से आप राग को एक दूसरे से अलग कर पाएँगे। इस इकाई के पूर्ण अध्ययन के बाद आप राग के स्वरूप को क्रियात्मक रूप में प्रस्तुत कर पाएँगे। राग स्वरूप, राग के पकड़ स्वर, वादी–सम्वादी स्वर, स्वरों का अल्पत्व–बहुत्व प्रयोग, न्यास के स्वर आदि से स्थापित होता है, जिन सबके बारे में पाठ्यक्रम के प्रत्येक राग के सन्दर्भ में बताया गया है। इससे आप राग की सुन्दर प्रस्तुति कर सकेंगे।

4.9 शब्दावली

- **वादी स्वर** – राग के मुख्य स्वर जिसका प्रयोग राग में बार–बार किया जाता है।
- **सम्वादी स्वर** – इसका प्रयोग राग में वादी स्वर के साथ सम्वाद के रूप में किया जाता है

- **अनुवादी स्वर** – इसका प्रयोग राग में वादी, सम्वादी के बाद प्रयोग किया जाता है।
- **विवादी स्वर** – इस स्वर का प्रयोग राग में बहुत खूबसूरती के साथ किया जाता है। वैसे विवादी स्वर का शाब्दिक अर्थ बिगाड़ पैदा करने वाला होता है, पर गुणजन इसका प्रयोग कहीं–कहीं खूबसूरती के लिए करते हैं।
- **अल्पत्व** – जिसका प्रयोग अल्प रूप में होता है
- **बहुत्व** – जिसका प्रयोग बहूतायत रूप से होता है।
- **लंघन** – एक स्वर से दूसरे स्वर को लांघना।
- **न्यास** – जिस स्वर पर रूका जाता है वह न्यास के स्वर होते हैं।

4.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क) एक शब्द में उत्तर दीजिए :–

1. कल्याण

ख) सही अथवा गलत बताइये :–

1. असत्य

ग) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–

1. दोनों मध्यम 2. रात्रि का द्वितीय प्रहर

4.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बसंत, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय हाथरस।
2. भातखण्डे, पंडित विष्णुनारायण, *क्रमिक पुस्तक मलिका भाग–2,3,4*, संगीत कार्यालय हाथरस।
3. झा, पंडित रामाश्रय''रामरँग'', *अभिनव संगीतांजलि – भाग 1, 3, 4*।
4. पाठक, जगदीश नारायण, *संगीतशास्त्र प्रवीण*, श्री रत्नाकर पाठक, 27, महाजनी टोला इलाहाबाद
5. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, *मधुर स्वर लिपि संग्रह भाग–2*, संगीत सदन प्रकाशन, साउथ मलाका, इलाहाबाद।

4.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम के किन्हीं तीन रागों का पूर्ण परिचय दीजिए।

इकाई 5 – संगीतज्ञों(एन0 राजम, हाफिज अली खॉ, उ0 बिस्मिल्लाह खॉ, पं0 वी0जी0 जोग व अन्नपूर्णा देवी) का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 भारतीय संगीत एवं संगीतज्ञ
5.4 संगीतज्ञों की जीवन शैली एवं योगदान
  5.4.1 विदुषी एन0 राजम
  5.4.2 उस्ताद हाफिज अली खाँ
  5.4.3 उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ
  5.4.4 पंडित वी0जी0 जोग
  5.4.5 विदुषी अन्नपूर्णा देवी
5.5 सारांश
5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर, (एम0पी0ए0एम0आई0–502) पाठ्यक्रम की पांचवी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के पश्चात आप बता सकते हैं कि वाद्य कितने प्रकार के होते हैं तथा तंत्र वाद्य के अन्तर्गत किन वाद्यों का समावेश होता है। आप तन्त्र वाद्य के घरानों के विषय में भी आप जान चुके हैं। आप पाठ्यक्रम के रागों के विषय में भी जान चुके होंगे।

भारतीय संगीत के लिए समर्पित विद्वान संगीतज्ञों ने जीवन तथा संगीत के प्रति उनके योगदान को जानते हुए इस इकाई में विस्तार से वर्णन प्रस्तुत किया गया है। भारतीय संगीत के क्षेत्र में उनकी गहन साधना तथा उनके विचारों को भी प्रस्तुत किया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान को समझ सकेंगे तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को भी समझ सकेंगे।

5.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- बता सकेंगे कि विद्वान संगीतज्ञों का संगीत के क्षेत्र में क्या महत्व है।
- समझ सकेंगे संगीतज्ञों को अपनी साधना के क्षेत्र में आनन्द, यश, सम्मान एवं धन प्राप्त होता है तथा इसीलिए वह विशेष अभ्यास में निरन्तर लगे रहते हैं।
- संगीत के महत्व को संगीतज्ञों एवं शास्त्रकारों के माध्यम से जानते हुए विश्लेषण कर सकेंगे।
- संगीत कलाकार के अपनी कला सम्बन्धी तीन मुख्य उद्देश्य होते हैं:–
  1. अपनी कला द्वारा रोजी का साधन।
  2. कला सम्बन्धी अपने ज्ञान का विस्तार करना।
  3. कला में पूर्ण सिद्धि करके अपनी इच्छा पूर्ति करना।

5.3 भारतीय संगीत एवं संगीतज्ञ

संगीत का परम लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति है। इसके अतिरिक्त मनोरंजन एवं आनन्द प्राप्ति उसका द्वितीय पक्ष है। दोनों ही दृष्टिकोण में मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण होता है। संगीतज्ञ, संगीत प्रदर्शन द्वारा अपने मनोरंजन के साथ–साथ दूसरों का भी मनोरंजन करता है। जिस समय संगीतज्ञ द्वारा समाज को अधिकाधिक लाभ पहुँचने लगता है उस समय उसका व्यक्तित्व ऊपर उठ जाता है। संगीतज्ञ अपनी उपयोगिता बढ़ाने का प्रयत्न करता है तो उसका व्यक्तित्व निःसन्देह उच्च हो जाता है। संगीतज्ञ में आत्म प्रतिष्ठा तथा अपने मर्यादा की रक्षा की भावना निरन्तर जागृत रहती है। सच्चे कलाकार के सामने संसार की बड़ी–बड़ी विभूतियाँ नतमस्तक हो जाती है। संगीतज्ञ सदा मर्यादित तथा सभ्य संगीत प्रेमियों से घिरा रहता है। वह जहाँ भी जाता है उसको पूर्ण सम्मान प्राप्त होता है। प्राचीनकाल से ही संगीतज्ञों का समाज में आदर होता रहा है। उस समय वे संगीत प्रदर्शन के लिए मात्र सम्मान एवं स्वागत के अभिलाषी थे। कुछ संगीतज्ञ दृव्योपार्जन को महत्व देते थे। किन्तु उनकी प्रतिष्ठा समाज में कम थी। आधुनिक युग में व्यक्तित्व का मापदंड परिवर्तित हो गया है जो संगीतज्ञ निःशुल्क सेवा के रूप में संगीत प्रदर्शन करता है उसकी प्रतिष्ठा उचित रूप नहीं होती, उनका विशेष स्वागत भी नहीं होता किन्तु जो संगीतज्ञ पर्याप्त शुल्क लेते हैं एवं दिखावा करते हैं उनका विशेष रूप से स्वागत किया जाता है। अतः व्यक्तित्व निर्माण के लिए संगीतज्ञ को वातावरण एवं परिस्थितियों से परिचित होकर उसके अनुकूल आचरण करने का प्रयास करना चाहिए। कलाकार के व्यक्तित्व का प्रभाव उसके संगीत प्रदर्शन तथा श्रोताओं पर बहुत अधिक पड़ता है। व्यक्तित्वहीन कलाकार का संगीत प्रदर्शन प्रभावोत्पादक तथा आकर्षक नहीं होता है। संगीत एवं संगीतज्ञ का सम्बन्ध अत्यन्त प्रगाढ़ है दोनों का अस्तित्व एक–दूसरे के बगैर नहीं है। संगीत तो सृष्टि की उत्पत्ति से पहले भी व्याप्त था। आज तक उसके यथार्थ रूप को संगीतज्ञ ही समाज के सामने लाए हैं इसलिए ऐसे में संगीतज्ञों का दायित्व और अधिक बढ़ जाता है क्योंकि वह संगीत को जिस रूप में प्रस्तुत करेंगे उसका वही रूप श्रोताओं के मन में घर कर लेगा।

5.4 संगीतज्ञों की जीवन शैली एवं योगदान

संगीत जगत को जिन–जिन विभूतियों ने अपनी कला से अनुप्राणित किया, उन विद्वान संगीतज्ञों के नाम सदा के लिए अमर है। ऐसे ही कुछ संगीतज्ञों के विषय में आप जान सकेंगे। ये संगीतज्ञ वादन के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट पहचान बना चुके हैं। वादन संगीत की श्रेणी में विभिन्न वाद्यों को बजाने वाले संगीतज्ञ आते हैं। इसके अन्तर्गत आप सरोद, सितार, सुरबहार एवं बेला वादन शैली में विश्वविख्यात संगीतज्ञों के जीवन चरित्र एवं संगीत के क्षेत्र में उनके योगदान को जान सकेंगे।

5.4.1 विदुषी एन0 राजम् – डॉ0(श्रीमती) एन0 राजम् का जन्म सन् 1938 में संगीतज्ञों के परिवार में हुआ। श्रीमती डॉ0 एन0 राजम् एक आदर्श सुशिक्षित महिला संगीतज्ञ हैं जो वर्तमान समय में न केवल उत्तरी संगीत में दक्ष हैं, बल्कि कर्नाटक संगीत में भी उतनी ही कुशल हैं। मध्यम कद, सांवला वर्ण, गोल चेहरा, उच्च ललाट, मधुर स्वभाव और इसके साथ जब भी वायलिन के तारों पर अँगुलियाँ तो रसात्मक संगीत की वर्षा हो– ऐसे आकर्षक व्यक्तित्व वाली कलाकार है एन0 राजम्, जो किसी को भी अपनी ओर आकृष्ट करने में पूर्णतया समर्थ हैं। मूलतः यह दक्षिण भारत में रहने वाली हैं। इनके घर में सब कर्नाटक संगीत के प्रतिष्ठित कलाकार होने के बावजूद इन्होंने उत्तर भारतीय संगीत को अपना क्षेत्र बनाया। आपके पिता श्री ए0 नारायण अय्यर कर्नाटक संगीत के एक अच्छे वायलिन वादक थे। अतः बचपन से ही इस वाद्य की ओर उनका झुकाव होना स्वाभाविक था। लगभग पाँच वर्ष की अवस्था में इनकी संगीत शिक्षा इनके पिता द्वारा प्रारम्भ की गई। इस समय कुछ वर्ष आपकी शिक्षा कर्नाटक संगीत की हुई। प्रशिक्षण के दूसरे चरण में उन्हें विख्यात कर्नाटक गायक एवं मद्रास के सेंट्रल कालेज ऑफ कर्नाटक म्यूज़िक के भूतपूर्व प्रिंसिपल संगीत–कलानिधि श्री सुब्रह्मण्यम अय्यर से सीखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस समय आप अपने गुरू के गायन के साथ संगत करने लगी थी। इसी दौरान श्रीमती राजम् ने मद्रास संगीत अकादमी द्वारा आयोजित संगीत प्रतिस्पर्धा में भाग लिया और प्रथम पुरस्कार के रूप में स्वर्ण पदक प्राप्त किया।

अभी तक आप कर्नाटक संगीत का ही अभ्यास कर रही थी, किन्तु बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से जब आपने बी0ए0 की प्राइवेट परीक्षा दी, तब उसमें हिन्दुस्तानी संगीत को भी एक विषय के रूप में लिया और आप प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुई। वे लगभग इसी समय मद्रास में श्री सी0आर0 केलकर के सम्पर्क में आई और इन्हें उनसे हिन्दुस्तानी संगीत सीखने का अवसर प्राप्त हुआ। इन्हें हिन्दुस्तानी संगीत के विभिन्न संगीतज्ञों को सुनने का अवसर भी मिला। सन 1955 में राजम् जी पंडित ओंकारनाथ ठाकुर के सम्पर्क में आई और आपकी वादन प्रतिभा से प्रभावित होकर पंडित जी ने आपको शिष्या के रूप में स्वीकार किया। आप इन दिनों बम्बई में रहती थी। जब भी पंडित जी बम्बई आते, आप उनसे शिक्षा ग्रहण करती। विभिन्न कार्यक्रमों में आप पंडित ओंकारनाथ जी के गायन के साथ वायलिन पर संगत करती थी।

श्रीमती राजम् ने संगीत शिक्षा के साथ–साथ स्कूल और कालेज की शिक्षा को भी महत्व दिया। इसी उद्देश्य से आपने सर्वप्रथम बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से बी0ए0 पास किया। इसी विश्वविद्यालय से आपने संस्कृत में एम0ए0 किया। गन्धर्व महाविद्यालय से बी0म्यूज तथा प्रयाग संगीत समिति से एम0 म्यूज किया। 1949 में आप बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दुस्तानी संगीत की वायलिन के व्याख्यता के पद पर नियुक्त हुई। अब वे बनारस में ही रहने लगीं और

पंडित ओंकारनाथ से बराबर शिक्षा लेती रही। आपने इसी वर्ष पी–एच0डी0 डिग्री की उपाधि हेतु शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया, जिसका विषय था "हिन्दुस्तानी और कर्नाटक संगीत पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन"। इसके अलावा आपने अन्य पुस्तकें भी लिखी हैं।

भारतीय संगीत में योगदान :–

कार्यक्रम – श्रीमती राजम् भारत के लगभग सभी संगीत सम्मेलनों में अपना कार्यक्रम प्रस्तुत कर चुकी है। इन विभिन्न संगीत सम्मेलनों में आप अपना वायलिन कभी संगत के रूप में, कभी युगल रूप में तथा कभी सोलो वादन के रूप में प्रस्तुत करती हैं। आजकल आप मुख्य रूप से सोलो वादन ही करती हैं। आपने जुगलबन्दी कई वादकों के साथ की है। जैसे श्री टी0एन0 कृष्णन् के साथ। आपने कर्नाटक के युगल संगीत कार्यक्रम में भी भाग लिया है। बिसमिल्लाह खाँ के साथ भी कई बार आप जुगलबन्दी कर चुकी हैं। देश के भी सभी ख्याति प्राप्त तबला वादक उनके साथ संगत कर चुके हैं। रेडियो तथा दूरदर्शन के अखिल भारतीय संगीत–सम्मेलनों में भी आप अपना वादन प्रस्तुत करती रहती हैं।

सन् 1960 में श्रीमती राजम् ने रेडियो के नेशनल प्रोग्राम में भाग लिया और सन् 1965 में अपने भ्राता विख्यात वायलिन वादक श्री टी0एन0 कृष्णन् के साथ 'कर्नाटक युगल संगीत कार्यक्रम' में भाग लिया। उन्होंने पं0 ओंकारनाथ ठाकुर और श्रीमती एम0एस0 सुब्बलक्ष्मी के साथ भी अनेक बार संगति की।

वादन शैली – आपकी वादन शैली गायकी का अंग रही है। इसी अंग को आपने मुख्य रूप से अपनाया है। वैसे तो वायलिन पर अन्य संगीतकार भी गायकी अंग प्रस्तुत करते हैं लेकिन शुद्ध रूप में आप ही गायन शैली का सही अनुशीलन करती हैं। श्रीमती राजम् वायलिन पर विलम्बित और द्रुत ख्याल के माध्यम से गायकी अंग की अवतारणा करती है। उनका वायलिन सुनकर ऐसा लगता है कि जैसे कोई संगीतज्ञ स्वयं गा रहा है। श्रीमती राजम् विलम्बित बंदिश की लय गायन के समान रखकर उसे बखूबी प्रस्तुत करती हैं। आकर्षक एवं क्रमबद्ध आलाप के पश्चात गमक और छन्द युक्त तानें इनके वादन का मुख्य अंग है। तानों के वादन में एक बो के साथ घसीट की क्लिष्ट तानें तथा कट बो के तानों का प्रयोग इनके वादन को विशेष आकर्षण प्रदान करता है। मध्यलय बंदिश की योग्य प्रस्तुति के बाद यह द्रुत लय में झाला वादन करती हैं जो अत्यन्त प्रभावित करता है। राग बागेश्री, दरबारी कान्हणा, मालकौंश, यमन और भैरवी कुछ ऐसे राग है जो इनके वायलिन से बजने पर भारतीय संगीत की महानता को व्यक्त करते हैं। उपशास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत यह ठुमरी आदि का भी वादन करती हैं। पं0 डी0वी0 पलुस्कर के भजनों को इनके वायलिन में सुनकर जो आत्म शान्ति मिलती है वह शब्दों में बताना कठिन है। उनके वादन पर ओंकारनाथ जी गाने का पूरा प्रभाव दिखाई पड़ता है। उनके हाथों के सफाई और उनकी तैयारी प्रशंसनीय है। आलाप में हर स्वर का लगाव श्रोता पर अपनी अमिट छाप छोड़ देता है। श्रीमती राजम् ने वायलिन की क्षमताओं को जनता के समक्ष उद्घाटित किया और इस धारणा को मिथ्या सिद्ध कर दिया कि विदेशी वाद्य होने के कारण वायलिन हिन्दुस्तानी संगीत के लिए उपयोगी नहीं है। उन्होंने यह प्रमाणित कर दिया कि यह वाद्य भारतीय संगीत के लिए सारंगी से भी अधिक अनुकूल है। आपके अनेक रिकार्ड तथा कैसेट निकल चुके हैं।

श्रीमती राजम् केवल भारत में नहीं, विदेशों में भी अपना वादन प्रस्तुत कर चुकी हैं। रूस, जर्मन, चेकोस्लोवाकिया, अमेरिका, कनाडा और फ्रांस के श्रोताओं को भी आप अपने वादन से प्रभावित कर चुकी हैं। 1984 में आपको राष्ट्रपति द्वारा पद्मश्री के राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में कार्यरत रहते हुए आप प्रोफेसर के पद से सेवानिवृत्त हुईं। इनके वायलिन वादन को सुनकर कह सकते है कि इन्होंने कर्नाटक संगीत की

तकनीक को उत्तर भारतीय संगीत में प्रयोग करके उत्तर भारतीय वायलिन वादन की कला को समृद्ध बनाया है।

शिष्य परम्परा – इनकी प्रमुख शिष्याओं में सुपुत्री संगीता एवं भतीजी कला रामनाथ दोनों ही बड़ा मधुर वायलिन वादन कर रही हैं।

5.4.2 उस्ताद हाफिज़ अली खाँ – ऐसा माना जाता है कि सरोद वाद्य ढाई–तीन सौ वर्ष पूर्व ईरान–अफगानिस्तान के रास्ते भारत आया। यह भी कि यह रबाब का परिष्कृत रूप है। कुछ मानते हैं कि यह वाद्य भारत में बहुत पहले से था किंतु इसका नाम व स्वरूप कुछ भिन्न था। वैसे वाद्यों में समय–समय पर गुणी लोग परिवर्तन करते ही रहते हैं। यह कोई नई बात नहीं है। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध व बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में दो प्रमुख सरोद वादक हुए हैं। एक 'मैहर' के उस्ताद अलाउद्दीन खाँ और दूसरे ग्वालियर के उस्ताद हाफिज अली खाँ। दोनो ने ही अपने वाद्य में आवश्यक परिवर्तन किए।

यह सौभाग्य की बात है कि इन दोनों महारथियों में, कुछ विवादी प्रकार के कलाकारों की भांति, कोई रंजिश या मनमुटाव नहीं था। ऐसा सम्भवतः इसलिए भी था कि दोनों की तालीम बीनकार घराने के रामपुर दरबार के उस्ताद वजीर खाँ द्वारा हुई। हाफिज अली साहब उस्ताद अलाउद्दीन के बारे में कहते थे– "दादा अलाउद्दीन खाँ पूरे भारत में एक बहुत सुलझे हुए एवं कुशल कलाकार हैं। उन्होंने बड़े परिश्रम से इतना इल्म हासिल किया कि उन्हें संगीत ज्ञान का सागर कहना चाहिए।" उस्ताद अलाउद्दीन खाँ भी हाफिज़ अली खाँ को एक 'जीनियस– मानते हुए कहते थे– "मैं तो संगीत का एक मजदूर हूँ, मेरे मोटे हाथ भी किसानों जैसे हैं किन्तु हाफिज़ अली खाँ साहिब एक कलाकार हैं। उनकी अगुलियाँ दुनिया भर का संगीत बजा सकती हैं। उनका संगीत सुनकर आँख में आँसू भर आते हैं। उन पर खुदा की महर हो।" इस प्रकार एक दूसरे की प्रशंसा करने वालों का युग तो सम्भवतः समाप्त ही हो गया है।

उस्ताद हाफिज़ अली खाँ का जन्म सन् 1888 में ग्वालियर में हुआ। नौ वर्ष की उम्र से ही आपने पिता उस्ताद नन्हे खाँ से संगीत शिक्षा लेना प्रारम्भ कर दिया। हाफिज़ अली खाँ ने महान संगीतज्ञों के घर में जन्म लिया था। उनके पूर्वज गुलाम अली खाँ ग्वालियर के दरबारी संगीतज्ञ थे। उनके बाद उनके पुत्र नन्हें खाँ भी वहीं दरबारी संगीतज्ञ रहे तथा इन्होंने ध्रुपदियों व रबाबियों की परम्परा का निर्वाह किया। हाफिज अली खाँ, नन्हें खाँ के सुयोग्य सुपुत्र थे। उन्होंने पहले अपने वालिद साहब से और बाद में चाचा असगर अली खाँ व मुराद खाँ से तालीम हासिल की। वालिद साहब के निधन के बाद इनकी वालिदा ने भी इनको रियाज़ करवाने में मदद की वह हौसला बढ़ाया। पिता की मृत्यु के बाद हाफिज़ अली खाँ ने सरोद वादन का विशेष रूप से अभ्यास करके 'आफताबे–सरोद' की उपाधि प्राप्त की तथा वंश की कीर्ति को ओर भी उज्जवल किया।

भारतीय संगीत में योगदान :–

वादन शैली – उस्ताद हाफिज अली खाँ एक समर्पित कलाकार थे। उन्होंने वृन्दावन जाकर पं0 चुखालाल व पं0 गणेशीलाल से सैकड़ों ध्रुपद–धमार सीखे। ये दोनों स्वामी हरिदास की डागर वाणी के प्रसिद्ध कलाकार थे। सीखने की ऐसी ललक अनुकरणीय है। बाद में हाफिज़ अली खाँ संगीत की घराने की तालीम हासिल करने रामपुर पहुँचे और महान उस्ताद वजीर खाँ साहब के गंडाबंध शागिर्द बने। जिनसे आपसे होली, ध्रुपद व सुरसिंगार वादन की तालीम ली। खाँ साहब का कहना था कि राग में शास्त्रीय नियमों को तोड़ते हुए द्रुत तानों का इस्तेमाल करना संगीत के लिए बहुत हानिकारक है। बहुत गायक तान लेते समय मिलते–जुलते रागों में भेद नहीं रख पाते। राग की सच्चाई और शुद्धता मुझे बहुत प्यारी है। मैं सिर्फ उतना ही बजाता हूँ, जहाँ तक इन नियमों का पालन हो सकता हो। इनके सरोद वादन में सुरीलापन होना तो स्वाभाविक है क्योंकि संगीत इनके अंग–अंग में बसा था। वह बड़े चैन से अपना वादन प्रस्तुत करते रहे। आलाप के साथ गत में भी सूत का काम इनकी विशेषता थी। मसीतखानी गत वह नहीं बजाते थे इनके स्थान पर वह चौताल तथा धमार में विलम्बित गत प्रस्तुत करते थे। आप एक ही राग को बहुत समय तक बजाने के पक्ष में नहीं थे।

हाफिज अली खाँ का कंठ–स्वर भी बहुत मधुर था। उन पर ग्वालियर के विख्यात हारमोनियम वादक भैया गणपत राव का प्रभाव था। अतः हाफिज अली खाँ सरोद पर ध्रुपद जैसी गम्भीर गायकी व ठुमरी जैसी मधुर शैली समान कुशलता से बजाते थे। हाफिज अली खाँ का सरोद वादन पूरे देशवासियों को पंसद था, विशेष रूप से तंत्रकारों की नगरी कलकत्तावासी तो उन पर मुग्ध थे। बोराल के संगीतज्ञ परिवार ने तो उन्हें काफी समय तक अपने यहाँ मेहमान रखा।

एक बार उस्ताद हाफिज अली खाँ कलकत्ता में किसी जलसे में बजा रहे थे। शंभू सिंह पखावज पर संगत कर रहे थे। चार घंटे बजा लेने के बाद उस्ताद ने सरोद रख दिया। तभी एक तबला वादक दर्शन सिंह ने खाँ साहब से उनके तबला संगत में सरोद बजाने को कहा। खाँ साहब थक चुके थे किन्तु उसके चुनौती भरे आग्रह को टाल न सके। उन्होंने उसी द्रुत लय में बजाना आरम्भ किया जिस पर हाल ही छोड़ा था। कहते हैं कि दर्शन सिंह ने बहुत कस बल से संगत की किन्तु आधा घंटे बाद वह थक कर तबले पर लुढ़क गये और देह त्याग दी। इस हादसे का सदमा, खाँ साहब के मन पर बहुत दिनों तक रहा। वैसे खाँ साहब ने तत्कालीन सभी श्रेष्ठ तबला वादकों या पखावजियों के साथ बजाया किन्तु उनके प्रिय संगतकार पर्वत सिंह, या फिर आबिद हुसैन और रायचंद बोराल थे।

शिष्य परम्परा – मुबारक अली और रहमत अली खाँ उस्ताद हाफिज अली खाँ के सुपुत्र हुए और पैसठ वर्ष की आयु में अमजद अली खाँ का जन्म हुआ। उन्होंने तीनों पुत्रों का संगीत की तालीम दी किन्तु अमजद अली खाँ ने सरोद पर पिता की पूरी तस्वीर उतारने में सफलता प्राप्त की। वे आज देश के सर्वोच्च सरोद वादकों में से एक हैं। वे अपने पिता व घराने का सही प्रतिनिधित्व कर रहे हैं एवं योग्य शिष्य तैयार कर रहे हैं। उस्ताद हाफिज़ अली खाँ 28 दिसम्बर, 1972 को पंचतत्व में विलीन हो गये।

5.4.3 बिस्मिल्लाह खाँ – भारतीय संगीत में शहनाई को प्रतिष्ठा दिलाने का श्रेय बिसमिल्लाह खाँ को है। आपके पूर्वज भोजपुर दरबार में शहनाई वादक रहे। उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ का जन्म 21 मार्च, 1916 को बिहार राज्यान्तर्गत पूर्व रियासत डुमराव में हुआ। आपके पिता का नाम उस्ताद पैंगबर बख्श था जो अपने युग के श्रेष्ठतम संगीतज्ञ रहे। आपके पूर्वज भोजपुर दरबार में शहनाई वादक रहे थे। आपके तीनों मामा अली बख्श, विलायत हुसैन और सादिक अली अच्छी शहनाई बजाते थे। बस फिर क्या था, बिसमिल्लाह खाँ को संगीत का वातावरण और संगीत शिक्षा का अवसर घर पर ही मिल गया। बालक बिस्मिल्लाह खाँ ने शहनाई की प्रारम्भिक शिक्षा अली बख्श से प्रारम्भ की। अली बख्श शहनाई के अच्छे वादक होने के साथ–साथ एक अच्छे गायक भी थे। अली बख्श ने इन्हें गायन की शिक्षा भी देना प्रारम्भ किया। बिस्मिल्लाह खाँ के पिता की इच्छा थी कि आप स्कूल में पढ़ाई करें। पिता के जोर जबरदस्ती से आप छः वर्ष की आयु तक स्कूल जाते रहे लेकिन उसका कोई फल नहीं निकला। अन्त में पिता ने हारकर आपको पूरी स्वतंत्रता दे दी। बस फिर बालक बिस्मिल्लाह खाँ की खुशी का क्या कहना। आप संगीत साधना में जुट गये। आप दिन रात गायन तथा शहनाई का रियाज में लगे रहते थे। कुछ समय बाद आपने लखनऊ के मोहम्मद हुसैन से भी गायन की शिक्षा ली। आपने अपने मामा अली बख्श के साथ विभिन्न स्थानों में शहनाईवादन का कार्य प्रारम्भ किया। आपके चाचा भी बहुत अच्छे शहनाई वादक थे। चाचा वाराणसी के विश्वनाथ मन्दिर में नियमपूर्वक नित्य प्रति नौबत बजाते थे। एक बार मन्दिर में संगीत का जलसा हुआ, जिसमें खाँ साहब ने अपने चाचा के साथ गये। वहाँ चाचा के शहनाई बजा लेने के बाद उन्होंने शहनाई बजाई। उनके चाचा को 'स्वर्ण पदक' एवं स्वय खाँ साहब को 'रजत पदक' मिला। इस कार्यक्रम के बाद उनके चाचा ने उन पर और भी अधिक ध्यान देना प्रारम्भ किया। वे उन्हें अपने साथ आसपास के लगभग सभी राजदरबारों में ले गये। सन् 1930 में चौदह वर्ष की अवस्था में उन्होंने लखनऊ–नुमायश के संगीत जलसे में अपने चाचा के साथ भाग लिया। खाँ साहब ने वहाँ पर भी 'स्वर्ण पदक' जीता। इन सब उपलब्धियों के कारण आप 18 वर्ष की आयु में ही लोकजीवन में विख्यात हो गये।

शहनाई के जादूगर उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ, जिन्हें हम प्रवाद पुरूष कह सकते हैं, जिनके लिए उपाधियाँ, सम्मान गौण हैं। उस्ताद ने बार–बार कहा है, "मैं वह बजाता हूँ जो अल्लाह ने दिया है– वह दैवी सुर है, जिसने पाया वह निहाल है। सर्वशक्तिमान से प्राप्त 'सुर' की मेरे द्वारा प्रस्तुति से रसिक श्रोता प्रभावित होते हैं तो मेरा इस दृष्टि से प्रसन्न होना स्वाभाविक है कि मैं उन्हें 'कुछ' दे सका।" खाँ साहब ने एक अवसर पर कहा भी था कि, 'सुर' सच्चा स्वर पाने के लिए 'तपस्या' करनी होती है, धीर भाव से साधना की लम्बी यात्रा करनी होती है। फिर भी उस 'परम ज्योति' की एक किरण मिल जाए तो यह भाग्य की बात है।" 'संगीत कला विहार' के अनुसार खाँ साहब ने एक अन्य अवसर पर कहा कि कलाकार के रूप में बाहरी आकर्षणों से मैं विचलित नहीं होता।

खाँ साहब ने कहा, "मैं संगीतकार हूँ, राजनेता नहीं; हमसे सात सुरों के बारे में बात कीजिए, जिनसे हमारी दुनिया बनी है। सुर और ताल ही जिसकी जिन्दगी रही हो, ऐसे प्रतिष्ठित शहनाई नवाज ने कहा कि संगीतकार को संगीत के लिए जाना जाना चाहिए, उसे उसकी प्रतिभा और क्षमता के अनुरूप मिलना चाहिए। हालांकि प्रतिभा अल्लाह की मेहरबानी है, लेकिन कोशिश

तो करनी ही चाहिए। वार्ता के अनुसार देहरादून में खाँ साहब ने उक्त बात कहते हुए बताया कि कठिन परिश्रम और अनुशासन से ही इस कला में महारत हासिल की जा सकती है। देश के सर्वोच्च अलंकरण मिल जाने पर भी खाँ साहब के चिन्तन में अध्यात्म का उच्चतम स्थान है और वे मानते थे कि संगीत एवं नृत्य यथार्थ में साधना है। अधिकाधिक लोगों को इनकी शिक्षा दी जानी चाहिए। उनके लिए शहनाई ईश्वर–अल्लाह से जुड़ने का साधन है। उनका कहना है कि शहनाई को भारतीय संगीत में शुभ माना जाता है।

खाँ साहब की मान्यता है कि संगीत में सुर (स्वर) ही शुद्ध हैं, उनके साथ धोखा नहीं हो सकता और वह किसी को धोखा नहीं दे सकता। यह दर्पण के समान है, जिसमें आपको विश्व दिखायी देता है और मैं भी वादन के समय अपना चेहरा देखता हूँ। वादन के आरम्भ में मेरा मन भटकता रहता है और मैं 'असर' की खोज में रहता हूँ, किन्तु जब वह 'सुर' मिल जाता है, तब ह्रदय–मस्तिष्क पर राज करने लगता है और मैं समझ नहीं पाता कि कौन बजा रहा है।"

खाँ साहब के पास लिखित कुछ भी नहीं– राग, स्वर, लय सभी उनकी चिंतनधारा में एकरूप हैं। गुरू रूप में खाँ साहब अपने गुरू से भिन्न नहीं। शिक्षा की नयी पद्धति उन्हें स्वीकार्य नहीं, जिन्हें संगीत से प्रेम है, आसक्ति है, उन्हें वे सिखाते है। 'शागिर्दों का एक पैसा भी हम खाते नहीं'– फीस लेना उनके उसूल के विरूद्ध है। खाँ साहब स्वयं गाकर शिक्षा देते हैं और कहते हैं कि गाये बिना स्वर पर टिकाव, न्यास, मींड आदि समझ में नहीं आते। खाँ साहब का कहना है कि मेरे गुरू मामा के अनुसार प्रत्येक घराने की प्रस्तुति पद्धति भिन्न है, यद्यपि स्वर ताल राग एक ही हैं, अतः सभी घराने को सुनो और उसमें से अपनी पंसद के फूल चुनो। यही खाँ साहब की मान्यता है।

14 वर्ष की आयु से आज तक खाँ साहब ने देश के विभिन्न अंचलों में शहनाई वादन प्रस्तुत कर जैसा इतिहास रचा है, वह अपने आप में अनूठा है और अभी कुछ माह पूर्व यह शरीर से वृद्ध होते हुए भी अंतर से स्वस्थ और सानन्द थे। 70 से अधिक वर्षों की दीर्घ संगीत सेवा के लिए खाँ साहब को जो सम्मान मिले हैं, उनमें से उल्लेखनीय सम्मानों की सूची निम्नवत् हैः–

1. संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार (1956)
2. पद्मश्री अलंकरण (1961)
3. अखिल भारतीय शहनाई चक्रवती (1963)
4. तानसेन सम्मान (1965)
5. पद्मभूषण अलंकरण (1968)
6. पद्मविभूषण अलंकरण (1980)
7. मध्य प्रदेश का तानसेन पुरस्कार (1980)
8. भारत रत्न (2001)
9. शान्ति निकेतन, मराठवाड़ा विश्वविद्यालय एवं बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से 'डॉक्टरेट' की उपाधि।

खाँ साहब का मानना है कि पाठशालाओं से बच्चों को संगीत की अच्छी शिक्षा मिलती है, किन्तु वहाँ एकाग्रता के अवसर नहीं है। भारत सरकार व राज्य सरकारें भी इस क्षेत्र में प्रोत्साहन दे रही हैं। बच्चे अच्छे निकल सकते है, किन्तु ईमानदार गुरू का होना भी आवश्यक है। साथ ही असली श्रद्धा वाले शिष्य भी होना निहायत जरूरी है।

फिल्मों में खाँ साहब को योगदान विशेष उल्लेखनीय है। 'गूंज उठी शहनाई' फिल्म खाँ साहब के मधुर व शुद्ध वादन के कारण अमर हो गयी और यह 'मधुर गूंज' घर–घर में गूंजने लगी, जैसे कि खाँ साहब की माता जी ने अपने नाम 'मिठु बीबी' के अनुरूप कामना की और आर्शीवाद दिया था, खाँ साहब की शहनाई वादन में शहद की मिठास जैसी मृदुता, कोमलता और

सरसता है। खाँ साहब ने कन्नड़ फिल्म 'सनदि अप्पन्ना' में शहनाई बजायी। इस फिल्म में एक शहनाई वादक का जीवन चित्रित है।

यह एक ऐतिहासिक व चिरस्मरणीय घटना ही मानी जाएगी कि स्वतंत्रता के गौरवमय अवसर पर यानी 15 अगस्त, 1947 को लाल किले पर खाँ साहब ने इस घटना का शुभांरभ किया। स्वतंत्रता के 50 वर्ष पूर्ण होने पर 15 अगस्त, 1997 को भी खाँ साहब ने लाल किले के 'दीवाने आम' में शहनाई वादन पेश किया। यह गौरव की बात है।

भारतीय संगीत में योगदान – प्राचीनकाल से ही शहनाई को एक मांगलिक वाद्य माना जाता रहा है। समाज के सभी शुभ पर्वों एवं धार्मिक कृत्यों पर इसका वादन आवश्यक समझा जाता रहा है, किन्तु समाज में इस वाद्य को प्रतिष्ठित स्थान नहीं प्राप्त था। शहनाई वादकों को लोग बहुत निम्न तथा हेय दृष्टि से देखते थे। इसके अतिरिक्त शहनाई को मुख्य रूप से लोक संगीत का वाद्य मानते आये थे। शास्त्रीय संगीत में इस वाद्य का कोई स्थान नहीं था। शहनाई वाद्य को शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में उच्चतर शिखर पर प्रतिष्ठित करने का श्रेय बिसमिल्लाह खाँ को ही है।

कार्यक्रम – उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ ने भारत के हर कोने में शहनाई बजाकर शास्त्रीय संगीत में इस वाद्य को प्रतिष्ठा दिलायी। उन्होंने अपने जीवन में शहनाईवादन के कार्यक्रमों का सिलसिला सन् 1930 में इलाहाबाद में आयोजित भारतीय संगीत समारोह में किया था। सन् 1937 ई0 में कलकत्ता के अखिल भारतीय संगीत समारोह में शहनाईवादन के पश्चात आपने देश में उच्च श्रेणी के कलाकारों में अपना स्थान बना लिया। इसके बाद आप आकाशवाणी तथा अन्य संस्थाओं से शहनाई वादन के लिए आमंत्रित किये जाने लगे। भारतवर्ष में वायलिनवादन वी0जी0 जोग, श्रीमती एन0 राजम्, उस्ताद विलायत खाँ के साथ आपने जुगलबन्दी का मनोहारी प्रदर्शन किया। धीरे–धीरे आपकी ख्याति विदेशों में भी पहुँची। विदेशों से भी आप शहनाई वादन के लिए आमन्त्रित किये जाने लगे। विदेश भ्रमण की श्रृंखला में उन्हें सर्वप्रथम सन् 1962 में अफगानिस्तान के 'राष्ट्रीय दिवस' के पर्व पर भाग लेने के लिए आमंत्रित किया गया। इसके बाद पाकिस्तान द्वारा भी इन्हें आमंत्रित किया गया। सन् 1964 में लन्दन में आयोजित कॉमनवेल्थ आर्टस फेस्टिवल में शहनाई वादन के लिए आपको आमंत्रित किया गया। यहीं पर विश्वविख्यात ओबोवादक मिस्टर ई0 रूथवेल के साथ आपने जुगलबन्दी की। आपकी शहनाई की मधुर ध्वनि ने वहाँ के लोगों का मन मोह लिया। सन् 1967 में मान्ट्रियल में आयोजित 'वर्ल्ड एक्सपोजिशन' में उन्होंने भारत सरकार का प्रतिनिधित्व किया। इस वर्ष अमेरिका में न्यूयार्क में स्थित फिलहार्मिक नामक विश्व के श्रेष्ठतम रंगमंच पर उन्होंने शहनाई वादन प्रस्तुत किया जो भारतवर्ष की उपलब्धि मानी गई। इसी समय अमेरिका के अन्य शहरों में भी आपके शहनाईवादन के कार्यक्रम आयोजित किये गये। इसके बाद आपने ईराक, ईरान और सऊदी अरब आदि देशों का दौरा किया। सन् 1969 में यूनेस्कों के इण्टनेशनल म्यूज़िक काउन्सिल के आमंत्रण पर आपने मध्यपूर्व एशिया के कई देशों एवं यूरोप के फ्रांस, हालैण्ड, आस्ट्रिया, संघीय जर्मन गणराज्य, स्विट्जरलैण्ड, इटली आदि अनेक देशों का भ्रमण किया। सन् 1970 में आप जापान के ओसाका शहर में आयोजित 'एक्सयों 70' में शहनाईवादन के लिए आमंत्रित किये गये। इस प्रकार आपने विदेशों में भारतीय वाद्य शहनाई को प्रतिष्ठित किया।

वादन शैली – बिस्मिल्लाह खाँ साहब ने शहनाई के साथ–साथ आपने गायन की शिक्षा भी विधिवत ली है। इसलिए गायन का प्रभाव उनकी शहनाई पर पूरा दिखाई पड़ता है। स्वर बहलाव, सपाट तान, दमदार गमक तथा सुन्दर मींड आपके वादन की विशेषताएं हैं। लय तथा स्वर दोनों का समन्वय आपके वादन में दृष्टिगोचर होता है। आप अपने शहनाई वादन की संगति के लिए

तबले के मुकाबले में खुर्दक को अधिक पसन्द करते हैं क्योंकि तबले की आवाज अधिक देर तक गूँजने के कारण शहनाई के स्वरों में एक रस नहीं हो पाती जबकि खुर्दक की आवाज कम गुंजायमान होने के कारण उसमें मिल जाती है। आप विभिन्न प्रान्तों की लोकधुनें बजाने में भी कुशल हैं।

शिष्य परम्परा – देश–विदेश में अपने शहनाईवादन को गुंजायमान करने के साथ–साथ अपने कुछ शिष्यों को भी तैयार किया है। उनके नाम इस प्रकार हैं–

1. **जगदीश प्रसाद कमर देहलवी**
2. **एल0 लप्पा**
3. **विष्णु प्रसन्न**
4. **नैयर हुसैन**
5. **अति अब्बास**
6. **मकबूल खाँ**

उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ को जो कीर्ति एवं सम्मान प्राप्त है, वह अभी तक किसी अन्य शहनाई वादक को प्राप्त नहीं हो सका। आप देश–देश में अपना शहनाई वादन प्रस्तुत करते रहे। साथ ही साथ कई संस्थाओं ने आपको विभिन्न उपाधियों से अलंकृत भी किया।

5.4.4 पंडित वी0जी0 जोग – बेलावादक वी0जी0 जोग का जन्म सन् 1922 में बम्बई के सतारा जिले के 'वई' नामक स्थान में हुआ। इनका पूरा नाम विष्णु गोविन्द जोग है। इनके पिता का नाम गोविन्द गोपाल जोग था जिनकी मृत्यु तब हुई, जब वी0जी0 जोग केवल पाँच वर्ष के ही थे। आपने संगीत की प्रारम्भिक शिक्षा श्री शंकर राव से प्राप्त की। आप अपने कठिन परिश्रम और लगन से आगे बढ़ते गये। लेकिन अपनी संगीत शिक्षा से वे सन्तुष्ट नहीं थे। वे और भी अच्छा संगीत सीखना चाहते थे। आपने श्री गनपत बुवा पुरोहित से भाष्कर बुवा के घराने की गायन शैली प्राप्त कर ली। अब तक

आपने गायन और वादन दोनों की ही शिक्षा ले रखी थी। कर्नाटक पद्धति के आचार्य श्री कृष्णम भट्ट के शिष्य विज्ञानेश्वर शास्त्री से भी आपने वायलिन की शिक्षा ली। 1936 में आप श्री कृष्ण नारायण रातंजनकर के सम्पर्क में आये और उन्होंने इन्हें मैरिस म्यूज़िक कॉलेज, लखनऊ में कार्य करने के लिए आमंत्रित किया, जिसे आपने सहर्ष स्वीकार किया। काफी समय तक आपने इस कॉलेज की सेवा की। तदुपरान्त आकाशवाणी, दिल्ली के म्यूज़िक प्रोड्यूसर और फिर डिप्टी चीफ म्यूज़िक प्रोड्यूसर के रूप में काम करते रहे। सन् 1949 में हीराबाई बड़ौतकर के साथ आपने दक्षिणी अफ्रीका का भ्रमण किया और सन् 1951 में समस्त दक्षिण भारत का दौरा कर आपने अपूर्व ख्याति प्राप्त की। श्री जोग में उच्चकोटि के संगीतज्ञ के सभी गुण विद्यमान हैं। वे एक मिलनसार और प्रसन्नचित्त व्यक्ति हैं। कर्नाटक संगीत का आकर्षक भाग लेकर आप भारतीय संगीत में मिलाने के लिए प्रयत्नशील हैं और वर्तमान में आप संगीत रिसर्च अकादमी, कलकत्ता से सम्बद्ध हैं। इनके प्रमुख शिष्यों में शिशिर कणाधर चौधरी (बेला), जरीन जारूवाला (सरोद), रमेश तागड़े (बेला) विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

भारतीय संगीत में योगदान – वी0जी0 जोग ने भारतवर्ष के कई स्थानों में अपना वादन प्रस्तुत किया। इलाहाबाद, लखनऊ, वाराणसी, कलकत्ता, बम्बई आदि स्थानों पर आपके वायलिन के प्रदर्शन ने धूम मचा दी। सन् 1936 में श्री रातंजनकर जी के एक संगीत सम्मेलन में श्री जोग को निमंत्रित किया गया। इनके वादन से सभी श्रोता अत्यन्त प्रभावित हुए। अपने जीवन के साठ वर्षों में वी0जी0 जोग ने देश–विदेश की अनेक यात्राएँ कीं तथा भारतीय संगीत का विस्तार किया। वर्तमान में आप कुछ दिन 'अली अकबर कालेज ऑफ म्यूज़िक' वर्कले(यू0एस0ए0) में अतिथि प्राध्यापक के रूप में अपनी सेवाएँ देने के उपरान्त अब 'संगीत रिसर्च अकादमी' कलकत्ता से सम्बद्ध है। वी0जी0 जोग की एक विशेषता यह भी रही है कि उन्होंने फय्याज खाँ, ओंकारनाथ ठाकुर, मुश्ताक हुसैन, एस0एन0 रातनजनकर, विनायक राव पटवर्धन, हीराबाई बड़ौतकर आदि गायक–गायिकाओं के साथ वायलिन की संगत की थी। सन् 1949 में हीराबाई बड़ौतकर के साथ आपने दक्षिण अफ्रीका का भ्रमण किया।

वादन शैली – प्रो0 जोग की वादन शैली गायकी पर आधारित है। आप वायलिन में विलम्बित और द्रुत ख्याल प्रस्तुत करते हैं। स्वर का लगाव आपकी गायकी का प्रमुख अंग हैं। पं0 वी0जी0 जोग अपना वायलिन अधिकतर प़ सा प सां से मिलाकर बजाते है। मींड तथा गमक का काम उनके वादन में कम होता है। पं0 जोग ने आलाप में गम्भीरता के स्थान पर राग के स्वरूप को आकर्षक एवं मधुर बनाने पर ध्यान केन्द्रित किया है, जिससे उनके वादन में सांगीतिक कल्पना का विकसित रूप सुनने को मिलता है। कभी–कभी बंदिश गायकी के ढंग की बजाते हुए काम तंत्र अंग का करते हैं। स्वतंत्र बेला वादन में आलाप के बाद जोड़ के प्रस्तुतिकरण में तार सप्तक के सां स्वर मिले तार का प्रयोग सितार–सरोद के समान चिकारी के रूप में भी होता रहता है। इनके वादन में तिहाईयों का भी बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। विशेषकर छोटी–छोटी तिहाईयों को बड़ी सुन्दरता से प्रयुक्त करते हुए आप सम पर मिलते हैं। वायलिन वाद्य पर सारंगी के समान ही ख्याल अंग की बारीकियों को निकाला जाता है। वादन के अन्त में वे झाला अवश्य बजाते हैं। आपका व्यक्तित्व इतना आकर्षक है कि जिस समय आप शेरवानी पहनकर रंगमंच पर आते हैं तो श्रोताओं का मन खिल उठता है। वादन करते समय आपका हावभाव श्रोताओं को आकर्षित करता रहता है।

वादन के अन्त में ठुमरी बजाने के लिए आप प्रसिद्ध हैं। सम्पूर्ण भारतवर्ष में वायलिन को वाद्य रूप में प्रतिष्ठित करने का श्रेय निःसन्देह जोग साहब को ही जाता है। सन् 1980 में पं0 जोग जी को भारतीय वाद्य संगीत में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करने के लिए संगीत अकादमी का पुरस्कार प्रदान किया गया।

5.4.5 विदुषी अन्नपूर्णा देवी – अन्नपूर्णा देवी का जन्म सन् 1927 में पूर्णिमा के दिन मैहर में हुआ। अन्नपूर्णा देवी, उस्ताद अलाउद्दीन खाँ की सुपुत्री हैं। इनका अन्नपूर्णा नाम मैहर के महाराजा ने रखा था। श्रीमती अन्नपूर्णा देवी का स्वरूप किसी भी कलासेवी को नतमस्तक करने में सक्षम है। माँ दुर्गा की भव्य मूर्ति के सानिध्य में विराजमान श्रीमती अन्नपूर्णा देवी माँ शारदा–स्वरूपा कहीं जा सकती हैं।

उस्ताद अलाउद्दीन की संगीत साधना से सभी परिचित है। उनके घर में संगीत का सम्पूर्ण वातावरण था। खाँ साहब

कई वाद्यों को कुशलता से बजा लेते थे। इन्होंने संगीत शिक्षा कई उस्तादों से बड़ी कठिनाई के साथ सीखी। अतः घर में संगीत का सम्पूर्ण वातावरण अन्नपूर्णा जी को मिला। बचपन से ही अन्नपूर्णा ने सितार सीखना प्रारम्भ किया। खाँ साहब की तालीम पद्धति बड़ी कठिन थी। उनके बताये हुए मार्ग पर ही अन्नपूर्णा का संगीत आगे बढ़ता गया। लगभग 1940 तक इन्होंने सितार सीखा लेकिन उसके बाद अन्नपूर्णा ने सुरबहार सीखना प्रारम्भ किया। सुरबहार सीखने का कारण यह रहा कि सितार पर स्वर के काम में गम्भीरता नहीं आ पाती थी। इसलिए इन्होंने सुरबहार सीखना प्रारम्भ किया।

बाबा ने अपनी इस पुत्री को प्रेम से तालीम दी। बाबा ने अन्नपूर्णा से कहा था कि, "संगीत भगवान तथा गुरू को अर्पित करने की चीज है। यह उसी को दिया जाता है, जो इसे सम्भाल कर रख सके। तुममें धैर्य है, अतः मैं तुम्हें ऐसा संगीत दूंगा, जिससे आन्तरिक शान्ति मिले तथा ईश्वर का सानिध्य प्राप्त हो। यह वाह्य प्रदर्शन की चीज नहीं है। ध्रुवपद अंग का आलाप सुरबहार पर ही निर्भर है और इसी से तुम्हें संगीत के विद्वानों तथा प्रेमियों से आदर मिलेगा।"

बाबा का संगीत शिक्षण बड़ा कठोर था। उसके बारे में अन्नपूर्णा का कहना है कि, "बाबा ने वर्षों तक कई साजों की शिक्षा पाई थी और अनेक कष्ट उठाए थे। इस निष्ठा के बल पर ही वे तानसेन वंशज, दिग्गज बीन–वादक उस्ताद वजीर खाँ से परम्परागत शिक्षा प्राप्त कर सके। इसी का निर्वाह करने के लिए बाबा ने अपने शिष्यों को प्रेरित किया।" श्रीमती अन्नपूर्णा ने बताया कि हमें वस्तुतः दिन भर अभ्यास करना पड़ता था, बाबा की कड़ी देखरेख में। यह ध्रुवपद अंग का संगीत है। इसमें किसी प्रकार की मिलावट नहीं है। यह भक्ति का संगीत है। यह सार्वजनिक चीज नहीं है। यह कार्य अत्यन्त मुश्किल है। यहाँ मुरकी नहीं है। इसमें स्वरों की सच्चाई के साथ भाव की सृष्टि व राग–रूप की शुद्धता का प्रदर्शन होता है। इसके लिए कठोर साधना की आवश्यकता है। राग सिद्धि एक प्रकार की मंत्रसिद्धि है और गुरू के सामने ही इसकी उपलब्धि सम्भव है। अपने घर पर ही अल्लाउद्दीन खाँ के निर्देशन में अन्नपूर्णा सुरबहार, इनके भाई अली अकबर सरोद तथा रविशंकर सितार सीख रहे थे। अलाउद्दीन खाँ नृत्यकार उदयशंकर के साथ नृत्यदल लेकर विदेश भ्रमण के लिए भी जाया करते थे। उस दल में रविशंकर भी जाया करते थे। जब विदेश भ्रमण से उस्ताद लौटे तो श्री उदयशंकर ने अपने छोटे भाई रविशंकर से अन्नपूर्णा के साथ शादी का प्रस्ताव रखा। परिजनों के कट्टर विरोध एवं उलाहनों के बावजूद भी यह शादी सन् 1941 में सम्पन्न हो गई। तत्पश्चात् पिता की आज्ञा लेकर अन्नपूर्णा अपने पति सहित 'इष्टा' संस्था के साथ भारत भ्रमण के लिए निकल पड़ी। इष्टा संस्था की ओर से पं0 जवाहर लाल नेहरू की 'डिस्कवरी आफ इंडिया' मंच पर अभिनीत की जा रही थी। इसमें पार्श्व से अन्नपूर्णा शंकर वादन किया करती थी। इसके बाद 1942 में अन्नपूर्णा देवी ने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम शुभेन्दु शंकर रखा गया।

मैहर घराने के प्रवर्तक आचार्य अलाउद्दीन खाँ ने कहा था, "अन्नपूर्णा, अली अकबर और रविशंकर से किसी प्रकार कम नहीं। ध्रुपद अंग की मेरी जो शिक्षा है, वह सब मैंने उसे दी है। मेरी विद्या अन्नपूर्णा के पास है। वह जब सुरबहार बजाती है, मानों साक्षात् देवी सरस्वती विराजमान है।" प्रचार से दूर निरभिमानी श्रीमती अन्नपूर्णा देवी की सात्विक साधना परम शक्तिमान के उद्देश्य से है। जनवरी, 1968 में नादब्रह्म की उपासिका श्रीमती अन्नपूर्णा देवी को विश्व भारती की ओर से 'देशिकोत्तम' (डी0लिट्0) अलंकरण से विभूषित किया गया। संगीत के क्षेत्र में उनके विशिष्ट योगदान के लिए वास्तव में शारदा–स्वरूपा अन्नपूर्णा देवी को अलंकरण प्रदान कर विश्व भारती गौरवान्वित हुई है। श्रीमती अन्नपूर्णा देवी को इसके पूर्व 1977 में 'पद्मभूषण' अलंकरण, 1988 में सुर सिंगार संसद की ओर से 'शारंगदेव फैलोशिप' और 1991 में केन्द्रीय संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार प्रदान किया गया।

श्रीमती अन्नपूर्णा देवी ने अपने पिता आचार्य अलाउद्दीन खाँ से गायन, सितार वादन और सुरबहार वादिका के रूप में अपना जीवन समर्पित कर दिया, गुरू के रूप में वहाँ किसी प्रकार का समझौता नहीं।

पुरूष और महिला के लिए विशेष पृथक नियम नहीं, फिर भी पुरूष को पूरे दिन नियमपूर्वक अभ्यास करना चाहिए। वास्तव में संगीत सीखने के लिए पूर्ण समर्पण की आवश्यकता होती है। उनकी शिक्षा से उनके शिष्यों और शिष्याओं ने यही अनुभव किया है कि इसके लिए आसन जमाना आना चाहिये। इस हेतु त्याग करना होगा, तभी इसके माध्यम से ईश्वर के दर्शन होंगे, स्वर मूर्त होगा।

श्रीमती अन्नपूर्णा देवी ने बताया कि, "गाना और बजाना समानान्तर रूप में चलना चाहिए। इसी से यह अनुभूति होती है कि किस स्वर पर कितना ठहरा जाता है और स्वर की सच्चाई है या नहीं।" 'बाबा' की मान्यता के अनुसार श्रीमती अन्नपूर्णा देवी का कहना है कि, "यमन, भैरव और बिलावल राग 'सिद्ध' कर लेने से अन्य सभी राग स्वतः आ जायेंगे। वास्तव में पद्धति सिखाई जानी चाहिए। यह रटने की विद्या नहीं, यह शिक्षा सृजन–क्षमता जागृत करने की है।

श्रीमती अन्नपूर्णा देवी का कहना है कि, "सही तालीम की अवधि दस–पन्द्रह वर्ष हो सकती है। आज कलाकार वादन–पद्धति को अन्यों से प्राप्त कर स्वनिर्मित कहने में भी नहीं हिचकिचाते हैं। वास्तव में यह गुरू का ही नहीं, बल्कि ऋषि–मुनियों द्वारा प्रत्थापित परम्परा का अपमान है।" उन्होंने कहा कि, "एक बार सही गुरू मिल जाने पर शिक्षार्थी का यह कर्त्तव्य है कि वह गुरू के निर्देश के अनुसार अभ्यास करें। गुरू के प्रति शिष्य की निष्ठा अटूट रहनी चाहिए। संगीत के मामले में प्रशिक्षण काल के दौरान गुरू के निर्णय पर पूर्ण आस्था होनी चाहिए।"

वर्तमान में अन्नपूर्णा कई वर्षों से बम्बई में रह रही हैं। वहाँ इन्होंने अपनी जीवन को निजी बना रखा है। वे बहुत कम बोलती हैं तथा लोगों से मिलना कम पसन्द करती हैं। व्यक्तिगत तौर पर लोगों से इस तरह की दूरी रखने वाली श्रीमती अन्नपूर्णा देवी शुद्ध संगीत की साधना की प्रतीक है। उनका संगीत जीवन की तरह ही सहज और भावनात्मक उतार–चढ़ाव से भरपूर है। उन्होंने संगीत द्वारा धन कमाने की चेष्टा कभी नहीं की।

भारतीय संगीत में योगदान :–

संगीत चिन्तन – श्रीमती अन्नपूर्णा देवी की मान्यता है कि पुरानी पारम्परिक पद्धति से ही संगीत सीखा जा सकता है, आज की पद्धति से नहीं। शिष्य–शिष्याओं को उनके द्वारा दी जाने वाली शिक्षा से इसका अन्दाजा लगाया जा सकता है। उनका कहना है कि आरम्भ से स्वर–ज्ञान होना चाहिए और इसके लिए आवश्यक है कि सा नि ध प– प्रत्येक स्वर पर पूरी देर ठहरा जाए। इसके बाद पलटे, मूर्च्छना, आरोह–अवरोह का अभ्यास किया जाए तथा हाथ का अभ्यास भी उसी के अनुरूप हो।

अन्नपूर्णा ने प्रारम्भ में पंडित रविशंकर के साथ जुगलबन्दी की। इसके अलावा कुछ और भी कार्यक्रम दिये। उन्होंने जितने भी कार्यक्रम दिये, उन्हीं के आधार पर विशेषज्ञों ने इन्हें महान संगीतज्ञ घोषित किया। अधिक कार्यक्रम देना उनको पसन्द नहीं है। बाबा की दी हुई तालीम कुछ ऐसी ही थी। सुरबहार बजाने की तकनीक में उनमें कोई कमी नहीं है। ऐसा कोई अंग नहीं है जो वह प्रस्तुत नहीं करती हो। लेकिन सबका इस्तेमाल उन्होंने एक संवेदनशील सृजनकर्त्ता के रूप में किया है। उन्होंने वाद्य दिल के भावों को श्रोताओं तक पहुँचाने का माध्यम बना दिया। विशेषज्ञों का कहना है कि वाद्ययंत्र खुद ही भावनायंत्र बन गया है। उनको सुनकर लगता है कि आप सुर के महासागर में रूबरू डुबकियाँ लगा रहे हैं।

अन्नपूर्णा जी ने उस्ताद अलाउद्दीन खाँ साहब की महान संगीत परम्परा को पूरी शुद्धता के साथ कायम रखा है और उसे भावनाओं का नया आयाम दिया है। वे कलाकार तथा सुरबहार की बेजोड़ साधिका साबित हुई हैं जो भारतीय संगीत के लिए निश्चय ही एक बड़ी उपलब्धि है।

महान संगीत शिक्षिका – अन्नपूर्णा देवी को रागों में चमम कल्याण और मालकौंस तथा तालों में चौताल और धमार बहुत प्रिय हैं। सेनी घराने की सारी विशेषताएँ नई कल्पनाओं और नए रूप को लेकर इनके वादन में दृष्टिगोचर होती है।

अन्नपूर्णा देवी केवल एक कलाकार ही नहीं बल्कि एक उच्चस्तरीय संगीत शिक्षिका भी हैं। बम्बई में वह संगीत की शिक्षा देती है और अपने विद्यार्थियों के माध्यम से बाबा के संगीत का प्रचार और प्रसार करती रहती है। अन्नपूर्णा का संगीत की सिखाने का एक अपना अलग तरीका है। सिखाते समय अपने शिष्य की कमी तथा जरूरत को वे समझ लेती हैं। फिर उसी के अनुसार सिखाना प्रारम्भ करती है। वे अपने शिष्यों को बहुत कठिन परिश्रम कराती हैं तथा खुद भी बहुत परिश्रम करती हैं। जब तक उनकी बतायी गयी चीजों का सही तरीके से शिष्य अनुकरण नहीं कर लेते, तब तक उनका पीछा नहीं छोड़ती हैं। वे अपने शिष्यों को एक–एक करके सिखाती है। उनमें तन्मयता से सिखाते देखने का जिनका अनुभव है, उनका कहना है कि पूर्णता की इस साधिका और गुरू के नजदीक समय का एक अवरूद्ध हो गया है। वे एक प्रमुख राग से शुरू करती है और उसके सभी उतार–चढ़ाव से शिष्य को गुजारती हैं। इस प्रक्रिया में वर्षों गुजर सकते हैं। इसी कठिन परिश्रम के परिणामस्वरूप निखिल बैनर्जी तथा हरिप्रसाद चौरसिया जैसे कलाकार भारतवर्ष को प्राप्त हुए है। इसके अलावा उनके अन्य विषय भी तैयार हुए है।

शिष्य परम्परा – श्रीमती अन्नपूर्णा देवी ने प्रशिक्षण देने में अपने पिता के समान ही विशाल हृदयता और उदारता का परिचय दिया है और आज भी वे इसी सेवाव्रत की पथगामिनी हैं। उनके शिष्यों और शिष्याओं के नाम इस प्रकार है–

1. **निखिल बनर्जी (सितार)**
2. **हरिप्रसाद चौरसिया (बांसुरी)**
3. **अमित हीरेन राय (सितार)**
4. **ज्योतिन भट्टाचार्य (सरोद)**
5. **डेनियल ब्रेडले (सितार)**
6. **हेमकान्त देसाई (सितार)**
7. **प्रदीप बारोत (सरोद)**
8. **स्तुति डे (सरोद)**
9. **नित्यानन्द हल्दीपुर (बांसुरी)**
10. **विनय भरतराम (गायन)**
11. **सुरेश व्यास (सरोद)**
12. **संध्या आप्टे (सितार)**
13. **पिटन वान गेल्डर (सितार)**
14. **रूसी कुमार पंड्या (सितार)**
15. **बहादुर खाँ(सरोद)**
16. **शुभेन्द्र शंकर (सितार)**
17. **आशीष खाँ (सरोद)**
18. **इन्द्रनील भट्टाचार्य (सितार)**

19. वंसत काबरा (सरोद)
20. कार्तिक कुमार (सितार)
21. देवी चटर्जी (सितार)
22. लक्ष्मी नारायण गर्ग (सितार)
23. गौतम मुखर्जी (गायन)

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ को प्राप्त पुरस्कारों का उल्लेख कीजिए।
2. विदूषी अन्नपूर्णा देवी की शिष्य परम्परा का उल्लेख कीजिए।
3. पं0 वी0जी0 जोग का जीवन परिचय देते हुए वादन शैली पर भी प्रकाश डालिए।
4. डॉ0 एन राजम के भारतीय संगीत में योगदान पर चर्चा कीजिए।
5. उ0 हाफिज अली खॉ का संक्षिप्त जीवन परिचय दीजिए।

ख) सत्य/असत्य बताइए :–

1. विदूषी एन0 राजम् बेला वाद्य बजाती हैं।
2. उस्ताद हाफिज अली खाँ सितार वादक हैं।
3. पंडित वी0जी0 जोग सांरगी वादक हैं।
4. अन्नपूर्णा देवी सितार वादिका हैं।
5. उ0 बिस्मिल्लाह को भारत रत्न 2003 में मिला।

ग) रिक्त स्थानों की पूर्ति करिए :–

1. अन्नपूर्णा देवी के पिता का नाम ..... था।
2. उ0 बिस्मिल्लाह खाँ का निवास स्थान ..... है।
3. डॉ0 एन0 राजम् ने पी–एच0डी0 की उपाधि ..... से प्राप्त की।
4. पं0 वी0जी0 जोग का जन्म .....में ..... नामक स्थान में हुआ।
5. उ0 हाफिज अली खाँ का निधन ..... को हुआ।

घ) एक शब्दों में उत्तर दो :–

1. डॉ0 एन0 राजम् के पिता का नाम बताइये।
2. डॉ0 वी0जी0 जोग किस सन् में भातखण्डे विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बने।
3. उ0 हाफिज अली खाँ के गुरू का नाम बताइये।
4. उ0 बिस्मिल्लाह खाँ ने गायन की शिक्षा किससे ली?
5. अन्नपूर्णा देवी को डी0लिट0 की उपाधि किसने प्रदान की?

5.5 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके है कि संगीत के महत्व को संगीतज्ञों एवं श्रोताओं दोनों ने स्वीकार किया है, तभी दोनों इसका रसास्वाद करते हैं। अनेक महान संगीत साधक हुए जिनकी साधना ने अनेक सोपान पार किए जिनका योगदान अमूल्य है। संगीत कला संगीतज्ञों के व्यक्तित्व को महानता प्रदान करती है। हमारे देश में अनेक प्रसिद्ध एवं विद्वान संगीत विभूतियाँ हुई हैं जिनके अमर योगदान को कभी भुलाया नहीं जा सकता है। जब संगीतज्ञ का व्यक्तित्व उसके कलात्मक प्रतिभा के फलस्वरूप प्रतिष्ठित हो जाता है तो वह किसी भी वातावरण में अपने प्रोज्जवल व्यक्तित्व द्वारा संगीत प्रदर्शन को सर्वोत्कृष्ट बनाने में सक्षम हो जाता है। इस इकाई में आप जान चुके हैं संगीतज्ञ कला में पूर्ण आनन्द का अनुभव करता है। संगीत साधना के लिए समय, कर्ता, स्थान, अभ्यास, उचित संगीतिक शिक्षा आत्मविश्वास आदि गुणों का होना आवश्यक है तभी संगीतज्ञ अपनी कला द्वारा इच्छा पूर्ति कर सकेगा।

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

ख) सत्य/असत्य बताइए :–

1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य 4. सत्य 5. असत्य

ग) रिक्त स्थानों की पूर्ति करिए :–

1. उ0 अलाउद्दीन खाँ 2. बनारस 3. बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय
4. 1922, वई 5. 28 दिसम्बर 1972

घ) एक शब्दों में उत्तर दो :–

1. श्री ए0 नारायण अय्यर 2. सन् 1938 3. उ0 वजीर खाँ
4. मोहम्मद हुसैन 5. विश्व भारती

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. माथुर, श्री रामलाल, (1997), *भारतीय संगीत और संगीतज्ञ,* बोहरा प्रकाशन, जयपुर।
2. बहोरे, श्री रवीन्द्र नाथ, (2005), *भारतीय संगीत के प्रमुख स्तम्भ,* क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।
3. जौहरी, श्रीमती सीमा, (2003), *संगीतायन,* राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
4. गर्ग, डॉ0 लक्ष्मीनारायण, (1984), *हमारे संगीत रत्न,* संगीत कार्यालय, हाथरस।

5.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. वसन्त, (1997), *संगीत विशारद,* संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. खाँ, उ0 विलायत हुसैन, (1959), *संगीतज्ञों के संस्मरण,* संगीत नाटक अकादमी, नई दिल्ली।

5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. बेला वादन के क्षेत्र में प्रसिद्ध पं0 वी0जी0 जोग के सम्पूर्ण जीवन एवं संगीत के क्षेत्र में योगदान को समझाईये।
2. सरोद वादन के क्षेत्र में उस्ताद हाफिज अली खाँ की संगीत यात्रा पर एक निबन्ध लिखिए।

इकाई 6 – मसीतखानी गत का परिचय; पाठ्यक्रम के रागों में मसीतखानी गत, स्थाई व अन्तरे के तोडे आदि को लिपिबद्ध करना

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 मसीतखानी गत का परिचय
6.4 पाठ्यक्रम के रागों में मसीतखानी गत व तोड़े
6.4.1 श्याम कल्याण
6.4.2 जैजैवन्ती
6.4.3 पूरिया कल्याण
6.4.4 भैरव
6.4.5 केदार
6.5 सारांश
6.6 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर, (एम0पी0ए0एम0आई0–502) पाठ्यक्रम की छठी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को जान चुके होंगे।

इस इकाई में पाठ्यक्रम के रागों में मसीतखानी गत व तोडों को प्रस्तुत किया गया है। इस इकाई में आपकी सुविधा के लिये मसीतखानी गत की स्वरलिपियाँ प्रस्तुत की गई हैं।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप मसीतखानी गत तथा तोड़ों को लिपिबद्ध कर सकेंगे और इन्हे पढ़कर क्रियात्मक रूप में प्रस्तुत कर सकेंगे।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

1. मसीतखानी गत को स्वरलिपि के माध्यम से पढ़ एवं बजा सकेंगे।
2. स्वर को लिपिबद्ध कर सकेंगे तथा लिपिबद्ध स्वर को पढ़ सकेंगे।
3. तोड़ों के माध्यम से राग का विस्तार कर सकेंगे।

6.3 मसीतखानी गत का परिचय

फिरोज खॉ के पुत्र मसीत खॉ ने सितार वादन की एक शैली को विकसित किया जिसे मसीतखानी शैली कहते हैं। इसमें बजाई जाने वाली राग रचनाएॅ मसीतखानी गत कहलाती हैं। इससे पूर्व सितार में बजाई जाने वाली सेनी घराने की गतों की कठिनाई और विस्तार के स्थान पर मसीतखानी गतों की सरलता, मधुरता तथा अल्प विस्तार ने संगीत प्रेमियों को आकर्षित किया तथा इसका प्रचार बढ़ता गया। सेनी घराने की गतें ताल की दो आवृत्तियों के स्थाई–अंतरे की होने के कारण अधिक विस्तार वाली थी जिन्हें याद रखने में वादकों को कठिनाई होती थी। मसीतखानी गत एक आवृत्ति की सरल राग रचनाऐं होती हैं जिस कारण यह लोकप्रिय है।

मसीतखानी गत को अब विलम्बित गत के रूप में भी जाना जाता है। इसमें स्थायी तथा अंतरा दो भाग होते हैं। इसे पश्चिमी बाज भी कहा जाता है।

मसीतखानी गत के बोल–सितार में मिजराब के आघात से बोल उत्पन्न होते हैं। बाज के तार में मिजराब से अपनी तरफ को आघात को 'आकर्ष' व **'दा'** बोल कहा जाता है। इसके विपरीत बाहर की ओर अपकर्ष 'प्रहार' से **'रा'** बोल निकलता है। इन दोनों बोलों को शीघ्रता से बजाने पर **'दिर'** बोल निकलता है। इन तीनों बोलों के कलात्मक संयोजन से सितार गतों में सौन्दर्य उत्पन्न किया जाता है। मिजराब के इन बोलों का राग–ताल के नियमों का पालन कर जो राग रचनाऐं निर्मित होती हैं, उन्हें 'गत' कहते हैं। मसीत खॉ द्वारा खोजे गए 'गत' स्वरूप को मसीतखानी गत कहते हैं। इन गतों को तीनताल में 12वीं मात्रा आरम्भ कर बजाने की प्रथा है जो इस प्रकार हैं :

मसीत खानी गत (तीनताल)

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
											दिर	दा	दिर	दा	रा
दा	दा	रा	दिर	दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा					
X				2				0				3			

इन बोलों के आधार पर विभिन्न रागों में मसीतखानी गतों को निर्माण किया जाता है।

6.4 पाठ्यक्रम के रागों में मसीतखानी गत व तोड़े

6.4.1 राग श्याम कल्याण :–

थाट कल्याण मानत मुनि जन, पस समवाद अनूपा
ओडव सम्पूरन प्रथम रात्रि, श्याम कल्याण स्वरूप।।

विवरण–प्रस्तुत राग कल्याण थाट जन्य माना गया है। इसके आरोह में गन्धार और धैवत वर्ज्य है ओर अवरोह में सातों स्वरों का प्रयोग किया जाता है अतः इसकी जाति औडव–सम्पूर्ण है। इस राग का गाने बजाने का समय रात्रि का प्रथम प्रहर है। पंचम स्वर वादी तथा षडज स्वर सम्वादी है। इस राग में दोनों मध्यम तथा शेष स्वर शुद्ध लगते हैं। यह राग कल्याण का एक प्रकार है जो कि कामोद और कल्याण का सुन्दर समिश्रण है। गन्धार स्वर इस राग के अवरोह में अल्प और वक्र है। ग म प, ग म रे सा कामोद के इस टुकड़े के साथ राग का समापन करते हैं। प्रस्तुत राग के आरोह में तीव्र मध्यम और अवरोह में शुद्ध मध्यम का प्रयोग करते हैं। गन्धार के प्रयोग से अमुक राग सरलता से शुद्ध सांरग से अलग हो जाता है। तीव्र मध्यम और निषाद को दीर्घ करने से कामोद राग सरलता से अलग हो जाता है। इस राग में गन्धार

का प्रयोग कामोद अंग से किया जाता है जैसे ग म प, ग म रे सा। कुछ विद्वान इस राग में हमीर, गौड़सारंग, केदार और कल्याण राग का मिश्रण मानते है।

आरोह– नि़ सा रे मं प नि सां।
अवरोह– सां नि ध प , ध मं प ग म प ग म रे सा, नि़ सा
पकड़ – नि़ सा रे ऽ रे ऽ मं प ग म रे ऽ नि़ सा।
न्यास के स्वर– प और नी।
समप्रकृति– शुद्ध सारंग, कामोद व कल्याण।

आलाप

नि़ रे नि़ सा – सा –‹ सा –‹ , नि़ सा रे –– मं– मं
दा ––––
प –‹ प –‹ प –‹ , मं प , मं प ध –प –‹ प –‹ प –‹
दा – दा ––––
गम रे – रे – सा –‹सा –‹नि़ रे नि़ सा ध़ – प़ –
दा –––––
प़ –‹ प़ –‹ मं़प़ –‹ मं़प़ –‹ मं़प़ सा –‹सा –‹
दा – दा – दा –––
नि़ सा रे मं़प़ –‹प –‹, ग म प , ग म रे – रे –
सा –‹सा –‹, मं़प़ ध प –‹ प़ –‹, सां –‹सां –‹
सां –‹ध नि ध नि सां नि रें – सां –‹सां –‹सां –‹
नि सां ध – प , रे मं़प़ नि – नि ध – प –,
मं़प़ नि सां रें – सां –‹सां –‹, रें पं गं मं रें – सां –
नि रें नि सां ध –प –‹प –‹, मं़प़ ध प , प ग म
रे – सा –‹सा –‹

मसीतखानी गत – तीनताल

स्थाई

							रे – मं प	गम	रेरे	सा	नि़सा
							दि – र–	दा–	दिर	दा	दिर
								3			
रे	मं	प,	पप	मं	पप	ध	प	गम	रे	सा	
दा	दा	रा	दिर	दा	दिर	दा	रा	दा–	दा	रा	
×				2				0			

अन्तरा

							पप	म॑	पप	सां	सां	
							दिर	दा	दिर	दा	रा	
								3				
सं	सां	सां,	सांसां	नि	सांसां	रें	सां	नि	प	प		
दा	दा	रा	दिर	दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा		
×				2				0				
							पप	म॑	पप	नि	प	
							दिर	दा	दिर	दा	रा	
								3				
ध	म॑	प,	पप	ग	मम	प	ग	म	रे	सा		
दा	दा	रा	दिर	दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा		
×				2				0				

तोड़े

1– प ऩिऩि ध़ सा | ऩि रे ऩि सा | रे म॑म॑ पप निनि | ध– धम॑–म॑ प–
×
ग मम रे सा | ऩि सासा ऩि रे | – सा ऩि सा, | ऩि सासा ऩि रे
2
–सा ऩि सा | ऩि सासा ऩि रे | –सा ऩि सा | मुखडा
0

2– रे पप म॑म॑ पप | म॑ पप म॑म॑ पप | म॑ पप निनि सांसां | रें– रेंसां – सांनि
×
ध पप म॑ म | ग म रे सा | ऽ ऩि – ऩि | सा ऽऽ, ऩि
2
– ऩि सा ऽ | ऽ ऩि – ऩि | सा ऽऽ, – | मुखडा
0

3– म॑ प़प़ ऩि सा | म॑ पप नि सां | रें पंपं गंगं मंमं | रें – रेंनि –नि सां–
×
नि –प प, ध | –म॑ म, प ग | म प गग मम | रे– रेऩि –ऩि सा–
2
ऽऽरे– रे ऩि | –नि सा–ऽऽ | रे– रेऩि –ऩि सा– | मुखडा
0

5– रे म म म | रे सा ऩि सा | रे प म॑ प | ध प म॑ प
×
ग म रे सा | ऽऽऽनि | – सा ऩि – | सा ऩि – सा
3 ×

6—	सा म रे म ×	रे सा ऩि सा	रे प ग म	रे सा ऩि सा
	रे मं प रे 2	— रे मं प	नि सां रें नि	— रें सां —
	नि सां रें पं 0	मं प गं म	रें सां नि सां	रें सां नि सां
	ध प मं ध 3	— प मं प	ध प ग म,	रे सा ऩि सा
	रे सा ऩि सा ×	प ग — म	रे —, म ग	— म रे — ,
	प ग — म 2	रे — , रे सा	ऩि सा प ग	— म रे —
	प ग — म 0	रे — प ग	— म रे —	रे सा ऩि सा
	प ग — म 3	रे — प ग	— म रे —	प ग — म ×

6.4.2 राग जैजैवन्ती :—

द्वै गांधार निखाद द्वै संवादै प—नि सोइ।
सोरटही के अंगतें जैजैवन्ती होइ।।

विवरण—यह राग खमाज थाठ के जन्य रागों में से एक है। इसकी जाति सम्पूर्ण है। वादी स्वर ऋषभ व संवादी पंचम माना जाता है। इसका समय रात्रि के दूसरे प्रहर का अन्तिम भाग मानते हैं। इस राग में दोनों गान्धार व दोनों निषादों का प्रयोग होता है। आरोह में तीव्र ग —नि तथा अवरोह में कोमल ग—नि लेते हैं, तथापि अवरोह करने में तीव्र गान्धार भी ले सकते हैं। कोमल गान्धार केवल अवरोह में लेते हैं, किन्तु वह प्रायः दोनों ऋषभों में जकड़ा हुआ रहता है। प्रचार में इसको सोरठ—अंग का राग मानते हैं। यह मिश्र राग है। गौड़, बिलावल और सोरठ, इन तीन रागों का मिश्रण इसमें पाया जाता है। इस राग में मन्द्र पंचम और मध्य ऋषभ की संगति सुन्दर लगती है।

कोमल गान्धार के करण कुछ संगीत—मर्मज्ञ इसे 'परमेल—प्रवेशक राग' ऐसी संज्ञा देते हैं। परमेल—प्रवेशक का अर्थ है— अगले ठाठ में लेजानेवाला राग। अर्थात् खमाज ठाठ के राग समाप्त करके काफी ठाठ के राग आरम्भ होने की सूचना यह राग देता है।

आरोह —	सा,	रे	ग	म	प,	नि	सां।			
अवरोह —	सा	<u>नि</u>	ध	प,	ध	म	रे	<u>ग</u>	रे	सा।
पकड़ —	रे	<u>ग</u>	रे	सा,	ऩि	सा	ध़	<u>ऩि</u>	रे,	

न्यास के स्वर — रे, म, प,

4.4.1 समप्रकृतिक राग — खमाज, देश, झिझोंटी

मसीतखानी गत

स्थाई

रेग	रे	सासा	ध़	नि़	रे	रे	रे	रेग	म	गम	रे	ग	रे	नि़	सा
दिर	दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा	दिर	दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा
	3				×				2				0		
रेग	म	निध	प	ध	म	म	प	पध	म	गम	रे	ग	रे	नि़	सा
दिर	दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा	दिर	दा	दिर	दा	रा	दा	रा	दा
	3				×				2				0		

अन्तरा

मम	प	निध	प	नि	सां	सां	सां	रेंगं	रें	निध	प	म	रे	नि़	सा
दिर	दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा	दिर	दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा
	3				×				2				0		

तोड़े

1– रेगरेसानि़धप– | रेगमरेगरेसा– | रेगमपधमगम | रेगरेसानिसारेसा |
×

रेगमपनिधपध | मप गमरेगरेसा | रेगम–रेगरे– | सा–––रेगम– |
2

रेगरे–सा––––– | रेगम–रेगरे– | सा––––– | मुखडा |
0

2– गमगमरेगरेसा | मपमपगमरेग | पधपधमपगम | धनिधनिपधमप |
×

निसांनिसांधनिपध | सारेंसारेंनिसांधनि | रेंगंरेंगंरेंसांनिसां | रेंसांनिधपमगम |
2

रेगरेसानि़सानि़ध़ | प़नि़सा–रे–धनि़ | रे––––––– | रेगरेसानिसानि़ध़ |
0

प़नि़सा–रे–धनि़ | रे––––––– | रेगरेसानि़सानि़ध | प़नि़सा–रे–धनि़ | रे
3 ×

6.4.3 राग पूरिया कल्याण :–

थाट मारवा रे म विकृत, ग नि सम्वाद अनूप।
जाति समपूर्ण सायं समय, पूरिया कल्याण रूप।।

विवरण– इस राग का सृजन, पूरिया तथा कल्याण दो प्राचीन रागों के समन्वय से हुआ है। इसके पूर्वांग में पूरिया और उत्तरांग में कल्याण है। इसका प्रारम्भ स को छोड़ते हुऐ म, ध नी सा को प्रयोग करते हैं। यह मारवा थाट जन्य राग है। इसमें रे कोमल तथा मध्यम तीव्र लगता है। वादी ग और सम्वादी नि है। यह एक सायंकालीन संधिप्रकाश तथा परमेल प्रवेशक राग है। प्रस्तुत राग में ऋषभ और धैवत होने लगेगा। कल्याण राग से बचने के लिए कोमल ऋषभ और पूरिया से बचने के लिये पंचम ओर शुद्ध ध के प्रयोग से यह आसानी से पूरिया धनाश्री राग से अलग हो जाता है। यह एक बहुत ही लोकप्रिय राग है जिसको गायक और वादक दोनों ही पसन्द करते हैं। इस राग का विस्तार तीनों ही सप्तक में किया जाता है। इस राग का गन्धार ओर निषाद एक प्रबल स्वर है।

आरोह– नि॒ रे॒ ग म॑ प म ध नी सां।
अवरोह– सां नि ध प म॑ ग रे॒ ग रे॒ सा।।
पकड़– नि रे॒ ग म॑ प – म॑ ग म॑ रे॒ ग, नि॒ रे॒ सा।
न्यास के स्वर– नि सा ग प
समप्रकृति राग– मारवा व पूरिया व कल्याण

आलाप

ध॒ नि॒ –– ध॒ – नि॒ रे॒ नि॒ सा –< सा –< सा –<
दा ––––––
ध॒ –– नि॒ रे॒ नि॒ ध॒ प॒ –<प॒ –<प॒ –<
म॑ नि॒ ध॒ , ध॒ सा नि॒ , नि॒ रे॒ सा, सा –<सा –<
नि॒ रे॒ ग म॑ प॒ –< प॒ –< प॒ –<, ग म॑ ग म॑ ध प ,
दा –– दा दा दा
प॒ –< प॒ –< प॒ –<ग म॑ ध नि , ध नि नि धे
म॑ ध ध म॑, ग म॑ म॑ ग , म॑ ध प॒ –< प॒ –<
म॑ ग म॑ ग म॑ ध नि –<नि –< नि –<,
ध॒ नि नि ध॒ नि रे॒ सां – सां –<सां –< सां –<
ध नि रे॒ गं –<गं –< गं –<, म॑ ग म॑ गं रें– सां –<
सां –< सां –<, नि रें नि ध नि ध म॑ ध म॑, ध प॒ –<
प॒ –<, प॒ –<, ग म॑ ग ध प॒ –< प॒ –<
म॑ प म॑ ग ग म॑ रे॒ म॑ ग , नि॒ ––
रे॒ ग म॑ प म॑ ग म॑ ग, रे॒ ग रे॒ , नि॒ रे॒ सा–<सा–<

मसीतख़ानी गत – तीनताल

स्थाई

			मं धध नि सां			नि़ धपप मं पप मंग
			दा दिर दा रा			दा दिर दा दिर दारा
						3
मं मं ग गग			नि़ रेरे ग, रे गग, मं प			ग रे सा
दा दर रा दिर			दा दिर दा दा दिर दा रा			दा दा रा
X			2			0

अन्तरा

	पप	ग मंमं ध नि
	दिर	दा दिर दा रा
		3
सां सां सां, सांसां	ध निनि रें सा	नि ध प
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	दा दा रा
X	2	0
	रेंगंमंप	ग गंगं रें सां
	दिरदा–	दा दिर दा रा
		3
मं निनि ध प	म गग मं रे	मग रे सा
दा दिर दा रा	दा दिर दा रा	दा दा रा
X	2	0

तोडे

1– नि़ रेरे ग मं | प मं ग मं | मं ध निनि सा रें | सां नि ध प
X
मं ग रे सा | नि़ सा नि़ रे | सा – ऽ – | नि़ सा नि़ रे
2
सा –ऽ– | नि़ सा नि़ रे | सा –ऽ– | मुखड़ा
0

2– मं ग रे सा | नि़ सा रे सानि़ | सा नि़ ध़ | नि रे ग –
X
मं ग प मं | ध प नि ध | सां नि ध प | मं ग रे सा
2

	नि रे ग –,	रे ग मं प	मं–ऽ–,	नि़ रे ग –	0	
	रे ग मं प	मं–ऽ–	नि़ रे ग –	रे ग मं प	3	X
3–	ग रे सा, मं	ग रे प मं	ग ध प मं	नि ध प, सां	X	
	नि ध रें सां	नि, गं रे सां,	नि रें गं मं	गं मं गं रें	2	
	सां नि रें सां	नि ध प मं	ग मं ग,मं	ग रे सा –	0	
	ऽ– मं प	मं –,ऽ–	मं प मं –	ऽ– मं प	3	X
4–	नि़ सा रे, नि़	सा रे सा नि़	ध – नि़ रे	ग रे ग –	X	
	नि़ नि़ नि़ मं	मं मं नि नि	ध प मं ग	मं ग रे सा	2	
	ग रे सा नि़	–रे ग प	मं –,ऽ–	ग रे सा नि़	0	
	–रे ग प	मं –,ऽ–	ग रे सा नि़	–रे ग प	3	X
5–	ध़ प़ मं़ प़	रे सा नि़ सा	ध प मं प़	रें सां नि सां	X	
	गं मं मंमं	गं रें सां नि	ध नि नि नि	ध प मं ग	2	
	ग मं मं मं	ग रे सा –	नि़ रे–, रे	ग – मं प	0	
	नि़ रे–, रे	ग – मं प	नि़ रे–, रे	ग – मं प	3	X
6–	मं ग रे सा	प मं ग रे	ध प मं ग	नि ध प मं	X	
	सां नि ध प	रें सां नि ध	गं रें सां नि	सां नि ध प	2	
	ग मं मं ध	नि सां, मं ध	नि सां रें सां	नि ध प मं	0	
	ध प मं ध	प मं,ध प	मं ग मं ग	रे सा नि़ सा	3	
	नि रे ग ग	रे ग मं मं	मं ग मं ग	रे सा नि़ सा	X	

	मं –,ऽ–	ऽ–ऽ– ,	नि़ रे ग ग	रे ग मं मं	
	2				
	ग मं प मं	ग रे ग प	मं –,ऽ–	ऽ–ऽ–	
	0				
	नि़ रे ग ग	रे ग मं मं	ग मं प मं	ग रे ग प	X
	3				
7–	नि़ रे ग ग	रे ग मं मं	ग मं प प	मं प ध ध	
	X				
	प मं ग प	मं ग प मं	ग रेमं ग	रे सा नि़ सा	
	2				
	नि़ रे ग मं	प – प –	मं –,ऽ–,	नि़ रे ग मं	
	0				
	प – प –	मं –,ऽ–,	नि़ रे ग मं	प – प –	X
	3				

6.4.4 राग भैरव :–

थाट भैरव रे ध कोमल, ध रे स्वर संवाद।
प्रात समय मिल गाइये, सम्पूरन भैरव राग।।

विवरण–इसकी रचना भैरव थाट से की गई हैं इसलिये यह आश्रय राग है। इसमें ऋषभ व धैवत स्वर कोमल तथा बाकी स्वर शुद्ध है अतः इसकी जाति सम्पूर्ण–समपूर्ण है। वादी धैवत तथा सम्वादी ऋषभ है। इसका गायन एवं वादन का समय प्रातः का प्रथम प्रहर है। इसे प्रातः काल संधिप्रकाश के समय गाते बजाते हैं। ऋषभ धैवत का आन्दोलन इस राग को भैरव अंग का राग प्रदर्शित करता हैं इसके आरोह में प्रायः ऋषभ व पंचम छोड़ देते हैं । जैसे–सा ग म प, ग म ध प। यह एक प्राचीन राग है जिसे चारोमतानुसार इसे एक मुख्य राग माना है। यह राग करूण प्रकृति का और गंभीर है। इसमें ध्रुपद, धमार, बड़ा ख्याल, छोटा ख्याल तराना व मसीतखानी, रज़ाखानी गत प्रचुर मात्रा में मिलता है। मध्यम से ऋषभ की मीड़ इसमें बहुत मधुर लगता है।

आरोह – सा रे ग म प ध नी सां।
अवरोह – सां नी ध प म ग रे सा ।।
पकड़ – ग म ध प, ग म रे सा
न्यास के स्वर – सा रे और ध
समप्रकृति राग– कालिंगड़ा और रामकली

आलाप

ध़–– ध़ सा नि़ सा – सा –ऽसा –ऽ सा –ऽ
दा –––––
नि़ सा – नि़ सा नि़ सा रे सा ध़––– सा –ऽ सा –ऽ
दा – दा––– दा ––––– दा ––––––
सा ग –ऽग –ऽ ग प ग मे रे–– सा –ऽ
सा –ऽ सा –ऽ, सा ग ,– ग म – , म प – ,

प–ऽ प–ऽ, ग म ध–– प–ऽ प–ऽ

म प – , ग म – , रे–– सा –ऽ सा –ऽ,

ग म ध–– नि सां – सां –ऽ सां –ऽ

निसां – , निरें – , सां रें– , निसां –ध–– प–ऽ

प–ऽ प–ऽ, ग म धनि सां ध–– प–ऽ प–ऽ

म प ध प म प – ग –ऽग –ऽ, ग प ग म रें–– सा

सा –ऽ सा –ऽ, ग म धनि सां – सां –ऽ सां –ऽ

गं –ऽगं –ऽ, गं पं गं मं रें–– सां –ऽ सां –ऽ

निसां– निसां निसां रें सां –ध–– प–ऽ प–ऽ

सा ध प ध म प ग –ऽग –ऽ ग म प ग म

रे–– सा –ऽ सा –ऽसा –ऽ

मसीतखानी गत – तीनताल

स्थाई

											पप	म	पप	ग	म
											दिर	दा	दिर	दा	रा
												3			
ध	ध	प	पध	म	पप	ग	म	रे	रे	सा					
दा	दा	रा	दिर	दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा					
X				2				0							

अन्तरा

											पप	ग	मम	ध	नि
											दिर	दा	दिर	दा	रा
												3			
सां	सां,	सां	सांसां	नि	सांसां	रें	सां	निसां	ध	प					
दा	दा	रा	दिर	दा	दिर	दा	रा	दा–	दा	रा					
X				2				0							
										धनिसागं	रें	सांसां	नि	सां	
										दिर दा–		दा दिर	दा	रा	
												3			
ध	ध	प	पप	ग	मम	ध	प	गम	रे	सा					
दा	दा	रा	दिर	दा	दिर	दा	रा	दा–	दा	रा					
X				2											

तोड़े

1– ध निनि, सा गग म पप ध निनि सा गंगं रें सांसां नि धध प मम |

X

	ग मम रे सा सा	ध निनि, सा, ग	– म रे सा,	ध निनि, सा, ग	
	2				
	– म रे सा,	ध नि, सा, ग	– म रे सा	मुखडा	
	0				
2–	सा गग म प	ग म ध प	ग मम ध नि	सां नि ध प	
	X				
	ध प म, प	म ग म ग	रेरे सा –,	ध निनि, सा, रे	
	2				
	सा, ध निनि सा,	रे सा ध निनि	सा रे सा –	मुखडा	
	0				
3–	ग म ध नि	सां – सां सां	ध नि सा ग	स रे सा –	
	X				
	प ध प , म	ध प, ग म	प म ग म	ग रे सा –	
	2				
	नि सा ग म	प ग – म	ध–ऽ–,	नि सा ग म	
	0				
	प ग – म	ध–ऽ–	नि सा ग म	प ग – म	X
	3				
4–	ग रे सा –,	म ग रे सा	–, प म ग	रे सा –ध	
	X				
	ग म धनि	सां रेंसां नि	धप ग म	ग रे सा –	
	2				
	ग म –, सा	ग म प – ,	ध–ऽ–	ग म – सा	
	0				
	ग म प –	ध–ऽ–	ग म – सा	ग म प –	X
	3				
5–	ग म प –	प म ग रे	म प ध–	ध प म ग	
	X				
	प ध नि –,	नि ध प म	ध नि सां –,	सां नि ध प	
	2				
	नि सां गं –	गं रें सां नि	ध प ग म	ग रे सा –	
	0				
	नि सा ग म,	प – ग म	ध– ग म	ध– ग म	X
	3				
6–	धनि सा रे	नि सा ग म	सा ग म प	ग म प ध	
	X				
	म प ध नि	प ध नि सां	ध नि सां गं	रें सां नि ध	
	2				
	प म ग म	ग रे सा –	प ग – म	ध–ऽ–	
	0				
	ऽ– प ग	– म ध–	ऽ–ऽ–	प ग – म	X
	3				

6.4.5 राग केदार :–

दो मध्यम अरू शुद्ध स्वर, मानत थाट कल्याण।
सा मा वादी सम्वादी से, राग केदार बखान।।

विवरण– इस राग को कल्याण थाट जन्य माना गया है। हमीर राग की तरह इसमें भी दोनों मध्यमों का प्रयोग होता है। वादी मध्यम और सम्वादी षडज है। इस राग के आरोह में रे ग और अवरोह में केवल ग स्वर वर्ज्य है, इसलिये इसकी जाति औडव–षाडव है। इस राग के अवरोह में कभी–कभी दोनों मध्यम एक के बाद एक लिये जाते हैं। इस राग के आरोह को लेते समय षडज से सीधे मध्यम पर जाते हैं। कभी–कभी अवरोह मे धैवत के साथ कोमल निषाद का अल्प प्रयोग भी किया जाता है, जो विवादी के रूप में प्रयुक्त होता है। अवरोह में गन्धार स्वर वक्र और दुर्बल है। कुछ विद्वान कहते हैं कि केदार में गन्धार गुप्त है। केदार के अनेक प्रकार प्रचलित है जैसे – शुद्ध केदार, चॉदनी केदार, जलधर केदार, मलुहा केदार इल्यादि।

आरोह – सा म , म प, ध प, नि ध सां।
अवरोह – सां नि ध प, मं प ध प म – रे सा।
पकड़ – सा म , म प, मं प ध प म – रे सा
न्यास के स्वर – सा म और प
समप्रकृति राग – हमीर और कामोद

आलाप

नि़ रे नि़ सा –< सा –< , ध़ –– प़ –<प़ –<

प़ सा –< सा –< सा म –<म –< सा रे सा –< सा –<

दा ––

सा म ग प़ –<प़ –<मं प मं प मं प ध – प – म

–< म –<, म ग प मं ध प म –<म –<म –<,

सा रे – सा –< सा –< , नि़ सा रे सा म –<म –<,

दा ––

ग म म ग प़ –<प़ –<, मं प मं प ध – ध –

प़ –<प़ –<, मं प ध प सां –<सां –<सां –<,

दा –––

नि ध नि सां रें – सां –<सां –<, सां मं रें सा,

पं मं रें सां, नि सां रें सां, ध – प –, मं प ध प

<म –<म –<, सा रे सा – सा –< सा –<

दा –

मसीतखानी गत – तीनताल

स्थाई

											पप		मं	पप	ध	प
											दिर		दा	दिर	दा	रा
													3			
म	म	म,	मग		प	मंप	ध	प					म	रे	सा	
दा	दा	रा	दिर		दा	दिर	दा	रा					दा	दा	रा	
×					2								0			
											रेरे		सा	ऩिसा	ध़	प़
											दिर		दा	दिर	दा	रा
													3			
सा	सा	सा,	मग		प	मंप	ध	प					म	रे	सा	
दा	दा	रा	दिर		दा	दिर	दा	रा					दा	दा	रा	
×					2								0			

अन्तरा

											पप		मं	पप	ध	प
											दिर		दा	दिर	दा	रा
													3			
सां	सां	सां	सांसां		नि	सांसां	रें	सां					ध	प	म	
दा	दा	रा	दिर		दा	दिर	दा	रा					दा	दा	रा	
×					2								0			
											मम		प	सांसां	रें	सां
											दिर		दा	दिर	दा	रा
													3			
ध	ध	प	पप		मं	पप	ध	प					म	रे	सा	
दा	दा	रा	दिर		दा	दिर	दा	रा					दा	दा	रा	
×					2											

तोड़े

1–	ध़ धध ऩि–	सा रे सा ऩि सा	नि सासा म ग	प मं ध प
	×			
	म म रे–	सां प मं– प	सां –ऽ– ,	प मं – प
	2			
	सां –ऽ–	प मं– प	सां –ऽ– ,	मुखडा
	0			
2–	ध़ पप मं प़	रे सासा ऩि सा	ध पप मं प	रें सांसां नि सां
	×			

	ध ध ध प	– प म॑ प	म म रे सा	<नि॒ सा रे	
	2				
	स –,नि॒ सा	रे सा –, नि	सा रे सा –	मुखडा	
	0				
3–	सा सासा म –	म मम प –	प पप सां –	नि सां रें सां	
	×				
	सां मंमं रें मं	रें सां नि सां	ध म॑– प	म म रे सा	
	2				
	नि॒ सासा म ग	प – ध प	म –<– ,	नि॒ सासा म ग	
	0				
	प – ध प	म –<–	नि॒ सासा म ग	प – ध प	
	3				×
4–	नि॒ सा रे, नि॒	सा रे, नि॒ सा	नि॒ सा म म	रे सा नि॒ सा	
	×				
	म॑ प ध, म॑	प ध, म॑ प	म॑ प नि नि	ध प म॑ प	
	2				
	नि सां रें, नि	सां रें नि सां	नि सां मं मं	रें सां नि सां	
	0				
	रें सां, सां नि,	नि ध, ध प	प म, म रे	रे सा नि॒ सा	
	3				
	प – म म	रे सा नि॒ सा,	रे सा नि॒ सा	रे सा नि॒ सा	
	×				
	रे सा नि॒ सा	म – प, –	म म रे सा	नि॒ सा, रे सा	
	2				
	नि॒ सा, रे सा	नि॒ सा रे सा	नि॒ सा म –	प – म म	
	0				
	रे सा नि॒ सा	रे सा नि॒ सा	रे सा नि॒ सा	रे सा नि॒ सा	
	3				×
5–	सा सा म –	रे सा नि॒ सा	सा सा प –	म म रे सा	
	×				
	सा सा ध –	प प म॑ प	प प सां –	रें सां नि सां	
	2				
	सां मं – रें	सां नि ध प	म॑ – ध प	म म रे सा	
	0				
	ध म॑ – प	म – , ध म॑	– प म –	ध म॑ – प	
	3				×
6–	म रे सा, प	म रे सा सा	प म॑ ध प	म म रे सा	
	×				
	प नि ध सां	नि रें सां नि	ध प म॑ प	म म रे सा	
	2				

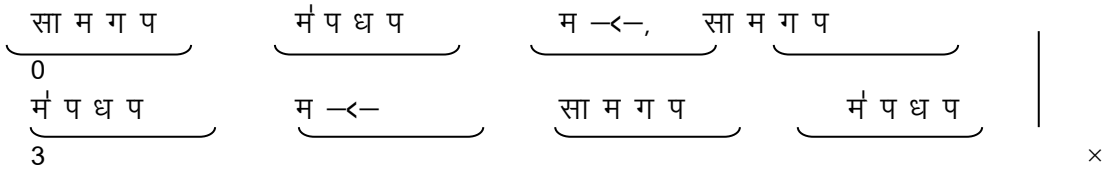

अभ्यास प्रश्न

1. मसीतखानी गत का परिचय दीजिए।
2. पाठ्यक्रम के किसी एक राग में मसीतखानी गत को तोडों सहित लिपिबद्ध कीजिए।

6.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप मसीतखानी गत की स्वरलिपि को पढ़ सकेंगे एवं उनका क्रियात्मक रूप से वादन करने में सक्षम होंगे। फिरोज खॉ के पुत्र मसीत खॉ ने सितार वादन की एक शैली को विकसित किया जिसे मसीतखानी शैली कहते हैं। इसमें बजाई जाने वाली राग रचनाएँ मसीतखानी गत कहलाती हैं। पाठ्यक्रम के रागों में मसीतखानी गतदी गई हैं। इन रागों का तोडों के द्वारा विस्तार भी किया गया है जिससे आप राग में अन्य तोडों को स्वयं बनाने में भी सक्षम होंगे।

6.6 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम के किन्हीं तीन रागों में मसीतखानी गत को तोडों सहित लिपिबद्ध कीजिए।

इकाई 7 – रज़ाखानी गत का परिचय; पाठ्यक्रम के रागों में रज़ाखानी गत, स्थाई व अन्तरे के तोडों को लिपिबद्ध करना

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 रजाखानी गत का परिचय
7.4 पाठ्यक्रम के रागों में रजाखानी गत व तोड़े
7.4.1 श्याम कल्याण
7.4.2 जैजैवन्ती
7.4.3 पूरिया कल्याण
7.4.4 भैरव
7.4.5 केदार
7.5 सारांश
7.6 निबन्धात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर, (एम0पी0ए0एम0आई0–502) पाठ्यक्रम की सातवीं इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को जान चुके होंगे। आप मसीतखानी गत के बारे में भी जान चुके होंगे।

इस इकाई में पाठ्यक्रम के रागों में रजाखानी गत व तोडों को प्रस्तुत किया गया है। इस इकाई में आपकीसुविधा के लिये रजाखानी गत की स्वरलिपियाँ प्रस्तुत की गई हैं।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप रजाखानी गत तथा तोड़ों को लिपिबद्ध कर सकेंगे और इन्हे पढ़कर क्रियात्मक रूप में प्रस्तुत कर सकेंगे।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

1. रजाखानी गत को स्वरलिपि के माध्यम से पढ़ एवं बजा सकेंगे।
2. स्वर को लिपिबद्ध कर सकेंगे तथा लिपिबद्ध स्वर को पढ़ सकेंगे।
3. तोड़ों के माध्यम से राग का प्रस्तार कर सकेंगे।

7.3 रजाखानी गत का परिचय

रजाखानी गत की रचना लखनऊ के रजा खॉ द्वारा हुई। रजाखानी गत भी सरल एवं आकर्षक होने के कारण ही लोकप्रिय हो गई। सेनी घराने की द्रुत गतों का कठिन होना इस गत के लोकप्रिय होने का मुख्य कारण रहा। इसको पूरबी बाज भी कहा जाता है।

मसीतखानी एवं रजाखानी गतें अलग–अलग घरानों की होने पर भी अब क्रमशः विलम्बित व द्रुत गतों के रूप में लोकप्रिय होने के फलस्वरूप एक के पश्चात दूसरी बजायी जाती हैं।

रजाखानी गत के बोल–रजाखानी गत के बोल मसीतखानी गत की तरह निश्चित नहीं होते। दिर व द्रा जैसे द्रुत लय के बोल रजाखानी गत में राग–ताल बद्ध करके बजाये जाते हैं। इसका वादन मध्य अथवा द्रुत लय में होता है। इसमें स्थायी तथा अंतरा दो भाग होते हैं। रजाखानी बाज पर गायन, विशेष रूप से ठुमरी का प्रभाव देखा जाता है। रजाखानी गतों के आधार पर गायन की तराना शैली का प्रचार हुआ।

7.4 पाठ्यक्रम के रागों में रजाखानी गत व तोड़े

7.4.1 राग श्याम कल्याण :–

थाट कल्याण मानत मुनि जन, पस समवाद अनूपा
ओडव सम्पूरन प्रथम रात्रि, श्याम कल्याण स्वरूप।।

विवरण– प्रस्तुत राग कल्याण थाट जन्य माना गया है। इसके आरोह में गन्धार और धैवत वर्ज्य है और अवरोह में सातों स्वरों का प्रयोग किया जाता है अतः इसकी जाति औडव–सम्पूर्ण है। इस राग का गाने बजाने का समय रात्रि का प्रथम प्रहर है। पंचम स्वर वादी तथा षडज स्वर सम्वादी है। इस राग में दोनो मध्यम तथा शेष स्वर शुद्ध लगते हैं। यह राग कल्याण का एक प्रहर है जो कि कामोद और कल्याण का सुन्दर समिश्रण है। गन्धार स्वर इस राग के अवरोह में अल्प और वक्र है। ग म प, ग म रे सा कामोद के इस टुकड़े के साथ राग का समापन करते हैं। प्रस्तुत राग के आरोह में तीव्र मध्यम और अवरोह में शुद्ध मध्यम का प्रयोग करते हैं। गन्धार के प्रयोग से अमुक राग सरलता से शुद्ध सारंग से अलग हो जाता है। तीव्र मध्यम और निषाद की दीर्घ करने से कमोद राग सरलता से अलग हो जाता है। इस राग में गन्धार का प्रयोग कामोद अंग से किया जाता है जैसे ग म प, ग म रे सा कुछ विद्वान इस रग में हमीर, गौड़सारंग केदार और कल्याण राग का मिश्रण मानते है।

आरोह – नि़ सा रे मं प नी सां।

अवरोह – सां नि ध प , ध मं प ग म प ग म रे सा, नी़ सा

पकड़ – नी सां रे ऽ रे ऽ मं प ग म रे ऽ नी सा।

न्यास के स्वर – प और नी।

समप्रकृति – शुद्ध सारंग, कामोद व कल्याण।

आलाप

नि़ रे नि़ सो – सा –< सा –< , नि़ सा रे –– मं– मं

दा –––––

प –< प –< प –< , मं प , मं प ध –प –< प –< प –<

दा – दा –––––

गम रे – रे – सा –<सा –<नि़ रे नि़ सा ध़ – प –

दा ––––––

प़ –< .प –< म़॑प –< म़॑प –< म़॑प सा –<सा –<
दा – दा – दा –––
नि़ सा रे म़॑प –<प –<, ग म प, ग म रे – रे –
सा –<सा –<, म़॑प ध प –< .प –<, सां –<सां –<
सां –< ध नि ध नि सां नि रें – सां –<सां –<सां –<
नि सां ध – प, रे म़॑प नि – नि ध – प –,
म़॑प नि सां रें – सां –<सां –<, रें पं गं मं रें – सां –
नि रें नि सां ध –प –< प –<, म़॑प ध प, प ग म
रे – सा –< सा –<

रजा़खानी ग़त – तीनताल

स्थाई

							म	|	रे	नि़	–सा	सा
							दा	|	रा	दा	–र	दा
									3		
रे <	<	म॑	|	–प	प	गग	मम	|	रे–	रेसा	–सा
दा –	–	दा	|	–र	दा	दिर	दिर	|	दा–	रदा	–र
X				2					0		
							नि	|	सा	रे	म॑	प
							दा	|	रा	दा	रा	दा
									3		
निध	नि	प	|	ध	म॑	प	गग	|	मम	रे–	रेसा	–सा
दा–	रा	दा	|	रा	दा	रा	दिर	|	दिर	दा–	रदा	–र
X				2					0		

अन्तरा

							प	|	प	सां	–सां	सां
							दा	|	रा	दा	–र	दा
									3		
सं <	<	रे	|	म॑	पं	गंगं	मंमं	|	रें–	रेंसां	–सां
दा –	–	दा	|	रा	दा	दिर	दिर	|	दा–	रदा	–र
X				2					0		
							नि	|	सां	रें,	नि	सां
							दा	|	रा	दा	दा	रा
									3		
ध –	प,	ग	|	म	प	गग	मम	|	रे–	रेसा	–सा
दा –	रा	दा	|	रा	दा	दिर	दिर	|	दा–	रदा	–र
X				2					0		

तोड़े

1–	रेरे	मंप	मंमं	पध |	पप	धनि	धम	मंप |	गम	रेसा	ऩिसा	मु0
	X				2				0			
2–	पऩि	सासा	ऩिसा	रेरे |	सारे	मंमं	रेमं	पप |	गम	रेसा	ऩिसा	मु0
	X				2				0			

3–	पऩि	सासा	रेमं	पप |	निसां	रेंरें	सांनि	धप |	
	X				2				
	गम	पग	मप	गम |	धप	मंप	गम	रेसा |	
	0				3				
	गम	रेसा	–सा	ऩिसा |	रे–	ऽ–,	गम	रेसा |	
	X				2				
	–सा	ऩिसा	रे–	ऽ– |	गम	रेसा	–सा	ऩिसा |	
	0				3				X
4–	निसा	रेमं	पनि	सारें |	सांनि	धप	मंप	धप |	
	X				2				
	रेरे	मंप	नि–	धप |	धग	–म	रेसा	ऩिसा |	
	0				3				
	ऽ–	ऽ–	रेसा	ऩिसा |	रे–	ऽ–,	ऽ–	ऽ– |	
	X				2				
	रेसा	ऩिसा	रे–	ऽ–, |	ऽ–	ऽ–	रेसा	ऩिसा |	
	0				3				X
5–	मंप	पप	मंप	पप |	मंप	पप	मंप	पप |	
	मंप	निनि	पनि	सांसां |	निसां	रेंरें	सांनि	धप |	
	धप	मं,ध	पमं	धप |	धप	गम	रेसा	ऩिसा |	
	रेप	मंप	गम	रेसा |	रेसा	निसा	रे–	ऽ– |	
	ऽ–,	रेप	मंप	गम |	रेसा	रेसा	ऩिसा	रे– |	
	ऽ–	ऽ–,	रेप	मंप |	गम	रेसा	रेसा	ऩिसा |	
	0				3				X
	नि–	सा–	रे–	मंप |	प–	निसां	रेंसां	निसां |	
	x				2				
	रेंपं	मंप	मंप	मंप |	मंप	गमं	रेंसां	निसां |	
	0				3				
	रेंसां	नि,सां	निध,	निध |	प,ध	पमं	धप	मंप |	

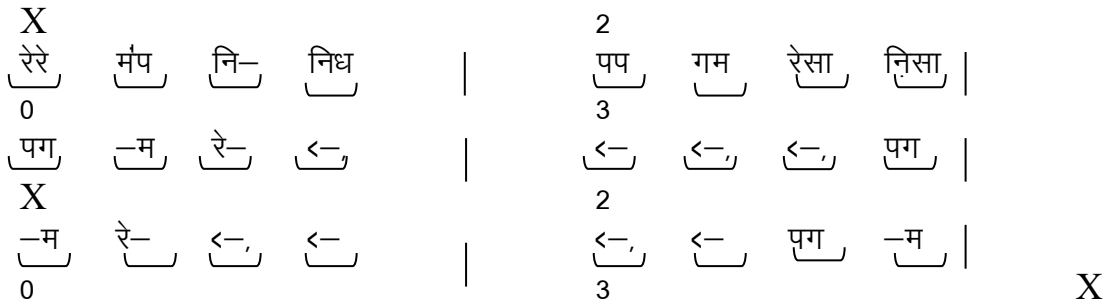

X					2			
रेरे	म॑प	नि–	निध	|	पप	गम	रेसा	नि़सा |
0					3			
पग,	–म	रे–	ऽ–,	|	ऽ–	ऽ–,	ऽ–,	पग |
X					2			
–म	रे–	ऽ–,	ऽ–	|	ऽ–,	ऽ–	पग	–म | X
0					3			

झाला

×	2	0	3
रे रे रे रे	म॑ म॑ म॑ म॑	प प प प	नि नि नि नि
दि र दि र	दि र दि र	दि र दि र	दि र दि र
नि – नि नि	नि नि नि नि	नि – नि नि	नि नि नि नि
दा – दि र	दि र दि र	दा – दि र	दि र दि र
सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
नि ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	रें ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
रें ऽ ऽ ऽ	पं ऽ ऽ ऽ	गं ऽ ऽ ऽ	मं ऽ ऽ ऽ
रें ऽ ऽ ऽ	रें ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
नि ऽ सां ऽ	ऽ ऽ रें ऽ	ऽ सां ऽ ऽ	नि ऽ सां ऽ
ध ऽ ऽ ऽ	ध ऽ ऽ ऽ	प ऽ ऽ ऽ	प ऽ ऽ ऽ
म॑ ऽ प ऽ	ग ऽ म ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
नि़ ऽ सा ऽ	रे ऽ प ऽ	म॑ ऽ ऽ ऽ	प ऽ ऽ ऽ
ग ऽ ऽ ऽ	म ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
रे ऽ सा ऽ	रे ऽ नि़ ऽ	सा ऽ रे ऽ	म॑ ऽ प ऽ
ग ऽ ऽ ऽ म	ऽ ऽ ऽ रे	ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
सा ऽ ऽ ऽ सा	ऽ ऽ ऽ सा	ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
रे ऽ ऽ ऽ रे	ऽ ऽ ऽ रे	ऽ ऽ ऽ	म॑ ऽ प ऽ
ग ऽ ऽ ऽ म	ऽ ऽ ऽ रे	ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
रे ऽ सा ऽ रे	ऽ नि ऽ सा	ऽ रे ऽ	म॑ ऽ प ऽ
ग ऽ ऽ ऽ म	ऽ ऽ ऽ रे	ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
सा ऽ नि़ ऽ रे	– ऽ – नि़	ऽ रे नि़	सा रे नि़ सा

7.4.2 राग जैजैवन्ती :–

द्वै गांधार निखाद द्वै संवादै प–नि सोइ।
सोरटही के अंगतें जैजैवन्ती होइ।।

विवरण– यह राग खमाज थाठ के जन्य रागों में से एक है। इसकी जाति सम्पूर्ण है। वादी स्वर ऋषभ व संवादी पंचम माना जाता है। इसका समय रात्रि के दूसरे प्रहर का अन्तिम भाग मानते हैं। इस राग में दोनों गान्धार व दोनों निषादों का प्रयोग होता है। आरोह में तीव्र ग–नि तथा अवरोह में कोमल ग–नि लेते हैं, तथापि अवरोह करने में तीव्र गान्धार भी ले सकते हैं। कोमल गान्धार केवल अवरोह में लेते हैं, किन्तु वह प्रायः दोनों ऋषभों में जकड़ा हुआ रहता है। प्रचार में इसक सोरठ–अंग का राग मानते हैं। यह मिश्र राग है। गौड़, बिलावल और सोरठ, इन तीन रागों का मिश्रण इसमें पाया जाता है। इस राग में मन्द्र पंचम और मध्य ऋषभ की संगति सुन्दर लगती है।

कोमल गान्धार के कारण कुछ संगीत–मर्मज्ञ इसे 'परमेल–प्रवेशक राग' ऐसी संज्ञा देते हैं। परमेल–प्रवेशक का अर्थ है– अगले ठाठ में लेजानेवाला राग। अर्थात् खमाज ठाठ के राग समाप्त करके काफी ठाठ के राग आरम्भ होने की सूचना यह राग देता है।

आरोह – सा, रे ग म प, नि सां।
अवरोह – सा नि ध प, ध म रे ग रे सा।
पकड़ – रे ग रे सा, नि़ सा ध़ नि़ रे,
न्यास के स्वर – रे, म, प,

4.4.1 समप्रकृतिक राग – खमाज, देश, झिझोंटी

रज़ाखानी ग़त

स्थाई

रे	गग	रे	सा	नि़	सासा	ध़	नि़	रे	–	ग	म	रे–	गसा	–नि	सा
दा	दिर	दा	रा	दा	दिर	दा	रा	दा	ऽ	दा	रा	दाऽ	रदा	ऽर	दा
0				3				×				2			
रे	मप	प	नि	ध	–	प	ध	म	–	ग	म	रे–	गसा	–नि	सा
दा	दिर	दा	रा	दा	ऽ	दा	रा	दा	ऽ	दा	रा	दाऽ	रदा	–र	दा
0				3				×				2			

अन्तरा

म	पप	नि	सां	–	नि	सां	सां	रें	–	रें	गं	रें	सां	नि	सां
दा	दिर	दा	रा	सां	दा	दा	रा	दा	ऽ	दा	रा	दा	रा	दा	रा
0				3				×				2			
प	सांसां	नि	सां	नि	ध	प	म	रे	–	ग	म	रे–	गसा	–नि	सा
दा	दिर	दा	रा	दा	रा	दा	रा	दा	–	दा	रा	दाऽ	रदा	ऽर	दा
0				3				×				2			

तोडे

1	सारे	ऩिसा	ध़ऩि	रे–	|	गम	रे–	रेग	रेसा	|
	×					2				
2	रेग	मप	निध	पध	|	म–	गम	रेग	रेसा	|
	×					2				
3	रेग	मप	निसां	निध	|	पम	गम	रेग	रेसा	|
	×					2				
4	रेग	मप	गम	पध	|	मप	निसां	निध	पम	|
	3					×				
	गम	रेग	रेसा	ऩिसा	|					|
	2									
5	गम	गम	रेग	रेसा	|	धनि	धनि	पध	मप	|
	0					3				
	निसां	निसां	निध	पध	|	पम	गम	रेग	रेसा	|
	×					2				

7.4.3 राग पूरिया कल्याणः–

थाट मारवा रे म विकृत, ग नि सम्वाद अनूप।
जति समपूर्ण सायं समय, पूरिया कल्याण रूप।।

विवरण– इस राग का सृजन, पूरिया तथा कल्याण दो प्राचीन रागों के समन्वय से हुआ है। इसके पूर्वांग में पूरिया और उत्तरांग में कल्याण है। इसका प्रारम्भ स को छोड़ते हुऐ म, ध नी सा को प्रयोग करते हैं। यह मारवा थाट जन्य राग है। इसमें रे कोमल तथा मध्यम तीव्र लगता है। वादी ग और सम्वादी नि है। यह एक सायंकालीन संधिप्रकाश तथा परमेल प्रवेशक राग है। प्रस्तुत राग में ऋषभ और धैवत होने लगेगा। कल्याण राग से बचने के लिए कोमल ऋषभ और पूरिया से बचने के लिये पंचम और शुद्ध ध के प्रयोग से यह आसानी से पूरिया धनाश्री राग से अलग हो जाता है। यह एक बहुत ही लोकप्रिय राग है जिसको गायक और वादक दोनों ही पसन्द करते हैं। इस राग का विस्तार तीनों ही सप्तक में किया जाता है। इस राग का गन्धार ओर निषाद एक प्रबल स्वर है।

आरोह – ऩि रे ग मं प म ध नी सां।

अवरोह – सां नि ध प मं ग रे ग रे सा।।

पकड़ – ऩि रे ग मं प – मं ग मं रे ग, ऩि रे सा।

न्यास के स्वर – नि सा ग प

समप्रकृति राग – मारवा व पूरिया व कल्याण।

आलाप

ध़ नि़–– ध़ – नि़रे नि़ सा –< सा –< सा –<

दा –––––

ध़ –– नि़रे नि़ध़ प –< प़–< प़ –<

मं नि़ ध़ , ध़ सा नि़ , नि़ रे सा, सा –<सा –<

नि़रे ग मं प़ –< प़ –< प़ –<, ग मं ग मं ध प ,

दा –– दा दा दा

प़ –< प़ –< प़ –< ग मं ध नि , ध नि नि ध

मं ध ध मं, ग मं मं गे , मं ध प़ –< प़ –<

मं ग मं गे मं ध नि –<नि –< नि –<,

ध नि नि ध नि रें सां– सां –<सां–< सां–<

ध नि रेंगं–<गं–<गं–<, में गं में गरें– सां–<

सां–< सां –<, नि रें नि ध नि ध मं ध मं, ध प –<

प़ –<, प़ –<, ग मं ग ध़ प़ –< प़ –<

मं प मं ग ग मं रे मं ग , नि़ ––

रे ग मं प मं ग मं ग, रे ग रे , नि़ रे सा–<सा–<

रजाखानी गत – तीनताल

स्थाई

												नि़	रेरे	ग	मं
												दा	दिर	दा	रा
												3			
प	–	मं	ध	प	मं	गग	मंमं	ग–	गरे	–रे	सा–				
दा	–	दा	रा	दा	रा	दिर	दिर	दा	रदा	–र	दा–				
×				2				0							
												नि़	धध़	नि़,	मं
												दा	दिर	दा	दा
												3			
गग	मं,	नि	ध	प	मं	गग	मंमं	ग–	गरे	–रे	सा–				
दिर	दा	दा	रा	दा	रा	दिर	दिर	दा–	–र	दा	दा				
×				2				0							

अन्तरा

ग	|	गग	म॑	ध
दा	|	दिर	दा	रा
3				

नि	नि	सां	–	|	–	निनि	धध	सांसां	|	नि–	निरें	–रें	सां–
दा	रा	दा	–	|	–	दिर	दिर	दिर	|	दा–	रदा	–र	दा–
×					2					0			

नि	|	रेंरें	गं	मं
दा	|	दिर	दा	रा
3				

गं	रें	सां	नि	|	ध	प,	गग	म॑म॑	|	ग–	गरे	–रे	सा–
दा	रा	दा	रा	|	दा	र	दिर	दिर	|	दा–	रदा	–र	दा–
×					2					0			

तोड़े

1	गम॑	गम॑	गम॑	धनि	| सांनि	धप	म॑ध	पम॑	| गम॑	गरे	सानि़	सा–	| मुखडा		
	×				2				0						
	नि़ध	सानि़	रे़सा	गरे	| म॑ग	पम॑	धप	निध	| पम॑	गरे	सानि़	सा–	| मुखडा		
	×				2				0						
	ग–	म॑–	ध–	नि–	| निध	पम॑	धप	म॑ग	| पम॑	गरे	म॑ग	रेसा	| मुखडा		
	×				2				0						
	गम॑	प–	पप	पप	| पप	पप	म॑ध	पम॑	| गम॑	गरे	सानि़	सा–	| मुखडा		
	×				2				0						
5	गम॑	पम	गम॑	धनि	| सांनि	धप	म॑ग	रेसा	|						
	×				2										
	नि़रे	गम॑	प–	नि़रे	| गम॑	प–	नि़रे	गम॑	|						
	0				3				×						
6	ऽ–	गग	गग	गग	| गम॑	पम॑	गरे	सा–	|						
	×				2										
	गम॑	–ध	प–,	गम॑	| –ध	प–	गम	–ध	|						
	0				3				×						
7	गम॑	धम॑	म॑ध	निध	| धनि	रेंनि	निरें	| गंरें	|						
	X				2										
	सांनि	रेंसां	निध	पम॑	| गम॑	गरे	सानि़	सा–	|						
	0				3										
	निरे	गम॑	गम॑	गम॑	| प–	प–	निर	गम॑	|						
	X				2										
	प–	म॑ध	प–	ऽ–	| निरे	गम॑	प–	म॑ध	|						
	0				3				×						

झाला

ग	ग	गग	गग	मं	मं	मंमं	मंमं	ध	ध	धध	धध	नि	नि	निनि	निनि
दा	रा	दिर	दा	दा	रा	दिर	दिर	दा	रा	दिर	दिर	दा	रा	दिर	दिर
सां	<	<	<	सां	<	<	<	सां	<	<	<	सां	<	<	<
नि	<	<	<	रें	<	<	<	सां	<	<	<	सां	<	<	<
ध	<	ध	<	नि	<	रें	<	गं	<	<	<	गं	<	<	<
नि	<	<	<	रें	<	<	<	सां	<	<	<	सां	<	<	<
ध	<	नि	<	रें	<	नि	<	धा	<	<	<	प	<	<	<
मं	<	धा	<	धा	<	<	<	मं	<	<	<	नि	<	<	<
धा	<	<	<	प	<	<	<	मं	<	<	<	ग	<	<	<
मं	<	<	<	ग	<	<	<	नि	<	<	<	रें	<	<	<
सा	<	<	<	सा	<	<	<	सा	<	<	<	सा	<	<	<
धा़	<	<	<	नि़	<	<	<	धा़	<	<	<	सा	<	<	<
नि़	<	<	<	रें	<	<	<	सा	<	<	<	सा	<	<	<
नि़	<	रें	<	ग	<	मं	<	प	<	<	मं	<	<	ग	<
ग	<	मं	<	ध	<	नि	<	सां	<	<	नि	<	<	ध	<
नि	<	रें	<	गं	<	मं	<	गं	<	<	रें	<	<	मं	<

7.4.4 राग भैरव :–

थाट भैरव रे ध कोमल, ध रे स्वर संवाद।
प्रात समय मिल गाइये, सम्पूरन भैरव राग।।

विवरण– इसकी रचना भैरव थाट से की गई हैं इसलिये यह आश्रय राग है। इसमें ऋषभ व धैवत स्वर कोमल तथा बाकी स्वर शुद्ध है अतः इसकी जाति सम्पूर्ण–सम्पूर्ण है। वादी धैवत तथा सम्वादी ऋषभ है। इसका गायन एवं वादन का समय प्रातः का प्रथम प्रहर है। इसे प्रातः काल संधिप्रकाश के समय गाते बजाते हैं। ऋषभ धैवत का आन्दोलन इस राग को भैरव अंग का राग प्रदर्शित करता है। इसके आरोह में प्रायः ऋषभ व पंचम छोड़ देते हैं। जैसे–सा ग म प, ग म ध प। यह एक प्राचीन राग है जिसे चारोमतानुसार इसे एक मुख्य राग माना गया है। यह राग करूण प्रकृति का और गंभीर है। इसमें ध्रुपद, धमार, बड़ा ख्याल, छोटा ख्याल, तराना व मसीतखानी, रज़ाखानी गत प्रचुर मात्रा में मिलता है। मध्यम से ऋषभ की मीड़ इसमें बहुत मधुर लगता है।

आरोह – सा रे ग म प ध नी सां।
अवरोह – सां नी ध प म ग रे सा ।।
पकड – ग म ध प, ग म रे सा
न्यास के स्वर – सा रे और ध
समप्रकृति राग – कालिंगड़ा और रामकली

आलाप

ध़–– ध़ सा नि़ सा – सा –<सा –< सा –<

दा ––––––

नि़ सा – नि़ सा नि़ सा रे॒ सा ध़–– सा –< सा –<

दा – दा––– दा ––––– दा ––––––

सा ग –<ग –< ग प ग म रे॒–– सा –<

सा –< सा –<, सा ग ,– ग म – , म प – ,

प–< प–<, ग म ध॒–– प–< प–<

म प – , ग म – , रे॒–– सा –< सा –<,

ग म ध॒–– नि सां – सां –< सां –<

निसां – ,निरें॒– , सां रें॒– , निसां –ध॒–– प–<

प–< प–<, ग म ध॒नि सां ध॒–– प–< प–<

म प ध॒ प म प – ग –<ग –<, ग प ग म रें॒–– सा

सा –< सा –<, ग म ध॒नि सां – सां –< सां –<

गं –<गं –<, गं पं गं मं रें॒–– सां –< सां –<

निसां– निसां निसां रें॒ सां –ध॒–– प–< प–<

सा ध॒ प ध॒ म प ग –<ग –< ग म प ग म

रे॒–– सा –< सा –<सा –<

रज़ाखानी ग़त – तीनताल

स्थाई

सा	धध	प	ध॒	म	पप	ग	म	ध॒	–	ध॒	प	ग	मम	रे॒	सा
दा	दिर	दा	रा	दा	दिर	दा	रा	दा	–	दा	रा	दा	दिर	दा	रा
0				3				×				2			

ध़	धध	ध़	नि़	–नि़	नि़	सा	सा	ग	मम	धध	पप	ग–	मरे॒	–रे॒	सा–
दा	दिर	दा	रा	–र	दा	दा	रा	दा	दिर	दिर	दिर	दा–	रदा	–र	दा–
0				3				×				2			

अन्तरा

ग	मम	ध॒	ध॒	नि	नि	सा	–	नि	सांसां	रेंरें	सांसां	नि–	निध॒	–ध॒	प–
दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा	–	दा	दिर	दिर	दिर	दा–	रदा	–दा	रा–
0				3				×				2			

नि	सांसां	गं	मं	|	रें	रे	सां	–	|	नि	ध	–प	प	|	ग	मम	रे	सा
दा	दिर	दा	रा	|	दा	दा	रा	–	|	दा	दा	–र	दा	|	दा	दिर	दा	रा
0					3					×					2			

तोड़े

1–	धनि	सां–	सानि	धप	|	मप	गम	रेरे	सा–	मुखडा	
	×					2					
2–	गम	प,ग	मप,	गम,	|	गम	धप	मग	रेसा	मुखडा	
	×					2					
3–	ध–	नि–	सां–	गं–	|	रेंसां	निध	पम	गरे	मुखडा	
	×					2					
4–	रेग	मप	गम	ध–	|	पम	गम	रेरे	सा–	मुखडा	
	×					2					
	साग	–म	ध–	साग	|	–म	ध–	साग	–म	मुखडा	| X
	0					3					
5–	रेग	गरे,	गम	मग	|	मप	पम,	पध	धप	मुखडा	
	×					2					
	धनि	निध,	निसा	सांनि	|	धप	गम	रेरे	सा–	मुखडा	
	0					3					
	गम	प–	पम	गम	|	ध–	<–,	गम	प–	मुखडा	
	×				2						
	पम	गम	ध–	<–,	|	गम	प–	गम	पम	मुखडा	| ×
	0					3					
6–	रेरे	सा–	गम	रेरे	|	सा–	पम	गम	रेरे	मुखडा	
	×					2					
	सा–,	धप	मप	गम	|	रेरे	सा–	निनि	धप	मुखडा	
	0					3					
	मप	गम	रेरे	सा–	|	सांनि	धप	मप	धप	मुखडा	
	×					2					
	मप	गम	रेरे	सा–	|	निसा	गम	प–	गम	मुखडा	| ×
	0					3					

झाला

×				2				0				3			
ग	ग	गग	गग	म	म	मम	मम	ध	ध	धध	धध	नि	नि	निनि	निनि
दा	दा	दिर	दिर	दा	रा	दिर	दिर	दा	रा	दिर	दिर	दा	रा	दिर	दिर
सां	<	<	<	सां	<	<	<	सां	<	<	<	सां	<	<	<
गं	<	<	<	गं	<	मं	<	रें	<	<	<	सां	<	<	<
नि	<	<	<	सां	<	<	<	रें	<	<	<	सां	<	<	<
ध	<	<	<	ध<	<	<	प	<	<	<	प	<	<	<	
ग	<	म	<	ग	<	म	<	ध<	<	<	प	<	<	<	
ग	<	<	<	म	<	<	<	रे	<	<	<	सा	<	<	<
ध	<	प	<	ग	<	म	<	रे	<	<	<	सा	<	<	<
सां	<	नि	<	ध	<	प	<	म	<	प	<	ध	<	प	<
म	<	प	<	ग	<	म	<	रे	<	<	<	सा	<	<	<
ग	<	<	<	ग	<	<	<	ग	<	<	<	ग	<	<	<
ग	<	म	<	प	<	ग	<	म	<	रे	<	सा	<	<	<
नि़	<	<	सा	<	<	नि़	<	<	सा	<	<	नि़	<	<	सा
ग	<	<	<	म	<	<	<	रे	<	<	<	सा	<	<	<
ध़	<	<	<	ध़	<	<	<	ध़	<	<	<	ध़	<	<	<
नि़	<	<	<	नि़	<	<	<	सां	<	<	<	सां	<	<	<
ध़	<	<	नि़	सा	<	ग	<	म	<	प	<	ग	<	म	<
रे	<	<	<	रे	<	<	<	सा	<	<	<	सा	<	<	<
सा	<	<	<	ध	<	<	<	प	<	<	<	ध	<	<	<
म	<	<	<	प	<	<	<	ग	<	<	<	म	<	<	<
रे	<	<	<	रे	<	<	<	ग	<	<	<	म	<	<	<
रे	<	<	<	रे	<	<	<	सा	<	<	<	सा	<	<	<
नि़	<	सा	<	ग	<	म	<	ध	<	<	<	ध	<	<	<
ध	<	<	<	नि	<	ध	<	प	<	<	<	प	<	<	<
म	<	ध	<	<	<	प	<	ग	<	प	<	<	<	म	<
सा	<	ग	<	<	<	म	<	रे	<	<	<	सा	<	<	<
नि़	नि़	सा	सा	ग	ग	म	म	प	प	म	म	ग	ग	म	म
ध	ध	प	प	म	म	प	प	ग	ग	म	मरे	रे	सा	–	
नि़	नि़	सा	सा	ग	ग	म	म	प	प	म	म	ग	ग	म	म
ध	–	<	–	<	–	<	–	नि़	नि़	सा	सा	ग	ग	म	म
प	प	प	प	प	प	ग	मध	–	<	–	<	–	<	–	
नि़	नि़	सा	सा	ग	ग	म	म	प	प	म	म	ग	ग	म	म

7.4.5 राग केदार :–

दो मध्यम अरू शुद्ध स्वर, मानत थाट कल्याण।
सा मा वादी सम्वादी से, राग केदार बखान।।

विवरण– इस राग को कल्याण थाट जन्य माना गया है। हमीर राग की तरह इसमें भी दोनों मध्यमों का प्रयोग होता है। वादी मध्यम और सम्वादी षडज है। इस राग के आरोह में रे ग और अवरोह में केवल ग स्वर वर्ज्य है, इसलिये इसकी जाति औडव–षाडव है। इस राग के अवरोह में कभी–कभी दोनों मध्यम एक के बाद एक लिये जाते हैं। इस राग के आरोह को लेते समय षडज से सीधे मध्यम पर जाते हैं। कभी–कभी अवरोह मे धैवत के साथ कोमल निषाद का अल्प प्रयोग भी किया जाता है, जो विवादी के रूप में प्रयुक्त होता है। अवरोह में गन्धार स्वर वक्र और दुर्बल है। कुछ विद्वान कहते हैं कि केदार में गन्धार गुप्त है। केदार के अनेक प्रकार प्रचलित हैं जैसे – शुद्ध केदार, चॉदनी केदार, जलधर केदार, मलुहा केदार इत्यादि।

आरोह – सा म , म प, ध प, नि ध सां।
अवरोह – सां नि ध प, मं प ध प म – रे सा।।
पकड़ – सा म , म प, मं प ध प म – रे सा
न्यास के स्वर – सा म और प
समप्रकृति राग – हमीर और कामोद

आलाप

नि़ रे नि़ सा –< सा –< , ध़ –– प़ –<प़ –<
प़ सा –< सा –< सा म –<म –< सा रे सा –< सा –<
दा ––
सा म गे प़ –<प़ –<मं प मंप मं प ध – प – म
–< म –<, म ग प मं ध प म –<म –<म –<,
सा रे – सा –< सा –< , नि़ सा रे सा म –<म –<,
दा ––
ग म म गे प़ –<प़ –<, मं प मं प ध़ – ध़ –
प़ –< प़ –<,मं प ध प सां –<सां –<सां –<,
दा –––
नि ध नि सां रें – सां –<सां –<, सां मं रें सा,
पं मं रें सां, नि सां रें सां, ध – प –, मं प ध प
<म –<म –<, सा रे सा – सा –< सा –<
दा ––

रज़ाखानी गत – तीनताल

स्थाई

					सा	ध	–	प	मं	पप	ध	प
					दा	दा	–	र	दा	दिर	दा	रा
					0				3			
म	<	<	रे	–	रे	सा	सा					
दा	–	–	दा	–	र	दा	रा					
X				2								
					नि़	ध़ध़	सा	नि़	रे	सा	म	–
					दा	दिर	दा	रा	दा	रा	दा	–
					0				3			
प	मंमं	ध	प	म	म	रे	सा					
दा	दिर	दा	रा	दा	दा	दा	रा					
x				2								

अन्तरा

					प	पप	प	सां	–	सां	नि	सां
					दा	दिर	दा	दा	–	र	दा	रा
					0				3			
नि	सांसां	रें	सां	ध	ध	प	–					
दा	दिर	दा	रा	दा	दा	रा	–					
X				**2**								
					नि	सांसां	मं	रें	सां	ध	–	प
					दा	दिर	दा	रा	दा	रा	–	दा
					0				3			
मं	पप	ध	प	म	म	रे	सा					
दा	दिर	दा	रा	दा	रा	दा	रा					
X				2								

तोडे

1–	मंप	धनि	सांनि	धप		मंप	धप	मम	रेसा			
	X					2						मु0
2–	मग	पमं	धप	निध		पम	धप	मरे	सा–			
	X					2						मु0
3–	मम	रेसा	नि़सा	रेसा		पमं	धप	मम	रेसा			
	X					2						मु0
4–	मंप	सां–	सांनि	धप		मंप	धप	म–	रेसा			
	X					2						मु0
5–	साम	रेम	रेम	रेसा		पमं	धप	मम	रेसा			
	X					2						मु0
6–	ध़नि़	सारे	नि़सा,	मंप		धप	मंप	मम	रेसा			
	X					2						मु0

7–	मग	पमं	धप	निध	|	सांनि	रेंसां	मंमं	रेंसा |
	X					2			
	निरें	सांनि	धप	मंप	|	मंध	पप	मम	रेसा |
	0	3							
	सारे	ऩिसा	म–	धप	|	म–	ऽ–,	सारे	ऩिसा |
	X					2			
	म–	धप	म–	ऽ–,	|	सारे	ऩिसा	म–	धप | X
	0					3			

झाला

×				2				0				3			
म	म	मम	मम	प	प	पप	पप	ध	ध	धध	धध	नि	नि	निनि	निनि
दा	रा	दिर	दिर	दा	रा	दिर	दिर	दा	रा	दिर	दिर	दा	रा	दिर	दिर
सां	ऽ	ऽ	ऽ	सां	ऽ	ऽ	ऽ	सां	ऽ	ऽ	ऽ	सां	ऽ	ऽ	ऽ
नि	ऽ	ऽ	ऽ	सां	ऽ	ऽ	ऽ	रें	ऽ	ऽ	ऽ	सां	ऽ	ऽ	ऽ
नि	ऽ	ऽ	ऽ	सां	ऽ	ऽ	ऽ	ध	ऽ	ऽ	ऽ	प	ऽ	ऽ	ऽ
मं	ऽ	प	ऽ	ध	ऽ	प	ऽ	ध	ऽ	ऽ	ऽ	म	ऽ	ऽ	ऽ
प	ऽ	ऽ	ऽ	म	ऽ	ऽ	ऽ	रे	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ
सा	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ
नि	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ	रे	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ
म	ऽ	ग	ऽ	प	ऽ	मं	ऽ	ध	ऽ	प	ऽ	म	ऽ	ऽ	ऽ
प	ऽ	ऽ	ऽ	म	ऽ	ऽ	ऽ	रे	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ
ध़	ऽ	ऽ	ऽ	ऩि	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ
रे	ऽ	ऽ	ऽ	रे	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ
ऩि	ऽ	सा	ऽ	ध	ऽ	प	ऽ	म	ऽ	ऽ	ऽ	म	ऽ	ऽ	ऽ
प	ऽ	ऽ	ऽ	म	ऽ	ऽ	ऽ	रे	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ
म	ऽ	ग	ऽ	प	ऽ	ऽ	ऽ	प	ऽ	ऽ	ऽ	प	ऽ	ऽ	ऽ
ध	ऽ	ऽ	ऽ	ध	ऽ	ऽ	ऽ	प	ऽ	ऽ	ऽ	प	ऽ	ऽ	ऽ
मं	ऽ	प	ऽ	मं	ऽ	ध	ऽ	प	ऽ	ध	ऽ	मं	ऽ	प	ऽ
ध	ऽ	ऽ	ऽ	म	ऽ	ऽ	ऽ	म	ऽ	ऽ	ऽ	म	ऽ	ऽ	ऽ
प	ऽ	ऽ	ऽ	म	ऽ	ऽ	ऽ	रे	ऽ	ऽ	ऽ	सा	ऽ	ऽ	ऽ

अभ्यास प्रश्न

1. रजाखानी गत का परिचय दीजिए।
2. पाठ्यक्रम के किसी एक राग में रजाखानी गत को तोडों सहित लिपिबद्ध कीजिए।

7.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप रजाखानी गत की स्वरलिपि को पढ़ सकेंगे एवं उनका क्रियात्मक रूप से वादन करने में सक्षम होंगे। पाठ्यक्रम के रागों में रजाखानी गत दी गई हैं। इन रागों का तोडों के द्वारा विस्तार भी किया गया है जिससे आप राग में अन्य तोडों को स्वयं बनाने में भी सक्षम होंगे।

7.6 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम के किन्हीं तीन रागों में रजाखानी गत को तोडों सहित लिपिबद्ध कीजिए।

इकाई 8 – पाठ्यक्रम की तालों के ठेकों को लयकारी (दुगुन, तिगुन, चौगुन व आड़) सहित लिपिबद्ध करना

8.1 प्रस्तावना

8.2 उदेद्श्य

8.3 लयकारी

8.4 तीनताल में लयकारी

8.5 आडाचारताल में लयकारी

8.6 चारताल में लयकारी

8.7 धमार ताल में लयकारी

8.8 सारांश

8.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

8.10 निबन्धात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर, (एम0पी0ए0एम0आई0–502) पाठ्यक्रम की आठवीं इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को जान चुके होंगे। आप पाठ्यक्रम के रागों में मसीतखानी गत, रजाखानी गत, तोडे आदि को लिपिबद्ध करना भी सीख गये होंगे।

इस इकाई में पाठ्यक्रम की तालों को ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारी (दुगन, तिगुन, चौगुन व आड) में लिपिबद्ध करने के विषय में बताया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम की तालों के ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने के विषय में जान सकेंगे। इससे आप लयकारी को बोलने एवं बजाने में भी सक्षम होंगे।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात :–

1. आप लयकारी का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
2. आप तबले की ताल के ठेकों को विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने एवं उसके क्रियात्मक स्वरूप को तबले में प्रस्तुत कर पायेंगे।
3. आप लयकारी का प्रयोग अपने वादन(एकल वादन, संगत) करने में सक्षम होंगे जिससे आप का वादन प्रभावशाली होगा।

8.3 लयकारी

समय की समान गति को लय कहते हैं। दो मात्राओं की क्रिया के मध्य होने वाला विश्रांति काल ही लय है और जब यह काल प्रयोग होन वाली मात्राओं के बीच समान रहता है तो वह निश्चित लय का स्वरूप ले लेता है। अतः लय का सम्बन्ध मात्रा एव मात्राओं के बीच के समय से है।

लय सामान्य रूप से तीन प्रकार की मानी गई है। विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय। काल के लम्बा होने पर विलम्बित लय स्थापित होती है। इस काल के कम हाने पर मध्य लय एवं उससे अधिक कम होने पर द्रुत लय हो जाती है। सामान्य रूप से मध्य लय का विश्रांति समय विलम्बित लय के विश्रांति समय का आधा होता हैं एवं द्रुत लय का विश्रांति मध्य लय के विश्रांति समय का आधा होता है। संगीत में यह मान्यता स्थापित हो चुकी है एवं प्रचलन में है। विलम्बित लय को आधार लय मानने से मध्य लय का प्रयोग विलम्बित लय में दो बार एवं द्रुत लय का प्रयोग चार बार करने की आवश्यकता होगी। अतः मध्य लय विलम्बित लय की दुगुनी, द्रुत लय मध्य लय की दुगुन होती है। लय का यही प्रयोग लयकारी कहलाता है। एक मात्रा में एक से अधिक मात्राओं का आधार लय के साथ प्रयोग लयकारी कहलाता है।

संगीत में विभिन्न लयकारी जैसे दुगुन, तिगुंन, चौगुन, आड, कुआड, एवं बिआड प्रयोग की जाती है।

दुगुन– एक मात्रा में दो मात्रा — 12 12

तिगुन– एक मात्रा में तीन मात्रा — 123 123

चौगुन– एक मात्रा में चार मात्रा — 1234 1234

आड– एम मात्रा में डेढ़ मात्रा अथवा दो मात्रा में तीन मात्रा आड लयकारी को डयोडी लय भी लय कहा जाता हैं एवं इसको 3/2 की लयकारी के रूप में भी व्यक्त करते हैं। — 1 S 2 S 3 S

कुआड– इस लयकारी के विषय में दो मत हैं एक– आड की आड को कुआड कहते हैं अतः 9/4 जिसके अनुसार चार मात्रा में नौ मात्रा अथवा एक मात्रा में $2\frac{1}{4}$ अथवा सवा दो मात्रा का प्रयोग करते है। दो – 5/4 की लयकारी अर्थात चार मात्रा में पांच मात्रा अथवा एकमात्रा में सवा मात्रा । इस दूसरे मत का अधिक प्रचलन है एवं इसको सवागुन की लय भी कहते हैं।

पहले मत के अनुसार–:

1ऽ ऽ ऽ 2ऽ ऽ ऽ 3 ऽ ऽ ऽ 4 ऽऽ ऽ 5 ऽ ऽ ऽ 6 ऽ ऽ ऽ 7 ऽ ऽ ऽ 8 ऽ ऽ ऽ 9 ऽ ऽ ऽ

1 2 3 4

दूसरे मत के अनुसार–:

1 ऽ ऽ ऽ 2 ऽ ऽ ऽ 3 ऽ ऽ ऽ 4 ऽ ऽ ऽ 5 ऽ ऽ ऽ

1 2 3 4

बिआड लय – इस लयकारी के विषय भी दो मत हैं। एक मत के अनुसार कुआड लय की आड बिआड लयकारी होती जिसे $9/4 \times 3/2 = \frac{27}{8}$ के रूप में व्यक्त करते हैं एवं दूसरे मत के अनुसार $7/4$ की लयकारी बिआड की लयकारी है। इसमें एक मात्रा में पैने दो गुन मात्रा प्रयोग की जाती है जिसे पौने दो गुन की लयकारी भी कहते हैं।

पहले मत के अनुसार–:

1ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 2 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 3 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 4 ऽ ऽ

ऽऽ ऽ ऽ ऽ 5 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 6 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 7 ऽऽ ऽ ऽ ऽ

ऽऽ 8 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 9 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 10 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 11

ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 12 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 13 ऽऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 14ऽ ऽ ऽ

ऽऽ ऽऽ 15 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 16 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 17 ऽऽ ऽ ऽ ऽ

ऽऽ 18 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 19 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 20 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 21 ऽ

ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ 22 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 23 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 24 ऽ ऽ ऽऽ

ऽ ऽ ऽ 25 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 26 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 27 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ

दूसरे मत के अनुसार :–

1 ऽऽ ऽ 2 ऽऽ ऽ 3 ऽ ऽ ऽ 4 ऽ ऽ ऽ 5 ऽऽ ऽ 6 ऽ ऽ ऽ 7 ऽऽ ऽ

कुआड एवं बिआड में दूसरा मत ही अधिक प्रचलित एवं व्यवहारिक है अतः लयकारी लिपिबद्ध करने में दूसरे मत का ही प्रयोग करेंगे। आड, कुआड एवं बिआड, लयकारी लिखने के लिए इनकी भिन्न अथवा बटे में दिखाई संख्या से भाग देते हैं। गणित के अनुसार भाग देने में बटे की संख्या उलटी हो कर गुणा में बदल जाती है।

उदाहरण आड को बट्टा संख्या $3/2 = 1\frac{1}{2}$

आडलयकारी की मात्रा संख्या = ताल की मात्रा × 2/3, किस मात्रा से आरम्भ की जानी है, इसके लिए उपर की संख्या को ताल की मात्रा संख्या से घटाते हैं।

ताल की मात्रा संख्या – ताल की भाग संख्या × 2/3 जो लयकारी लिखनी है। उसमें बट्टा के नीचे वाली राशी में से एक घटाकर उतनी संख्या के अवग्रह लगाते हैं।

उदाहरण– आड की लयकारी $-{}^{3}/_{2} =$ $2-1 = 1$

कुआड की लयकारी– ${}^{5}/_{4} = 4 - \overrightarrow{1 = 3}$

बिआड की लयकारी – ${}^{7}/_{4} = 4 - \overrightarrow{1 = 3}$

अतः आड की लयकारी को मात्रा के साथ एक अवग्रह, कुआड एवं बिआड की लयकारी में तीन अवग्रह लगाते हैं। इसके पश्चात बट्टा की उपर वाली राशि में विभाग बना लेते हैं। सरलता के लिए पीछे से विभाग बनाना शुरू करते हैं एवं पहली मात्रा में जितनी मात्रा कम होती हैं मात्रा से पहले उतने अवग्रह लगा देते हैं जो कि आप विभिन्न तालों में लयकारी के उदाहरण से समझेंगे।

8.4 तीनताल में लयकारी

मात्रा – 16, विभाग – 4, ताली – 1,5 व 13 पर, खाली – 9 पर

तीनताल का ठेका

धा	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा	धा	तिं	तिं	ता	ता	धिं	धिं	धा	धा
x				2				0				3				x

दुगुन की लयकारी

धाधिं	धिंधा	धाधिं	धिंधा	धातिं	तिंता	ताधिं	धिंधा	
x				2				
धाधिं	धिंधा	धाधिं	धिंधा	धातिं	तिंता	ताधिं	धिंधा	धा
0				3				x

तीनताल के ठेके की दुगुन आठ मात्रा की होगी अतः सोलह मात्रा में ठेका दो बार प्रयोग करना होगा। यदि ठेके का प्रयोग एक बार ही करना है तो दुगुन लयकारी के सम पर आने के लिए नौवीं मात्रा से दुगुन आरम्भ की जायेगी इसको एक आवृति की दुगुन कहा जाता है जो निम्न उदाहरण से स्पष्ट हो जाएगा।

एक आवृति की दुगुन

धाधिं	धिंधा	धाधिं	धिंधा	धातिं	तिंता	ताधिं	धिंधा	धा
0				3				x

तिगुन की लयकारी

धाधिंधिं	धाधाधिं	धिंधाधा	तिंतिंता	ताधिंधिं	धाधाधिं	धिंधाधा	धिंधिंधा	
x				2				
धातिंतिं	तिंताधिं	धिंधाधा	धिंधिंधा	धाधिंधिं	धाधातिं	तिंताता	धिंधिंधा	धा
0				3				x

तिगुन की लयकारी में तीनताल में ठेके को तीन बार प्रयोग किया जाता है। एक आवृति की तिगुन $\frac{16}{3}$ मात्रा अर्थात् $5\frac{1}{3}$ मात्रा की होगी अतः एवं आवृति की तिगुन की लयकारी को $10\frac{2}{3}$ मात्रा के बाद आरम्भ करना होगा।

10	11	12	13	14	15	16	
1 2 3	1 2 धा	धिं धिं धा	धा धिं धिं	धा धा तिं	तिं ताता	धिं धिं धा	

ग्यारवीं मात्रा 1 2 का अशं $^{2}/_{3}$ के बराबर है जो निम्न उदाहरण से स्पष्ट होगा।

तिगुन की लयकारी

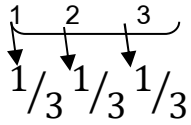

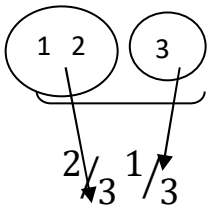

अथवा

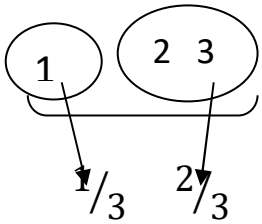

चौगुन लयकारी – तीनताल की चौगुन की लयकारी चार मात्रा की होगी। अतः ठेके के बोल को चार आवृति में प्रयोग करना होगा अथवा एक आवृति की चौगुन को तीनताल की तेरहवीं मात्रा से आरम्भ कर सम पर आया जाएगा।

13	14	15	16	
धाधिंधिंधा	धधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिंधिंधा	धा
3				x

आड की लयकारी $-^{3}/_{2}$ मात्रा की लयकारी में दो मात्रा में तीन मात्रा अथवा एक मात्रा डेढ मात्रा प्रयोग की जाती हैं। अतः तीनताल के ठेके को तीनबार लिखा जाएगा जो कि तीनताल के ठेके की दो आवृति में आएगा। एक आवृति में तीनताल की आड $16 \times {}^{2}/_{3} = 10\frac{2}{3}$ मात्रा में आएगी एवं $5\frac{1}{3}$ मात्रा के बाद आरम्भ होगी।

6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16

1धाऽ	धिंऽधिं	ऽधाऽ	धाऽधि	ऽधिंऽ	धाऽधा	ऽतिंऽ	तिंऽता	ऽताऽ	धिंऽधिं	ऽधाऽ	धा
											x

8.5 अडाचारताल में लयकारी

मात्रा– 14, विभाग – 7, ताली – 1, 3, 7 व 11 पर, खाली – 5, 9 व 13 पर

आडाचारताल का ठेका

धिं	तिरकिट	धिं	ना	तू	ना	क	ता	तिरकिट	धि	ना	धिं	धिं	ना	धिं
×		2		0		3		0		4		0		×

दुगुन, तिगुन एवं चौगुन की लयकारी को क्रमशः दो बार, तीन बार एवं चार बार प्रयोग किया जाता है।

एक आवृति की दुगुन – एक आवृति की दुगुन 7 मात्रा की होगी एवं आठवीं मात्र से आरम्भ कर सम पर आएगी।

धिंतिरकिट	धिंना	तूना	कता	तिरकिटधिं	नाधिं	धिंना	धिं
	0		4		0		×

एक आवृति की तिगुन – $\mathbf{14/3 = 4\frac{2}{3}}$मात्रा की होगी एवं $9\frac{1}{3}$ मात्रा के बाद आरम्भ होकर सम पर आएगी।

ऽधिंतिरकिट	धिनातू	नाकता	तिरकिटधिंना	धिंधिंना	धिं
	4		0		×

एक आवृति की चौगुन – $\mathbf{14/3 = 4\frac{2}{4}}$मात्रा की होगी एवं $11\frac{2}{4}$ मात्रा के बाद आरम्भ कर सम पर आएगी।

	11		12		13		14	
ऽऽधिंतिरकिट		धिनातूना		कतातिरकिटधिं		नाधिंधिंना		धिं
4				0				×

आड की लयकारी – $14 \times 2/3 = \frac{28}{3} = 9\frac{1}{2}$मात्रा में आएगी एवं $4\frac{2}{3}$ मात्रा के बाद आरम्भ कर सम पर आएगी।

5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	
ऽऽधिं	ऽतिरकिट	धिऽना	ऽतूऽ	नाऽक	ऽताऽ	तिरकिटधिं	ऽनाऽ	धिंऽधिं	ऽनाऽ	धिं
										×

8.6 चारताल में लयकारी

मात्रा – 12, विभाग – 6, ताली – 1, 5, 9 व 11 पर, खाली – 3 व 7 पर

चारताल का ठेका

धा	धा	दिं	ता	किट	धा	दिं	ता	तिट	कता	गदि	गन	धा
x		0		2		0		3		4		×

एक आवृति की दुगुन

7	8	9	10	11	12	
धाधा	दिंता	किटधा	दिंता	तिटकता	गदिगन	धा
0		3		4		x

एक आवृति की तिगुन

9	10	11	12	
धाधादिं	ताकिटधा	दिंतातिट	कतागदिगन	धा
3		4		x

एक आवृति की चौगुन

10	11	12	
धाधादिंता	किटधादिंता	तिटकतागदिगन	धा
	4		x

आड की लयकारी –

5	6	7	8	9	10	11	12	
धाऽधा	ऽदिंऽ	ताऽकि	टधाऽ	दिंऽता	ऽतिट	कताग	दिगन	धा
2		0		3		4		x

चारताल की आड की लयकारी $12\times\frac{2}{3}=8$ मात्रा में आती है एवं पाचवीं मात्रा से आरम्भ कर सम पर आएगी।

8.7 धमार ताल में लयकारी

मात्रा– 14, विभाग – 4, ताली – 1, 6 व 11 पर, खाली – 8 पर

धमार ताल का ठेका

क	धि	ट	धा	ट	धा	ऽ	ग	ति	ट	ति	ट	ता	ऽ	क
x					2		0			3				x

दुगुन, तिगुन एवं चौगुन की लयकारी को क्रमशः दो बार, तीन बार एवं चार बार प्रयोग किया जाता है। इस ताल के ठेके में सातवीं मात्रा एवं चौदवीं मात्रा पर कोई पखावज का वर्ण अथवा बोल नहीं है अतः इसको 'ऽ' से दिखाया जाता है एवं यह पूर्ण मात्रा है।

एक आवृति की दुगुन :–

8	9	10	11	12	13	14	
कधि	टधि	टधा	ऽग	तिट	तिट	ताऽ	क
0			3				x

एक आवृति की तिगुन – एक आवृति की तिगुन 7 मात्रा की होगी एवं आठवी मात्रा से आरम्भ कर सम पर आएगी। $\frac{14}{3} = 4\frac{2}{3}$ मात्रा की होगी एवं $9\frac{1}{3}$ मात्रा के बाद आरम्भ होकर सम पर आएगी।

10	11	12	13	14	
1कधि	टधिट	धाऽग	तिटति	टताऽ	क

$^1/_3$ —— [1] [क धि] —— $^2/_3$

एक आवृति की चौगुन – $^{14}/_4 = 3\frac{2}{4}$ मात्रा की होगी एवं $11\frac{2}{4}$ मात्रा से आरम्भ कर सम पर आएगी।

11	12	13	14	
ऽऽकधि	टधिटधा	ऽगतिट	तिटताऽ	क
3				x

आड की लयकारी – धमार ताल की आड लयकारी $14 \times \frac{2}{3} = \frac{28}{3} = 9\frac{1}{3}$ मात्रा में आएगी एवं $4\frac{2}{3}$ मात्रा के बाद आरम्भ कर सम पर आऐगी।

	6	7	8	9	10	11	12	13	14	
12क	ऽधिऽ	टऽधि	ऽटऽ	धाऽऽ	ऽगऽ	तिऽट	ऽतिऽ	टऽता	ऽऽऽ	क
	0		3			4				x

$^2/_3$ —— [1 2] [क] —— $^1/_3$

धमार ताल के ठेके में सातवीं मात्रा एवं चौदवीं मात्रा को 'ऽ' चिन्ह से दिखाई गई हैं। आड लयकारी में इसके आगे पीछे अवग्रह प्रयोग किया गया है। अतः विद्यार्थी इससे भ्रतिम न हो कि 'धा' के पश्चात तीन अवग्रह लिखे गये हैं एवं अन्तिम मात्रा के ता के पश्चात भी तीन अवग्रह है। कुआड एवं बिआड लयकारी में इसी प्रकार अवग्रह का प्रयोग किया जाएगा।

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. तीनताल की आड़ लयकारी लिपिबद्ध कीजिए।
2. आडाचारताल की एक आवृति की तिगुन कितनी मात्रा की होगी एवं कितनी मात्रा पर आरम्भ करने से सम पर आएगी?

8.8 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम की तालों को ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारी (दुगन, तिगुन, चौगुन व आड) में लिपिबद्ध करने के विषय में जान चुके होंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप लयकारी को भली–भांति समझ चुके होंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप लयकारी का प्रयोग अपने वादन(एकल वादन व संगत) में करने में सक्षम होंगे जिससे आपका वादन प्रभावशाली होगा। इससे आप लयकारी को बोलने एवं बजाने में भी सक्षम होंगे। तबले की तालों के ठेकों को विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने एवं उसके क्रियात्मक स्वरूप को तबले में प्रस्तुत कर पायेंगे।

8.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. श्रीवास्तव, श्री गिरीश चन्द्र, *ताल परिचय,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

8.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.पाठ्यक्रम की किन्हीं दो तालों के ठेकों को दुगुन, तिगुन, चौगुन व आड़ सहित लिपिबद्ध कीजिए।